आवरण

लेखक

श्री गुरुदत्त

भारती साहित्य सदन

नई-देहली

आधार-भूमि

जैसे वस्त्र शरीर का आवरण हैं अथवा शरीर आत्मा का आवरण है, इसी प्रकार विचार तथा भावनाओं का आवरण भी होता है। वस्त्र की रक्षा करने में कोई भी व्यक्ति शरीर को हानि नहीं पहुँचायेगा, न ही शरीर के लिए कोई आत्मा का हनन करना चाहेगा। इसी प्रकार विचारों में आवरण गौण और भीतर का संरक्षित तथ्य मुख्य माना जाना चाहिए।

कठिनाई वहाँ पड़ती है, जहाँ कोई आत्मा का अस्तित्व माने ही नहीं। ऐसे व्यक्ति के लिए शरीर ही सब-कुछ होता है। अथवा कभी कोई शरीर को हेय और वस्त्रों को मुख्य मानने लगे। इस अवस्था मे वस्त्र बिगड़ जाने पर हत्या तक हो जाती है।

ऐसी ही परिस्थिति विचारों, भावनाओं इत्यादि मे भी हो जाती है। सिद्धान्तों को गौण मान, रीति-रिवाज, जो सिद्धान्तों के आवरण मात्र होते है, को मुख्य मानने वाले भी ससार मे विद्यमान् है और उसके लिए लड़ मरते हैं।

मनुष्य तो प्रायः सब एक ममान होते है, परन्तु भिन्न-भिन्न आवरणों में भिन्न-भिन्न प्रतीत होते है। एक गौरवर्णीय हिन्दुस्तानी यूरोपियन पहिरावे में यूरोपियन प्रतीत होने लगता है, इसी प्रकार केश दाढी रखने से

कोई सिख प्रतीत होने लगता है और सुन्नत इत्यादि चिह्न बनाने से मुसलमान।

कभी आडम्बर और रीति रिवाज की इतनी महिमा हो जाती है कि इसके आवरण में सिद्धान्तात्मक विचार और भाव लुप्तप्राय हो जाते हैं। उदाहरण के रूप में देवता का स्वरूप हनुमान्-सरीखा होना चाहिए अथवा गणेश जैसा। राधाकृष्ण की मूर्ति उपास्य हो अथवा शिव की, ये विवाद हैं आवरण के। इन विवादों में भगवान् की पूजा तथा उपासना गौण हो जाती है और मूर्ति की रूपरेखा मुख्य बन जाती है।

एक व्यक्ति सन्ध्योपासना पूर्वाभिमुख बैठकर करता है दूसरा कोई नमाज़ पश्चिमाभिमुख हो करता है, ये पूर्व पश्चिम सर्वथा गौण हैं इस पर भी कभी-कभी विचारशील व्यक्ति भी इस बाहरी बात को मुख्य मान परस्पर झगड़ पड़ते हैं।

आर्य समाज जैसी संस्था भी, जो अपने को बुद्धिशील व्यक्तियों क समूह मानती है, हवन करते समय धोती पहननी चाहिए और पाजाम. नहीं, अथवा आहुति देते समय स्रुवा दाहिने हाथ में एक विशेष ढग से पकड़ना चाहिए, पर बहुत बल देती है।

इसी प्रकार राजनीति और आर्थिक व्यवधान में भी मनुष्य तत्त्व को छोड़ रीति रिवाज अथवा विधि-विधान पर बल देने लगते हैं। राज्य-कार्य में देशवासियो की रक्षा और जनता की सुख-सुविधा ही तथ्य की बात है। इस तथ्य की प्राप्ति के अनेक उपाय हो सकते हैं, परन्तु जब कोई राज्य अथवा राजनीतिक दल यह कहे कि एक ही उपाय ठीक है और अन्य उपायो पर विचार करने के लिए भी तैयार न हो, तो यही कहा जा सकता है कि तथ्य को छोड़ वे आवरण पर मुग्ध हो रहे हैं।

इस पुस्तक में सिख पन्थ, बगाली समुदाय और कम्युनिस्ट विचार-धारा के उदाहरण लिये हैं। यूँ तो आजकल के मानव की स्थिति देख किसी भी पन्थ, समुदाय और विचारधारा का उदाहरण लिया जा सकता है। अतएव उक्त उदाहरणो से उस पन्थ समुदाय इत्यादि के विरोध का

आशय नहीं। उन्हीं मे से ऐसे व्यक्तियो की भी कल्पना की गई है, जो आवरण को छोड़ तथ्य को पहचानते हैं। अतएव यहा किसी पन्थ, समुदाय अथवा विचारधारा का विरोध करना उद्देश्य नहीं परन्तु उस प्रवृत्ति का, जिससे वे तथ्य को भूल बाहरी आवरण पर लड़ने-झगड़ने लगते हैं, दिग्दर्शन-मात्र ही मुख्य उद्देश्य है।

मानव सब समान हैं और उनका उद्देश्य एक है परन्तु पथ न्यारे-न्यारे हैं। पन्थो का झगड़ा उद्देश्यों में भिन्नता के कारण ही होना चाहिए। उद्देश्य एक होने पर भिन्न-भिन्न पन्थ झगडे का कारण नहीं होने चाहिएँ।

प्रान्तीयता अथवा जातीयता एक जन समूह की उन्नति के लक्ष्य से निर्माण हुए हैं न कि मनुष्य-मनुष्य में घृणा उत्पन्न करने के लिए। ये सीमाएँ-मानव हित मे बनी है, मानव की हत्या करने के लिए नहीं। जैसे कपडे शरीर की रक्षा के लिए होते हैं, वैसे ही मानव के अधिकारो पर प्रान्तीयता अथवा जातीयता का छापा अवाछनीय है।

इसी प्रकार किसी समाज में, सबका सुख पूर्वक रहना उद्देश्य है और समाज मे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा इसकी सीमा निर्धारित करना पन्थ है। समाजवादी ढाचा हो अथवा व्यक्तिगत उद्योग अथवा यत्न हो, ये उद्देश्य प्राप्ति में साधन है। साधन आवश्यक होते हुए भी जनता की सुविधा की तुलना में गौण हैं।

सरमायादारी से ही जनता का कल्याण हो सकता है अथवा समाज-वादी ढाचे से ही ऐसा होगा, ऐसा मानना यह मानने के तुल्य है कि धोती पहनकर ही यज्ञ पर बैठने से यज्ञ सफल होगा अथवा दाढी-मूँछ रखने से ही गुरु महाराज का पन्थ चल सकेगा।

तथ्य अथवा आडम्बर, शरीर अथवा आवरण, उद्देश्य अथवा विधि-विधान "आवरण" पुस्तक का विषय है। इस विषय को एक कथानक में गूँथने का यत्न किया गया है।

पुस्तक उपन्यास है। पात्रादि सब काल्पनिक हैं। किसी व्यक्ति अथवा समुदाय के विरोध अथवा मान अपमान से इसका सम्बन्ध नहीं। उक्त विषय की विवेचना ही इसका उद्देश्य है।

शेष पाठकों के अपने पढने और समझने की बात है।

गुरुदत्त

एक

: १ :

लखनऊ के मैडिकल कालेज की पाँचवीं श्रेणी मे हरभजनसिह एक पंजाबी युवक पढता था। पढाई मे अच्छा था। क्रियात्मक चीड-फाड़ में नम्बर एक, कपड़े पहनने मे सर्वथा मॉडर्न और शरीर मे हृष्ट-पुष्ट, पौने छः फुट लम्बा और श्रेणी के सब विद्यार्थियो मे से सिर निकालता हुआ।

आज गुरुपर्व था। आदि गुरु श्री गुरुनानक देव का जन्म-दिवस था। लखनऊ के बाजारो मे श्री गुरु ग्रन्थ साहब की सवारी घूम रही थी और नगर भर के सिख सवारी के साथ-साथ मण्डलियाँ बनाकर चल रहे थे। प्रेम, श्रद्धा और भक्ति का स्रोत बह रहा था। सहस्रो की सख्या मे सिख नर-नारी, भक्ति-भाव के गीत गाते हुए सवारी के आगे-पीछे थे।

एक मोटर ट्रक पर तख्तपोश, दरी, कालीन और चौकी, उस पर रेशमी गद्दा, गद्दे पर चन्दन की लकडी की बरागन, जिस पर श्री गुरु ग्रन्थ साहब खुला रखा था। यह गुलाबी रङ्ग की रेशमी जरीदार चादर से ढँपा हुआ था। ऊपर पुष्प-मालाएँ चढी थीं। गुरु ग्रन्थ साहब के पीछे सरदार बढियाम सिह, लखनऊ के प्रसिद्ध ठेकेदार, हाथ मे चँवर लिये बैठे थे। वे थोड़ी-थोडी देर के पश्चात् दरबार साहब पर चँवर झुला रहे थे। यह इस कारण नहीं था कि उस समय वहाँ मक्खियाँ थीं, जिनको

इस पवित्र पुस्तक पर से हटाना था, यह एक पवित्र ग्रन्थ के केवल आदर का प्रीतक ही था।

ऐसे अवसर पर श्री गुरु ग्रन्थ साहब पर चँवर झुलाना एक अति मान-युक्त कार्य माना जाता था और इस मान-युक्त सेवा करने के लिए बड़े बड़े धनी-मानी लालायित रहते थे। इस पदवी को पाने के लिए लोग हज़ारों रुपये देने के लिए तैयार रहते थे। इस वर्ष सरदार वढि-याम सिंह ने सवारी में इस सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त करने के लिए सरक्युलर रोड पर बन रहे गुरुद्वारे के लिए दस हज़ार रुपया दिया था।

हरभजन सिंह सरदार वढियाम सिंह का लड़का था। आज डॉक्टर खन्ना ने उसको और उसके साथियों को एक ऑपरेशन देखाने के लिए बुलाया हुआ था। ऑपरेशन अपैण्डेसाइटस का था। पाँच विद्यार्थी, तीन नर्सें और दो डॉक्टर इस समय उपस्थित थे।

रोगी को मास में एक दो बार असह्य वेदना होती थी और डॉक्टरों की सम्मति थी कि ऑपरेशन होना चाहिए। रोगी मान गया था।

डॉक्टर खन्ना ने क्लोरोफॉर्म देने के पश्चात् विद्यार्थियों को, जो मुख पर श्वेत पट्टियाँ बाँधे हुए थे, एक छोटा-सा व्याख्यान दे दिया। तदन-न्तर पेट चीर डाला। आँतों को एक ओर कर डॉक्टर ने अपैण्डेसाइटस कला दिखाई और खट से काटकर बाहर चिलमची में रख दी।

इसके पश्चात् घाव को सीकर आँतों को ठीक स्थान पर रखकर बाहर से पेट को सी दिया। आधे घण्टे में चीरे के काम से निवृत्त होकर सब लोग अवकाश पा गये। अचेत रोगी को नर्सें गाड़ी में रखकर ऑप-रेशन थिएटर से बाहर ले गईं।

डाक्टर और विद्यार्थियों ने मुख से पट्टियाँ खोलीं, अपने ऐपरॉन उतारे, हाथ धोये और इधर उधर की बातें करते हुए बाहर निकल आये। विद्यार्थियों में तीन लड़के और दो लड़कियाँ थीं। जब डाक्टर खन्ना अपनी मोटर में सवार हो चला गया तो विद्यार्थियों ने भी एक-दूसरे से छुट्टी ली। हरभजन सिंह जाने लगा तो एक लड़की ने पूछ लिया, "आप

किधर जा रहे हैं ?"

"शहर, अमीनाबाद पार्क की ओर। गुरु ग्रन्थ साहब की सवारी देखने का विचार है।"

लड़की हँस पड़ी और बोली, "अच्छा ! बाई-बाई।" वह हज़रतगंज को जाने के लिए एक रिक्शा-वाले से बात करने लगी।

"नीला ! हँसी क्यों हो ?"

"कुछ नहीं, आप जाइये।" इतना कह वह मुस्कराई और रिक्शे-वाले से बोली, "क्या लोगे ?"

"छः आने सरकार !"

"चलो।" यह कह वह लपककर रिक्शे पर चढ़ गई। हरभजन सिंह अपनी बाइसिकल पर सवार हो रिक्शे के साथ-साथ जाता हुआ पूछने लगा, "कुछ बात तो है, नीला देवी !"

नीला हँसी और कहने लगी, "मुझको उस दिन की बात याद आ गई थी, जब मैं हनुमान् जी के प्रसाद चढ़ाने जा रही थी और आपने देख लिया था। आपने कहा था, "एक डॉक्टर को मट्टी के लोंदे पर पुष्प-पत्र चढ़ाते हुए लज्जा आनी चाहिए।"

"आज वह बात क्यों स्मरण आ गई है ?'

"सवारी जो देखने जा रहे हैं आप ?"

"तो क्या यह भी लज्जा की बात है ?"

"पढ़े-लिखे व्यक्ति को तो स्वयं समझ आ जानी चाहिए।"

हरभजन सिंह हँस पड़ा। रिक्शा चलता गया और हरभजन सिंह की बाइसिकल उसके साथ-साथ थी। कुछ काल तक चुप रहने के पश्चात्, हरभजन सिंह ने पूछा, "क्या समझ की बातें पुरुषों के लिए ही हैं और स्त्रियों ने इनसे फ़ारख़ती ली हुई है ?"

"आप स्त्रियों की चिन्ता क्यों किया करते हैं ? वे तो अक्ल से फ़ार-ख़ती लेती हैं और उस पर दखल भी कर लेती हैं। पुरुषों मे विचारों की लचक नहीं होती। जब एक बार वह अक्ल को फ़ारख़ती देते हैं तो फिर

अक्ल की बात कर ही नहीं सकते ।"

"यही तो बात है कि वे कभी अक्ल से सम्बन्ध विच्छेद करते ही नहीं ।"

"शहद उनका कभी अक्ल में दखल हुआ ही नहीं ।"

इसके पश्चात् फिर दोनों चुप हो गए। रिक्शा चलता गया। हरभजनसिह बाइसिकल पर साथ साथ था। कुछ देर तक विचार कर उसने कहा, "नीला ! आज क्या है, जो जली-कटी सुना रही हो ?"

"कभी ज़बान खराब होने पर फीकी वस्तु भी मिर्च की भाति लगने लगती है। कुछ ऐसे ही मेरी साधारण-सी बात का आपको अनुभव हो रहा है।

"देखिये ! आपने कहा था कि मिट्टी के लोंदे पर फूल चढाना एक लज्जा की बात है। मैंने आपसे एक पुस्तक की सवारी पर पुष्प चढाने की बात कही तो आपको मेरी अक्ल से फारखती प्रतीत होने लगी। मैंने कहा कि पुरुषों को तो अक्ल मे दखल होता ही नहीं तो एक पुरुष को जली कटी प्रतीत होने लगी। ऐसी अवस्था में बिगडी ज़बान के स्वाद की ही उपमा तो दी जा सकती है।"

"इसका अर्थ यह हुआ कि आप तो बहुत ही मधुर भाषण कर रही थीं, परन्तु मेरे मन की अवस्था ही बिगड़ी है, जिससे यह मुझको कड़ुवा प्रतीत हो रहा है।"

"कुछ ऐसा ही समझ आया है।"

हरभजन सिह को इस समय तो समझ नहीं आया कि नीला क्या कह रही है। वह क्रोध के वश चुपचाप बाइसिकल चलाता गया। गोमती रोड से केसरबाग को रास्ता घूमा तो मोड़ पर नीला ने रिक्शा खड़ा करा लिया। नीला उतर पड़ी। हरभजन सिह को अपने विचारों की धुन में पता नहीं चला कि नीला पीछे रह गई है। कुछ दूर जाने पर उसको विदित हुआ कि रिक्शा उसके साथ नहीं है। उसने घूमकर देखा, नीला रिक्शे से उतर रिक्शे वाले को पैसे दे रही थी। उसने बाइसिकल

घुमा दी और नीला के पास पहुँच, बाइसिकल पर बैठे-बैठे, एक पाँव जमीन से लगाकर खड़े हो, पूछा, "यहाँ कहाँ जा रही हो?"

"माधुरी को तो आप जानते हैं। उससे मिलने जा रही हूँ।"

"उससे अथवा उसके भाई से?"

"भाई आज यहा नहीं है। वे कलकत्ता गए हैं।"

"ओह! तो उसके विषय में जानने जा रही हो?"

"उनके विषय मे तो मुझको पता है। माधुरी कल बीमार थी। उसके विषय मे जानने आई हूँ।"

हरभजन सिंह के कटाक्ष व्यर्थ गए। वे न तो नीला को क्रुद्ध कर सके न ही उनसे उसको घबराहट हुई। उसने साधारण रूप मे उत्तर दिये और 'बाई-बाई' कह कर मकान मे चली गई। हरभजन सिह उसको जाते देखता रहा।

: २ :

नीलमणि डॉक्टर राधाकृष्ण सक्सेना की लड़की थी। डॉक्टर सक्सेना और प्रभुदयाल, माधुरी के पिता, मित्र थे। प्रभुदयाल बैरिस्टर थे। डॉक्टर साहब और बैरिस्टर साहब का परस्पर आना-जाना था। इससे लड़कियो का भी आना-जाना बना था। राधाकृष्ण का मकान तो अमीनाबाद पार्क के किनारे पर था और प्रभुदयाल का केसरबाग के चौराहे पर। डॉक्टर सक्सेना तो कई पीढियों से लखनऊ में रहते थे, परन्तु प्रभुदयाल पंजाब जिला लुधियाना के रहने वाले थे। प्रभुदयाल के पिता ने लखनऊ मे ठेकेदारी का काम आरम्भ किया था और उससे लाखों रुपये कमाये थे। उसी कमाई के आश्रय प्रभुदयाल विलायत से बैरिस्टर बन आया था।

प्रभुदयाल की अपनी प्रैक्टिस भी अच्छी-खासी थी और जीवन अति सुलभ हो रहा था। पजाबी होने से सिखमत की छाप लिये हुए था। साथ ही विलायत में पाँच वर्ष तक रह आने से विचार-स्वतंत्रता उसके जीवन

का एक अङ्ग बन चुकी थी।

श्री गुरु नानकजी के जन्मदिन के अवसर पर, गुरुद्वारा के लिए प्रभुदयाल ने एक हजार रुपया दान लिखाया था।

आज जब गुरु ग्रन्थ साहब की सवारी केसरबाग के चौराहे पर आई तो प्रभुदयाल और उसके परिवार के लोग अपने मकान के छज्जे पर देखने आ खड़े हुए। प्रभुदयाल सिर से नगा था। उसकी लड़की माधुरी और उसकी सहेली नीलमणि के सिर पर से कपड़ा उतरा हुआ था।

सवारी के साथ प्राय. सिख जनता ही थी। पहले कुछ मण्डलिया भजन गाती हुई जा रही थीं। दो-तीन मण्डलिया तो केवल स्त्रियों की ही थीं।

जब गुरु ग्रन्थ साहब की सवारी प्रभुदयाल के मकान के नीचे से गुजरी तो प्रभुदयाल, उसकी लड़किया तथा समीप खडे अन्य लोग, जिनमें बैरिस्टर साहब की माँ भी थी, श्री ग्रन्थ साहब पर पुष्प वर्षा करने लगे। प्रभुदयाल ने पवित्र पुस्तक पर दो-तीन मुट्ठी-भर पुष्प-पखुड़िया बरसाईं।

ग्रन्थ साहब के पीछे बैठे पुरुष ने, जो उस पर चॅवर झुला रहा था, इनको सिर नगा देख कहा, "सिर ढाँप लीजिए।"

प्रभुदयाल विस्मय में उसकी ओर देखने लगा। उस व्यक्ति ने कहा, "सिर ढाँप लीजिए। सिर ढाप लीजिए।"

प्रभुदयाल अभी भी इसका अर्थ नहीं समझा। उसने फूलों के पटार में से मुट्ठी भरकर पुष्प फिर पवित्र ग्रन्थ साहब की ओर फेंके। इस समय सवारी के साथ जाने वाले लोगों ने ग्रन्थ साहब के पीछे बैठे आदमी की आवाज सुन ली और सब-के-सब प्रभुदयाल और लड़कियों को "सिर ढाप लो, सिर ढाँप लो" कहने लगे।

प्रभुदयाल, जो इगलैण्ड में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का मज़ा चख चुका था, इस प्रकार के व्यवहार से चकित रह गया। उसने हाथ के सकेत से लोगों को कहा कि वे चलते जायँ। ग्रन्थ साहब एक ऊँचे तख्तपोश पर चौकी रखकर और उस पर बरागन पर रखा था। इस कारण ग्रन्थ साहब

छज्जे की ऊँचाई पर ही था। ग्रन्थ साहब के पीछे बैठे पुरुष ने प्रभुदयाल के हाथ से सकेत करने पर कि सवारी चलती जाय, श्री दरबार साहब का अपमान समझा।

इस पर उसने माथे पर त्योरी चढा कर कहा, "तुम पीछे हट जाओ।"

प्रभुदयाल हँस पडा। वह मन में विचार करता था कि वह अपने मकान पर खडा है, इस कारण उसको आज्ञा देना न केवल अनुचित है, प्रत्युत उद्दण्डता भी है। इससे वह कहने वाला था कि वे लोग अपना काम करें और उसकी ओर ध्यान न दें, परन्तु इस समय नीचे से किसी ने पत्थर उठाकर उसकी ओर दे मारा। पत्थर उसके कान को छूता हुआ छज्जे की छत से टकराकर पीछे खडे हुओ में जा गिरा। प्रभुदयाल को इससे क्रोध चढ आया और बोला, "सवारी चलाओ।"

इस पर तो पत्थरों की बौछार आने लगी। प्रभुदयाल का माथा फटा। नीलमणि की कनपटी पर गहरा घाव हो गया। माधुरी को भी चोट आई और कई अन्य वहा खडे हुओ को भी चोटें आईं। प्रभुदयाल भागा हुआ भीतर गया और अपना पिस्तौल उठा लाया। इस समय तक छज्जो मे खडे सब लोग पीछे के कमरे मे हट आए थे। प्रभुदयाल को पिस्तौल लेकर छज्जे की ओर जाते देख नीलमणि ने उसका मार्ग रोक लिया। उसने कहा, "काका, नही, यह ठीक नहीं। यहीं ठहरिये और सवारी निकल जाने दीजिये। इन पागलो पर गोली चलाना तो गोली व्यर्थ गवाना है।"

नीचे लोग जोश से भरे हुए मकान को आग लगा देने की आवाजे कसने लगे थे। इस समय हरभजन सिंह, जो सवारी के साथ-साथ था, लपक कर ट्रक की छत पर चढ गया और कहने लगा, "खालसा वीरो! गुरु महाराज का अपमान करने वाले सब भाग गए हैं। पथ की विजय हुई है। अब और झगड़ा करने की आवश्यक्ता नहीं। इस कारण मेरा निवेदन है कि चलना चाहिए।"

हरभजन सिंह नीला को प्रभुदयाल के मकान पर छोड़ बाइसिकल अमीनाबाद पार्क की ओर सवारी के साथ होने के लिए चल पड़ा थ उसने बाइसिकल एक परिचित की दूकान पर रखी और स्वय सवारी सम्मिलित हो गया। वह उस ट्रक के, जिस पर दरबार साहब रखा साथ-साथ हो गया। उसका पिता ग्रन्थ साहब की सेवा के लिए ग्र साहब को चँवर कर रहा था।

हरभजन सिह ने पूर्ण झगड़ा, जो प्रभुदयाल के साथ हुआ था, दे था। जब सवारी के लोग सीमा से बाहर हो मकान को आग लगाने धमकी देने लगे तो उसने ट्रक पर चढकर, सगत को शान्त करने का य किया। इस पर किसी ने यह समझा कि हरभजन सिह दरबार साहब का अ मान करने के लिए ट्रक पर चढ गया है। इससे उसको इतना क्रोध आया कि वह हरभजन सिह का कथन सुन और समझ नहीं सका। आदमी मे इतना धैर्य भी नहीं रहा था कि वह देखे कि ट्रक पर च वाला एक सिख युवक ही है। वह हरभजन सिंह के पीछे ट्रक के मडग पर चढ गया और उसने हरभजन सिह का पाव पकड़ कर उसे नीचे घ लिया।

हरभजन सिह को स्वप्न में भी यह विचार नहीं आ सकता था उससे यह आशा की जायगी कि वह दरबार साहब का अपमान सकता है। वह बेखबर खड़ा था और जब उसका पाँव घसीटा गया तो वह लुढककर नीचे गिर गया। वह गिरते गिरते बाँह के बल स पर पडा और उसकी बाँह की मोच निकल गई। गिरते समय उ पगडी और केश खुल गए।

हरभजन सिंह के पिता ने यह काड देखा तो डाटकर लोगों को क "यह क्या कर रहे हो? एक गुरु के प्यारे को किस लिए धकेला है?"

बहुत कठिनाई से लोग शान्त हुए और सवारी आगे चली। शान्ति स्थापित करने में पुलिस ने कम से-कम भाग लिया।

हरभजन सिह अपनी पगड़ी ले जलूस से बाहर निकल आया।

में मोच आने के कारण वह पगडी बाध नहीं सका। अतएव वह पगड़ी बगल मे दबाये, अपने मित्र की दुकान पर, जहा उसने अपनी बाइसिकल रखी हुई थी, चला आया। वहा उसने अपने मित्र से रुमाल लेकर सिर पर बाध लिया और तागे पर सवार हो, अपने मकान कैण्टोनमैण्ट रोड पर चला गया।

३ :

प्रभुदयाल को कुछ ऐसा अनुभव हुआ, मानो वह सोते से जाग पडा है। अपने पिता के विचारो के कारण और घर के सस्कारो के कारण, वह अपने को सहजधारी सिख मानता था। उसके पिता का तो देहान्त हो चुका था, परन्तु उसकी वृद्ध माता अभी जीती थी और घर मे गुरु ग्रन्थ साहब की स्थापना थी। वृद्ध माता तो अब ग्रन्थ साहब पढ नहीं सकती थी। इस कारण कभी-कभी एक ग्रन्थी गुरुद्वारे से आया करता था, जो इसमें से पाठ किया करता था। उस समय प्रभुदयाल की माता, प्रभुदयाल स्वयं और कभी उसके बच्चे भी बैठकर सुना करते थे। प्रभुदयाल यहा तो प्रायः सिर नगा ही बैठा करता था। कभी सिर पर टोप रखकर भी बैठता था। इसमे कभी आदर-अनादर की बात उसके मन मे नहीं आई थी। वह गुरु ग्रन्थ साहब की वाणी को पसन्द करता था। वह यह भी मानता था कि गुरु नानक देव परमात्मा के परम भक्त और उस पर अगाध श्रद्धा रखने वाले थे। इसी कारण उनकी वाणी मे रस और प्रभाव है।

वह जब सुनता,

'सा पुरुख निरंजन हरि पुरुख निरजन
हरि अगमा अगम अपारा।
सभी ध्यावें सभी ध्यावें तुद जी।
हरि सच्चे सिरजन हारा।
सभी जिय तुम्हारे जी तू जिओ का दातांरा।
हरि ध्यावहु सन्तो जी सभी दुख सारण हारा।

हरि आपे ठाकुर हरि आपे सेवक जी
किआ नानक जात विचारा।'

इस प्रकार पद के पश्चात् पद श्री गुरु ग्रन्थ साहब में से जब प्रभुदयाल सुना करता था, तो जहा उसके मन में श्री गुरु नानक महारज के लिए श्रद्धा और भक्ति उमडती थी, वहा वह स्वय परमात्मा पर अगाध विश्वास से भर जाता था।

परन्तु इस समय वह गुरु ग्रन्थ साहब में लिखे पर विचार नहीं कर रहा था। उसमें लिखे पर उसके विचारों में अन्तर नहीं आया था। उसके मन में विचार उठ रहे थे गुरु ग्रन्थ साहब के ठेकेदारों पर। केशधारी सिख समझते थे कि वे ही हैं, जो गुरु नानक के विचारों की रक्षा और आदर करने वाले हैं।

उसने सरक्युलर रोड पर गुरुद्वारे के लिए एक सहस्र रुपया लिखवाया था। आज उसको चेतना हुई कि वह यह दान गुरु महाराज के पथ के प्रसार के लिए नहीं दे रहा, वास्तव में यह दान उन लोगों की प्रभुता बढाने के लिए वह दे रहा है, जो मनुष्य के मन की भावनाओ से अधिक मनुष्य की वेश-भूषा पर ध्यान देते है और जो किसी दूसरे के मन के भावों का आदर करना नहीं जानते। उसने मन में निश्चय कर लिया कि अब वह गुरुद्वारे के लिए दान किया धन नहीं देगा। इस पर उसके मन में विचार आया कि यहा न देकर इस रुपये को वह क्या करेगा? यूँ तो वह अन्य सस्थाओ को भी दान दिया करता था। इस कारण यह धन किसी अन्य सस्था को देने का विचार भी उसके मन में उत्पन्न हुआ, परन्तु यह विचार टिक नहीं सका। वह यह धन गुरु महाराज के चरणों में अर्पण कर चुका था, अतएव वह इसको किसी ऐसी सस्था को, जो गुरु महाराज के कार्य को पूर्ण न करती हो, देने को तैयार नहीं हुआ।

अगले दिन जब वह कोर्ट में माथे पर पट्टी बाधकर गया तो वहा यह बात विख्यात हो गई कि गुरु ग्रन्थ साहब का सवारी के सामने नगे

सिर खड़ा होने के कारण प्रभुदयाल पीटा गया है। वह अपने मकान की ऊपर की मजिल पर होने के कारण बच गया है, नही तो जान से ही मार दिया जाता।

प्रभुदयाल के मित्रों ने उसके साथ सहानुभूति प्रकट की और सुझाव उपस्थित किया कि वह गुरुद्वारा कमेटी पर बलवा करने का दावा कर दे, परन्तु प्रभुदयाल नहीं माना। एक सिख ऐडवोकेट सरदार गुरुवचनसिंह ने यह समझा कि प्रभुदयाल अपने किये पर पश्चात्ताप कर रहा है। इस कारण वह उसके पास आया और कहने लगा, "बाबू प्रभुदयाल! यह आपने किया क्यों?"

"क्या किया, क्यों?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"पथ से नियत किये विधि-विधान की अवहेलना।"

"मुझको विदित नहीं था कि सिख पंथ और इस्लाम पंथ मे कोई अन्तर नही है। वे भी मस्जिद से भी दूर किसी मन्दिर में कीर्तन होता सुन नहीं सकते।"

"पर आप तो गुरु महाराज के सामने ही खड़े थे।"

"और उन पर पुष्प-वर्षा कर रहा था। इस पर भी अपने घर के अन्दर था। गुरु ग्रन्थ साहब एक शास्त्र-ग्राम पर था। भला यह कैसे हो सकता है कि पथ सब ससार के आदमियो पर अपने विधि-विधान लागू कर दे।"

"आपकी पुष्प-वर्षा से सब के मन मे भ्रम हो गया था कि आप भी गुरु के सिख हैं, इसी से वे आप से आशा करते थे कि आप पंथ के विधि-विधान मानेगे।"

"हा, मैंने इस विषय में एक भूल की है। मेरे व्यवहार से यह भ्रम हो सकता था कि मैं उन जैसा ही रूढिवादी सिख हूँ। इसी भूल के कारण मैंने कल वाली घटना की सूचना तक थाने मे नहीं दी। सरदार गुरुवचनसिंह! अब मैं पूर्ण सावधानी से काम लिया करूँगा। कभी इस प्रकार का भ्रम उत्पन्न होने का अवसर ही नहीं दूँगा।"

"आप सिख तो हैं नहीं। तो फिर सिख प्रकट करने की आवश्यकता ही क्या है?"

"हा, आप ठीक कहते हैं। गुरु महाराज मुझको प्रिय हैं और मैं गुरु महाराज का प्रिय हूँ अथवा नहीं, भगवान जानते हैं। परन्तु मैं सिख, जैसा इस शब्द से प्रकट होता है, नहीं हूँ।"

प्रभुदयाल ने वैसा ही किया। जब गुरुद्वारे के लोग उससे वचन दिया दान का धन लेने आये तो उसने स्पष्ट इन्कार कर दिया। उसने पूर्ण घटना का वर्णन कर कह दिया कि यदि इस प्रकार के लोग बनाना गुरुद्वारों का काम है, तो वह इसके लिए एक कौड़ी भी नहीं दे सकता।

सरदार वढियामसिह इस डेपुटेशन में एक था। वह पूर्ण घटना से परिचित था। उसने कुछ लज्जा अनुभव करते हुए कहा, "जनसाधारण के मनोद्गारों का आदर करना अत्यावश्यक है। यह बात सिख जनता में मानी जाती है कि दरबार साहब के सामने सिर नगा कर खड़ा होना दरबार साहब का अपमान करना है।"

"देखिये सरदार बहादुर! मैं अपने घर में खड़ा था। दरबार साहब की सवारी शाराये आम पर जा रही थी। आपका मुझको अपने घर में रहते हुए, यह आदेश देना अनधिकार चेष्टा थी। मुझको अब क्षमा करिये। मै जानता हूँ कि मेरा एक हज़ार रुपया आपके सामने कुछ भी गणना नहीं रखता। इससे कई गुना अधिक आप अकेले दे सकते हैं। मै तो यह इन्कार अपनी आत्मा की प्रेरणा के अधीन कर रहा हूँ। मैं इस प्रकार की असहिष्णुता और असहनशीलता उत्पन्न करने में एक पाई भी देना नहीं चाहता।"

गुरुद्वारे का डैपुटेशन जब जाने लगा, तो उसमें आये हुओं की दृष्टि घर के एक कमरे में रखे गुरु ग्रन्थ साहब पर पड गई। उसको देखकर एक सज्जन प्रभुदयाल से कहने लगे, "तो क्या आप दरबार साहब को लपेट देंगे?"

"मैं अपने घर में क्या करूँगा और क्या नहीं करूँगा, यह आपके

जानने की बात नहीं है।"

"मेरे कहने का प्रयोजन यह है कि यदि आपने इनको उठा देना है तो हम उठाकर ले जाये और इसकी स्थापना किसी अन्य स्थान पर कर दे।"

"बाजार मे ये बिकते हैं। जब किसी स्थान पर स्थापना करनी होगी तो आप मोल ले सकते है।"

इस पर सरदार बढियामसिंह ने कहा, "आइये खालसा जी! ये वकील हैं। इनसे बहस मे हम जीत नहीं सकेंगे।"

इस पर सब हँसने लगे।

प्रभुदयाल के इस आचरण पर प्रभुदयाल की मा को बहुत दुःख हुआ। उसने उसी रात पूछा, "प्रभु! तुमने गुरुद्वारे को दिया दान वापिस ले लिया है क्या?"

"नहीं मा! वापिस नहीं लिया। हा, गुरुद्वारे को नहीं दे रहा। जहा मनुष्य का मान नहीं होता और उस पुस्तक का मान होता है, जो बाजार में बीस रुपये की बिकती है, वहा दान दे कर क्या करूँगा?"

"पर बेटा! इसमे बहुत-सी अच्छी बाते भी तो लिखी हैं।"

"हाँ, माँ! लिखा है—

'सभी जिय तुम्हारे जी, तू जिओ का दातारा।'

"परन्तु गुरुद्वारे मे तो यह बताया जाता है कि जो केशधारी नहीं, वह नीच और जाहिल है। वहाँ यह सिखाया जाता है कि दूसरो के घरो में घुसकर उनको बलपूर्वक अपनी बात मानने पर विवश किया जाये। माँ! मैं गुरु साहब की बात तो मानता हूँ परन्तु इन सिखों की नहीं, जिन्होने उस दिन मेरा सिर फोड दिया था।"

माँ अपने पुत्र के सिर पर बँधी पट्टी देख चुप कर रही। साथ ही उसको एक और घटना का स्मरण हो आया। एक दिन वह केवल इस कारण कि कच्छा और कडा नहीं पहिने हुए हैं, गुरुद्वारे के लंगर से उठा दी गई थी। इस घटना के स्मरण आ जाने से वह अपने पुत्र की बात को

समझने लगी थी ।

४

गुरु नानक के जन्म दिन से अगले दिन, नीलमणि कॉलेज गई तो उसके सिर पर पट्टी बँधी थी । प्रोफैसर और अन्य सहपाठियों ने पूछा, तो उसने बताया, "यह धर्मान्धता का आघात है ।"

हरभजन सिंह ने तो यह चोट लगती देखी थी, परन्तु उसने अपने इस ज्ञान का उल्लेख अपने सहपाठियों से नहीं किया । उसने नीला के उत्तर को सुना, परन्तु उस पर टीका टिप्पणी नहीं की । नीलमणि ने भी उत्तर में साधारण सिद्धान्तात्मक बात ही कही थी और घटना विशेष, जिसमे यह चोट लगी थी, नहीं बताई ।

पढ़ाई के उपरान्त वह अस्पताल में अपनी ड्यूटी पर चली गई । हरभजन सिंह की ड्यूटी रात के समय की थी । इस कारण वह नीलमणि से सहानुभूति प्रकट नहीं कर सका । वह वहाँ से घर लौट आया । नीलमणि के सिखों के जलूस का नाम तक न लेना उसके लिए विचार का विषय बन गया ।

अगले दिन दोनों फिर क्लास में मिले । साधारण अभिवादन हुआ और बस । आज हरभजन सिंह से नहीं रहा गया । उसने पढ़ाई के उपरान्त नीलमणि के साथ साथ अस्पताल की ओर जाते हुए कहा, "मुझको अत्यन्त शोक है कि उस दिन कुछ लोगों ने ऐसा व्यवहार किया ।"

"किसने कैसा व्यवहार किया है ?"

"उस दिन की सवारी की बात कर रहा हूँ ।"

"तो आप भी उनमें थे ?"

"हाँ, परन्तु मैंने तो लोगों को शान्त करने का ही यत्न किया था । मै नहीं होता तो कदाचित वे मकान को आग लगा देते ।"

"तब तो कोई नई बात न होती । नई बात तो यह हुई है कि आपके समझाने पर सब समझ गए थे । इसमें उनकी बुद्धिमत्ता की तो

कोई बात प्रतीत नहीं हुई। हाँ, आपकी चतुराई का परिचय तो अवश्य मिला है।"

हरभजन सिंह प्रसन्न था। यह कहाने के लिए ही कि वह बहुत चतुर आदमी है, उसने यह बात आरम्भ की थी। इस पर उसने वह सब-कुछ बता दिया, जो कहकर उसने लोगों को टाला था। इस पर नीला मुस्कराई और बोली, "तो वे आप थे, जिसको टाग पकडकर लोगों ने नीचे गिरा दिया था?"

यह सुन हरभजन सिंह को बहुत लज्जा लगी। इस पर भी उसने कहा. "मैं अपने गिराये जाने की परवाह नहीं करता। मेरा प्रयोजन, सवारी को वहाँ से टालकर आगे ले जाने का, सिद्ध हो गया था।"

"परन्तु देखिये न, आप पर जो आक्रमण हुआ, उस बात का विचार न भी करें, तो भी यह तो विचार की बात है ही कि आपको दरबार साहब पर पुष्प वर्षा करने वालों को भाग गया बताना पड़ा और उनको खालसा वीर कहकर सम्बोधन करना पडा, जिन्होंने दरबार साहब पर पुष्प-वर्षा करने वालों पर पत्थर बरसाये थे। दोनों बातें गलत थीं। न तो हम भागकर गए थे और न ही वे वीर थे, जो निहत्थों पर पत्थर बरसाते थे।"

"आपके घाव का क्या हाल है?" हरभजनसिंह ने बात बदल दी।"

"डॉक्टर का विचार है कि घाव भरने मे एक सप्ताह तो लग ही जायेगा।"

इस समय वे अस्पताल मे पहुँच गए थे। नीलमणि ने अपनी हाजरी लिखवाई और बीमारो के देखने में लग गई।

हरभजन सिंह लौट पडा। नीलमणि के कथन से उसके मस्तिष्क को भारी चोट पहुँची थी। यूँ तो सवारी की घटना को देखने के समय से ही वह इसमें बहुत-कुछ अस्वाभाविकता, अयुक्तिसंगतपन और निकृष्ट-भावना की उपस्थिति अनुभव करने लगा था। उसने उन मूर्खों को वीर कहकर सम्बोधन किया था और बिना जाने कि मकान मे क्या हो रहा है,

कह दिया था कि मकान वाले भाग गए हैं।

अगले रविवार को नियमानुसार गुरुद्वारे में सगत एकत्रित हुई। ग्रन्थी ने दरबार साहब में से पाठ किया। इस समय हरभजन सिंह, जो इन दिनों गुरुद्वारे नहीं जाया करता था, वहाँ जा पहुँचा। वह सवारी के दिन हुई घटना के विषय में वहाँ के विचार जानना चाहता था। जब वह गुरुद्वारे में पहुँचा तो ग्रन्थी पाठ कर रहा था—

"मैं बन्दा बेखरीदू सचु साहिबू मेरा
जिउ पिउ सभु तिस दा सभु कुछ है तेरा।
मारो न मारो तूधजी मेरा भरवासा
बिन साचे अन टेक है जो जाणहु काचा।
तेरा हुकम अपार है कोई अंत न पाये
जिस गुरु पूर भेदसी सो चले रजाये।
चतुराई सियाणया किते काम न आइये
तुठा साहिबू जो देवें सोई सुख पाइये।"

इस पाठ में भगवान् पर पूर्ण भरोसा और उसके अर्पण सब-कुछ करने की बात थी। हरभजन सिंह विचार करता था कि इस वाणी में तो न किसी के प्रति वैर भाव है, न ही किसी का विरोध। जब यह है तो इसकी रक्षा के लिए इतना झगड़ा क्यों किया जा रहा है।

वह ग्रन्थी पाठ कर रहा था और सगत चुपचाप तथा लीन चित्त हो सुन रही थी। हरभजन सिंह इसी सगत के उद्विग्न मन और अनियमित चलन को जलूस में देख रहा था। इससे उसको समझ नहीं आ रहा था कि इतनी मधुर और भक्तिभावना-पूर्ण वाणी के सुनने वाले उस दिन वाला व्यवहार भी रख सकते हैं। जिस आदमी ने उसकी टाँग पकड़कर उसे नीचे गिराया था, वह सगत में सबसे आगे बैठा भक्ति भावना से पाठ सुन रहा था।

परन्तु उसका विस्मय अधिक काल तक स्थिर नहीं रह सका। जब पाठ समाप्त हुआ और अरदास पढ़ ली गई तो एक गुरु का प्यारा उठा

और हाथ जोड़कर सगत के सम्मुख विनती करने लगा। वह वहाँ की गुरुद्वारा कमेटी का मन्त्री था। वह कहने लगा,

"सतगुरु कर्तार की अपार कृपा से उस दिन का जलूस सब प्रकार से सफल हुआ। गुरु की प्यारी सगतों ने बहुत ही जोश और साहस के साथ अपने कार्य को निभाया। इस अवसर पर श्री गुरुद्वारा में कुछ कमरे और बनवाने के लिए पन्द्रह हजार रुपया एकत्रित हुआ है। गुरु के प्यारे सरदार वढियाम सिह जी ने इस गुरु के कार्य के लिए दस हजार रुपया दिया है। एक सहजधारी बैरिस्टर प्रभुदयाल की माताजी ने एक हजार लिखाया था, परन्तु उस दिन बाबासाहब के सम्मुख उसने नगे सिर खड़े होकर दरबार साहब का अपमान किया था। सगत का उनसे झगडा हो गया और उन्होंने वह दान किया धन देने से इन्कार कर दिया है। इस प्रकार पन्द्रह हजार मे एक हज़ार की कमी हो गई है। मुझको पूर्ण आशा है कि संगत इस कमी को पूरा कर देगी।

"सहजधारी जनता पर कुछ बहुत भारी आशा नहीं की जा सकती। वे सहजधारी होने से दो नौकाओं में पाँव रखे हुए हैं। जब उनको लाभ प्रतीत होता है तो वे गुरु की सगत मे आ बैठते हैं और मतलब होने पर हिन्दू देवी देवताओं के सामने माथा रगड़ने लगते हैं।

"गुरु की प्यारी, प्रभुदयाल की माता के हृदय पर, अपने पुत्र के हठ से क्या बीतती होगी, अनुमान लगाना कठिन है। इसमे हम क्या कर सकते हैं?

"हमें अपना काम करना चाहिए। एक सहस्र रुपया, जो इस सिर फिरिये के कारण गुरुद्वारा को हानि हुई है, उसकी पूर्ति करनी चाहिए।"

मन्त्री गुरुद्वारा कमेटी के कथन के पश्चात् एक सेवादार खडा हो गया और हाथ जोडकर निवेदन करने लगा, "गुरुके प्यारो! चन्दा तो एकत्रित हो जावेगा। मैं इसमे एक चवन्नी देता हूँ।" इतना कहकर उस सेवादार ने अपनी जेब से एक चवन्नी निकालकर दरबार के सामने फेंक दी और फिर कहने लगा, "पर मैं तो एक और निवेदन करने के लिए

उपस्थित हुआ हूँ। मेरा मत है कि प्रभुदयाल के घर के सामने धरणा दिया जाय और यह माँग उपस्थित की जाये कि वह अपनी माता देवी को पन्थ सेवा करने के लिए एक हज़ार रुपया देने से न रोके।"

सेवादार का यह प्रस्ताव सुनकर सगत में जोश भर आया और अन्य सेवादारों ने जयकारा बुला दिया, "जो बोले सो निहाल।"

सगत ने उत्तर दिया, "सत श्री अकाल।"

इस पर पहला सेवादार फिर कहने लगा, "मैं अपनी सेवा इन धरणा देने वालों में देता हूँ। यदि आवश्यकता पड़ी तो मैं भूख हड़ताल भी कर दूँगा।"

इस पर फिर जयकारे बुलाये जाने लगे। बिना किसी अधिकारी के इस प्रस्ताव का समर्थन किये, लोग उठ-उठकर धरणा देने वालों में अपनी सेवायें देने लगे। सेवादार, जिसने यह प्रस्ताव किया था, एक कागज लेकर नाम लिखने लगा।

इस समय सरदार बढियामसिह उठा और लोगों को शान्त करने के लिए कहने लगा, "खालसा वीरो तथा गुरु के प्यारो! बैरिस्टर प्रभुदयाल की माता ने यह दान लिखाया था अथवा प्रभुदयाल ने स्वय लिखाया था, कहना कठिन है। कल मन्त्रीजी के साथ मैं भी बैरिस्टर साहब से दान की रकम लेने गया था। उनसे जो बातें हुई थी, उनसे नहीं कहा जा सकता कि यह दान उनकी माँ ने लिखाया था। इसके अतिरिक्त यह भी नहीं कहा जा सकता कि उनकी माता ये दान अब देना भी चाहेंगी अथवा नहीं। इस कारण ......।"

इस समय वही सेवादार, जिसने धरणा देने का प्रस्ताव किया था, बढियामसिह की बात को बीच में ही रोकर कहने लगा, "पहले धरणा में नाम लिखाने वालों के नाम लिख लेने दीजिए। पीछे गुरुद्वारा कमेटी विचार कर लेगी। यदि उसकी सम्मति मे धरणा देना ही चाहिए तो फिर स्वयंसेवकों को आज्ञा दी जा सकती है।

'मेरा कहना है, कि नाम लिखाये जायें।"

इस पर नाम फिर आने लगे। सवा सौ से ऊपर नाम लिखाये गए। नाम लिखाने वालों में महिलाएँ भी थीं। जब सूची बन गई तब ही वढियाम सिंह अपना वक्तव्य जारी कर सका। उसने कहा, "मेरी सम्मति है कि गुरुद्वारे के लिए धन को तो हम आज ही एकत्रित कर ले। धरणे की बात कमेटी मे विचार कर लेंगे। मेरा सगत के सम्मुख निवेदन है कि एक हजार यहाँ एकत्रित कर दिया जावे। यह बहुत आवश्यक बात है।"

इस पर लोग फिर चन्दा देने लगे। कोई दुअन्नी, कोई चवन्नी और कोई-कोई एक रुपया भी देता था। सब धन, जो वहाँ एकत्रित हुआ गिन डाला गया। ये साठ रुपये पन्द्रह आने थे।

इस पर वढियाम सिंह ने कहा, "मुझको गुरुभक्त सगत से इतने कम दान की आशा नहीं थी। आप लोग धरणे की बात कहते हैं। उसके लिए भी तो धन की आवश्यकता पडेगी। पचास-साठ रुपये से न तो गुरुद्वारा बन सकता है और न ही धरणे की योजना चल सकती है।"

वढियाम सिंह ने इस कोष मे सौ रुपया दिया और कहा कि जितना सगत और देगी उतना ही वह अकेला देगा।

इस पर लोगो ने और देना आरम्भ कर दिया। बहुत यत्न करने पर धनराशि एक सा रुपये से अधिक नहीं हुई।

हरभजन सिंह ने विचार किया कि सवा सौ लोगों ने धरणा देने के लिए नाम दिया है। धरणा देने मे कितने ही दिन व्यर्थ जाने का भय है और यदि ये लोग अपनी एक-एक दिन की भी कमाई दे देते, तो एक सहस्र रुपया तो सहज मे ही हो जाता। परन्तु जितना जोश विरोध करने के लिए दिखाया गया है, उतना पैसा देने में नहीं।

इस समय प्रसाद बाँटा गया, पहले पाँच प्यारों को और फिर अन्य संगत को।

हरभजन सिंह अपने पिता के साथ घर आया। हरभजन सिंह की बहन अमृतकौर भी साथ थी। लड़की सेन्ट टॉमस स्कूल मे पढती थी। वह इस सब उत्तेजना का, जो गुरुद्वारे मे दिखाई गई थी, अभिप्राय नहीं

समझ सकी थी ।

हरभजन सिंह ने पूछा, "यह सेवादार जो धरणा देने की बात करता था, बहुत ही मूर्ख प्रतीत होता है। क्या काम करता है यह ?"

"कुछ काम नहीं करता । संगत के जूते सँभालता है और गुरुद्वारे में रोटी खाता है । कपड़े कभी मैं और कभी कोई और ले देता है । यह चवन्नी, जो इसने दी थी, वह कमेटी के मन्त्री ने दे रखी थी । यह इस कारण थी कि गरीब के इस दान को देखकर अन्य लोगों को भी देने में उत्साह उत्पन्न हो । रही धरणे की बात, यह तो वह स्वयं ही कहने लगा था ।"

"पर पिताजी ! यह धरणे की बात तो नहीं चलेगी न ?" अमृत ने पूछ लिया ।

"क्यों, क्या हानि है इसमें ?"

"आपने ही तो कहा था न कि यह नहीं कहा जा सकता कि दान प्रभुदयाल ने दिया है अथवा उसकी माता ने ?"

"मुझको पक्का पता है कि दान प्रभुदयाल ने दिया था, उसकी माँ का हाथ इसमें नहीं है ।"

"तब तो धरणा असत्य का पोषक हो जावेगा ।"

"मैं धरणे के हक मे नहीं हूँ । इस पर भी यदि जनता डट गई तो मैं क्या कर सकता हूँ ?"

"आपने सबके सामने यह क्यों नहीं कह दिया कि दान प्रभुदयाल ने लिखाया था और उसकी माँ ने नहीं ?"

"देखो अमृत !" बढियाम सिंह ने कहा, "मैं सिख-संगत का अगुआ हूँ। यदि इन छोटी-छोटी-सी बातों के लिए साधारण लोगों से झगड़ा करूँ, तो मेरा अगुआ-पन नहीं रह सकता ।"

इस पर हरभजन सिंह ने कहा, "तो अगुआ बने रहने के लिए आपने असत्य भाषण कर दिया ।"

"मैंने असत्य नहीं कहा । मैंने सेवादार की बात का समर्थन नहीं

किया। मैंने तो केवल कहा है कि प्रभुदयाल की माँ क्या चाहती है, हम नहीं जानते।"

"आपके ऐसा कहने से यह बात सिद्ध ही होती है कि दान देने वाली प्रभुदयाल की माँ भी हो सकती है, परन्तु आप जानते हैं कि यह दान प्रभुदयाल ने ही दिया था।"

"तुम दोनो अभी बच्चे ही हो। इस सब बात का रहस्य यह है कि मैं अगुआ बना रहना चाहता हूँ। इसी में अपना लाभ समझता हूँ।"

हरभजन सिह और अमृत चुप कर गये, परन्तु उनके मन चुप नही रहे। वे तो विचार कर रहे थे कि यह धर्म नहीं है। यह दुनियादारी है। जो कुछ गुरु ग्रन्थ साहब मे लिखा है, वह ठीक हो सकता है, परन्तु जो-कुछ सगत और गुरुद्वारे के अधिकारी कर रहे हैं, उसका गुरु ग्रन्थ साहब के प्रवचन के साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं। दोनो भिन्न-भिन्न बातें हैं।

५

हरभजन सिंह नीलमणि से प्रेम करने लगा था। उसको इस बात का ज्ञान तब हुआ था, जब वह मैडिकल कॉलेज की सैकेंड ईयर मे पढता था। नीलमणि भी उसके साथ ही पढती थी। जब भी वह उसके सामने जाता था, वह अपने मन मे एक विशेष प्रकार का कौतूहल अनुभव किया करता था। इसके पश्चात् दोनो में मेल-जोल बढ गया, हरभजन सिह को इस बात का अर्थ यह समझ आया था कि वह भी उससे कुछ अश मे लगाव रखती है। विशेष रूप में नीला का उससे बात करते समय संकोच अनुभव करना, उसको अपने अनुमान का समर्थन प्रतीत होता था। यह विचारकर वह उससे इस लगाव को और अधिक घनिष्ठ करने का यत्न करता रहा।

चौथी श्रेणी की परीक्षा के हो जाने के उपरान्त कॉलेज के अध्यापक तथा विद्यार्थियो के एक मण्डल ने भारत-भ्रमण के लिए जाने का प्रबन्ध किया। इस भ्रमण का आयोजक सुशीलकुमार भट्टाचार्य विद्यार्थियो से मिल-मिलकर इस भ्रमण पर चलने वालो के नाम लिख रहा था। वह

नीलमणि से भी मिला।

नीलमणि और हरभजन सिंह बाइसिकल स्टैंड के समीप खड़े अपनी-अपनी बाइसिकलें निकलवा रहे थे। इस समय सुशीलकुमार उनके पास आया। उसने नमस्कारकर कहा, "मिस नीला! आप तो चलेंगी न?"

"कहाँ?" भ्रमण की बात उसने नोटिस बोर्ड पर पढ़ी थी, परन्तु यह इस समय उसके मन में नहीं था।

"ऑल इण्डिया टूर पर, जिसका हमारे कॉलेज की स्टूडैण्ट्स यूनियन प्रबन्ध कर रही है।"

"ओह! कौन-कौन जा रहे हैं?"

"अभी तक अठारह नाम आ चुके हैं। पच्चीस नाम हमको चाहिएँ। हमारा विचार है कि पच्चीस यात्री होने पर एक फर्स्ट क्लास कैरेज रिजर्व हो जावेगी। पूरी कैरेज रिजर्व करने से हम उसको स्टेशन पर खड़ी करवा सकेंगे और जिस भी गाड़ी के साथ चाहेंगे, लगवा सकेंगे।"

"उन अठारह में कौन-कौन हैं?"

सुशीलकुमार ने नाम पढ़कर सुनाये। इनमें किसी लड़की का नाम नहीं था। इस पर नीलमणि ने कहा, "मैं शायद नहीं जा सकूँगी।"

"ज़रूर चलिये, मिस नीला! हमारी यूनियन ने यह निश्चय किया है कि जो भी लड़की चलेगी, उसको खर्च में पच्चीस प्रतिशत् रियायत दी जायगी।"

"क्यों?"

"पढ़ने वाली लड़कियों में देश-भ्रमण के लिए उत्साह भरने के लिए। लड़कों में इसकी आवश्यकता नहीं समझी गई। वे तो पहले ही बहुत घुमक्कड़ हैं।"

"इस पर भी अभी कोई लड़की तैयार नहीं हुई?"

"मैं अभी मिस सुभद्रा से मिला हूँ। वे कहती हैं कि यदि कोई अन्य लड़की तैयार हो जायगी तो वे भी चलेंगी।"

"बात तो वे ठीक कहती हैं।"

"तो क्या, आप भी तब ही निर्णय करेंगी ?"

नीला हाँ कहने का विचार कर रही थी, परन्तु चुप थी। इस पर हरभजन सिंह ने कहा, "पर लड़कों की संगत में क्या दोष है ?"

सुशीलकुमार हँस पड़ा। हरभजन सिंह मुस्कराते हुए नीला के मुख पर देखता रहा। नीला ने सुशीलकुमार से पूछा, "क्या यह प्रश्न आपने मिस सुभद्रा से भी किया था ?"

"हाँ, परन्तु उसने उत्तर मे कह दिया था, 'पसन्द अपनी-अपनी होती है।'"

इस पर तीनों हँसने लगे। नीला ने हँसते हुए कहा, "मेरा कहना तो यह है कि लडकियों की सगत लड़कों से अधिक सुखकारक होती है। पुरुष एक हिंसक प्राणी है। स्त्रियों ने इनको गृह्यक अर्थात् डुमैस्टिकेट करने का यत्न किया है और कुछ अशों मे सफलता भी प्राप्त की है। इस पर भी अभी इनमे जगलीपन बहुत मात्रा में विद्यमान है।"

"कुछ भी हो," सुशीलकुमार ने कहा, "यदि आप चले तो हम मे से कुछ रीछों की नकेल तो आपके हाथ में दी ही जा सकेगी।"

"अठारह मेरे मान के नही। इस कारण देखना चाहती हूँ कि कितनी लडकियाँ चल रही है।"

"आप अपना नाम अस्थायी रूप में दे दीजिए। मै आशा करता हूँ कि शेष सात स्थान लडकियों से भर जायँगे।"

"क्या खर्चा बैठेगा।"

"पूर्ण भ्रमण का रेल का भाड़ा छः सौ रुपया। जिसमे से पचास प्रतिशत रेल-विभाग विद्यार्थियों के नाते रियायत देगा। अथात् तीन सौ रुपया जाने वाले को देना पड़ेगा। पाँच रुपया नित्य के हिसाब से रोटी इत्यादि के लिए। इस प्रकार अधिक-से-अधिक एक व्यक्ति का पाँच सौ रुपया, जिसमे से यूनियन आपको सवा सौ रुपया देगी।"

"इतने के लिए तो घर वालों से भी पूछना पडेगा।"

अब हरभजन सिंह बोल पड़ा, "पूछने की क्या जरूरत है। आपका

रेलभाड़ा तो मै ही दे दूँगा।"

"क्यो ?" नीलमणि ने माथे पर त्योरी चढाकर पूछा।

"आपको एक रीछ के सिधाने की मजदूरी में।"

पहले तो इस व्यग को नीला और सुशीलकुमार नहीं समझे। परन्तु जब समझे तो खूब हँसे। नीला ने कहा, "आई डिक्लाईन टु टेक दि चार्ज।" (मैं इस उत्तरदायित्व को अस्वीकार करती हूँ।)

इस पर वे फिर हँसने लगे। अब हरभजन सिह ने फिर पूछा, "तो मेरा चार्ज कौन लेगा ?"

"कोई ले लेगा।"

यह पहला अवसर था जब हरभजन सिह ने नीला से सकेत-मात्र मे विवाह के लिए कहा था। बात यहीं समाप्त हो गई।

इस भ्रमण मे हरभजन सिह का सदैव यत्न रहा कि वह नीला को अपने समीप खींचे, परन्तु नीला का यत्न यह था कि किसी के मन मे यह सन्देह न हो सके कि वह हरभजन सिह को किसी भी प्रकार उपमा देती है।

भ्रमण मे ही हरभजन सिह यह समझने लगा था कि उसने नीला को अपने समीप कर लिया है। एक दिन जब वे ताजमहल के एक लान में बैठे चाय की प्रतीक्षा कर रहे थे, तो हरभजन सिह ने मिस्टर भट्टाचार्य से पूछा, "आपको नीला के व्यवहार मे कुछ विशेषता प्रतीत होती है ?"

सुशीलकुमार ने कहा, "हरभजन। नीला के व्यवहार मे तो कुछ बात समझ आती नहीं, परन्तु तुम्हारे विषय मे सब का यह विचार है कि तुम उस पर डोरे डाल रहे हो। प्रोफैसर भाटिया भी उस दिन कह रहे थे कि तुम्हारा उसके आगे-पीछे इस प्रकार नाचना हास्यास्पद प्रतीत होता है। वे कहते थे कि नीला ने अभी तक तुम्हारे मुख पर चपत नहीं लगाई, यही आश्चर्य करने की बात है।"

भाटिया का यह कथन एक लड़की सुभद्रा को भी पता चल गया। उसने नीला से इसका उल्लेख कर दिया। नीला हँस पड़ी और बोली, "प्रोफैसर साहब मेरे चरित्र का बहुत ही घटिया अनुमान लगाते है। यदि

में इस प्रकार अपनी ओर देखने वालों और अपनी प्रशंसा करने वालों पर पिल पड़ूँ तो मैं पागल हो जाऊँ। कोई अपने मुख से कुछ कहे, मेरा क्या बिगड़ता है?"

"पर एक बात है," सुभद्रा ने कहा, "तुम्हारे चुप रहने से सब साथियों के मन मे भ्रम उत्पन्न हो रहा है कि तुम हरभजन सिंह को पसन्द करती हो और यह पसन्द विवाह करा कर ही रहेगी।"

"मैंने इस दिशा में अभी तक विचार नहीं किया। हरभजन सिंह क्या और कोई अन्य युवक क्या, मैंने विवाह की दृष्टि से कभी किसी की ओर देखा ही नहीं।"

सुभद्रा ने यह बात अन्य लड़कियों से, जो भ्रमण पर साथ आई हुई थीं, कह दी और धीरे-धीरे यह बात हरभजन सिंह के कानों तक भी पहुँच गई।

यात्री आगरा से दिल्ली, दिल्ली से अमृतसर, अमृतसर से शिमला और मसूरी जा पहुँचे। मसूरी का वातावरण ही कुछ ऐसा है कि वहाँ प्रेम की बातें करने को मन चाहता है। हरभजन सिंह भी अपने मन की बात कहे बिना नहीं रह सका। वे माल पर घूम रहे थे। हरभजन सिंह ने यत्न कर नीलमणि से एकान्त में बात करने का अवसर निकाल लिया। जब वे अन्य साथियों से कुछ दूर हो गए तो उसने कहा, "नीला! सुभद्रा अपनी एक सहेली से कह रही थी कि तुमने अभी तक किसी भी युवक को विवाह करने की दृष्टि से नहीं देखा। इससे तुम्हारे मन में स्थान खाली देख, मैं चाहता हूँ कि उसमें अपने लिए स्थान बनाने का यत्न करूँ। क्या विचार है तुम्हारा?"

"मुझको अभी इन बातों पर विचार करने की आवश्यकता अनुभव नहीं हुई। न ही इस प्रकार की व्यर्थ की बातों के लिए मेरे पास समय है।"

"तो क्या करती रहती हो, जो तुम्हारे पास जीवन की सबसे आवश्यक बात के लिए भी समय नहीं है?"

"तो आप जानते नहीं ? मैं मैडिकल कॉलेज की फिफ्थ ईयर मे पढती हूँ। यहाँ से पास करने के पश्चात् छः मास के लिए अस्पताल में अभ्यास के लिए काम करना होगा। पश्चात् मुझको अपना काम जमाना है। जम जाने के पश्चात् ही तो विवाह की बात सामने आ सकेगी।"

"ठीक है, पर मैं भी तो इस सिलसिले में से गुजरने वाला हूँ। दोनों साथ-साथ चल सकें तो मजिल पर सुगमता से पहुँच जायँगे।"

"साथ-साथ चलने में कोई हानि नहीं है। पर यह विवाह की सूचक नहीं हो सकती। इस सफर में भी तो साथ-साथ चलने के लिए कई बातें विचारणीय हैं। वे समय पर ही सोची जा सकती हैं।"

"तुम सोचती रहो। मैं तुम्हारे मन में बैठने का यत्न करता रहूँगा। मेरे यत्न करने पर तुमको आपत्ति नहीं होनी चाहिए।"

'जब तक यत्न मेरी स्वतन्त्रता में बाधक नहीं होता, तब तक मुझको क्या आपत्ति हो सकती है। हाँ यदि आपके यत्न उसी प्रकार चलते रहे, जैसे इस भ्रमण में चलते रहे हैं, तो आप मेरे हृदय में अनुकूल अवस्था उत्पन्न करने के स्थान प्रतिकूल प्रतिक्रिया ही उत्पन्न कर लेंगे।"

"क्यों, मैंने कौन सी ऐसी बात की है, जिसकी तुम्हारे मन में प्रतिकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई है ?"

"इस विषय में यदि आप डॉक्टर भाटिया से बातचीत कर लें तो आपके ज्ञान मे वृद्धि होगी।"

"तुम्हारी उनसे बात हुई है क्या ?"

"नहीं। इस पर भी मैं जानती हूँ कि वे आपके व्यवहार से सन्तुष्ट नहीं हैं।"

हरभजन सिह इस गोरख-धन्धे से बहुत परेशान हुआ। जब देहरा-दून से यात्री लखनऊ के लिए रवाना हुए तो हरभजन सिंह ने डॉक्टर भाटिया के डिब्बे मे जगह ले ली। मार्ग में उसने डॉक्टर भाटिया से बात करने का अवसर निकाल लिया।

मसूरी पहुँचने तक तो वह यही समझता रहा था कि वह नीला के

बहुत समीप हो गया है, परन्तु जब नीलमणि ने उसको डॉक्टर साहब से बात करने के लिए कहा तो उसको गड़बड़ का सन्देह हो गया। उसने उनके समीप बैठकर पूछा, "डॉक्टर साहब! क्या आप मेरे नीला से व्यवहार के सम्बन्ध मे बहुत नाराज है?"

"हाँ, सख्त नाराज हूँ।"

"क्यो? क्या मै जान सकता हूँ कि मैने क्या किया है?"

"मै सब बाते तुमसे नहीं कह सकता। मैं तुमको यह बताना चाहता हूँ कि मै भी तुम्हारी आयु का रह चुका हूँ और तुम्हारी भाँति मूर्खता की बाते कर चुका हूँ। क्या तुम सुनना चाहते हो कि एक दिन लंदन हस्पताल मे मेरे साथ क्या हुआ था?

"मेरी ड्यूटी, जब भी रात के समय होती थी, एक 'केट ईडन' के नाम की नर्स की ड्यूटी भी रात की होती थी और कुछ ऐसी घटना घटती रहती कि हम दोनो एक ही वार्ड में काम करते थे। मिस ईडन की आदत थी कि रात के दो बजे वह एक प्याला काफी पीती थी। वह प्रायः मुझको भी एक प्याला बना देती और इसको मैं उसकी ओर प्रेम करने के लिए निमन्त्रण समझने लगा। मै उससे बहुत ही हिल-मिलकर बात करने लगा। उसके छोटे-मोटे काम भी कर देता। कभी बाजार से सामान भी ला देता।

"एक दिन उसने काफी का प्याला दिया, तो मेरे मुख से निकल गया, 'ओ हैवनली कप! हौ फारचूनेट आई एम!'

"इस पर उसने पूछा, 'मिस्टर भाटिया! इस काफी के प्याले मे कौन-सी स्वर्गीय बात आ गई?'

"मैने उत्तर दिया, 'दि टच आफ यूअर हैंड।'

'इन हाथो मे क्या विशेषता है?'

'ये नरम हैं, मुलायम है, सुवासित है और सुन्दर है। जब काफी मेरे होटों से लगती है, तो मै अनुभव करता हूँ कि मेरे होटों का इन हाथों से सम्बन्ध बन गया है और जब इन हाथो से बनी काफी तुम्हारे होटो से

लगती है तो मैं समझता हूँ कि मेरे होठों का सम्बन्ध उनसे बन गया है ।'

"मेरे मुख से एक भी शब्द और नहीं निकल सका और ईडन के दाहिने हाथ की चपत की छाप मेरी गाल पर लगी। मेरे प्याले की काफी मेरे कोट और कमीज पर गिर गई और मैं भौचक्का हो उसका मुख देखता रह गया। उसने अपने प्याले की काफी नाली में फेंक दी। पश्चात् हमने एक-दूसरे का मुख नहीं देखा।

"हरभजन सिंह ! तुम जो-कुछ नीलमणि के विषय में कहते रहते हो, वह मेरे मिस ईडन के इस कहने से कहीं अधिक है। यह हिन्दुस्तान है और वह हिन्दू लड़की है, नहीं तो अब तक तुम्हारी मुरम्मत हो चुकी होती।"

हरभजन सिंह की आशाओं पर पानी फिर गया। इस पर भी उसने प्रयत्न नहीं छोड़ा। नीला के व्यवहार में कोई अन्तर नहीं पड़ा। वह पूर्ववत् उसकी बातों को सुनती, मुस्कराती और बात बदल देती।

५

समय व्यतीत होता गया। इस काल में माधुरी के भाई प्रबोध की दृष्टि भी नीला पर पड़ी। वह उस पर मोहित हो गया और उसको अपनी ओर आकर्षित करने का यत्न करने लगा। यूँ तो नीलमणि उनके घर में बाल्यकाल से आती जाती थी, परन्तु प्रबोध को वह पत्नी बनने योग्य तब समझ आई, जब वह मैडिकल कॉलेज की फिफ्थ ईयर में पढती थी।

होली के उत्सव पर वह उनके घर आई हुई थी और रंग, रोली परिवार के लोग परस्पर फेंक रहे थे। प्रबोध कलकत्ता के इञ्जीनियरिंग कॉलेज में पढता था और छुट्टी पर घर आया हुआ था। जब नीला सर्वथा श्वेत परिधान में आई तो वह उसकी रूप-राशि देख उस पर मुग्ध हो गया।

प्रबोध उस पर रंग फेंकने का यत्न करने लगा। अवसर पा उसने पिचकारी से उसकी साड़ी को रंग दिया और कहा, "अब ठीक लगती हो। पहले तो "

"पहले क्या थी ?"

"स्वर्गीय अप्सरा। अब भूमि पर विचरने वाली सुन्दरी।"

नीला का मुख लाल हो गया, परन्तु वह रोली की लाली मे, जो प्रबोध ने उसके मुख पर मल दी थी, छुप गया।

नीला ने अपना बदला लिया। वह भी अवसर पाकर उसके मुख पर रंग मल आई और बोली, "अब ठीक बन्दर मालूम होते हो।"

"मै बन्दर हूँ तो लो तुमको चुड़ैल बनाकर छोड़ूँगा।"

आँख बचा वह कमरे में गया और अपने छोटे भाई नारायण की दवात मे से स्याही ले हाथों पर मल आया। माधुरी और नीला दोनो रंग से तोबडतूर उधर को पीठ किये खडी थीं, जिधर से प्रबोध आँगन मे आया था। पूर्व इसके कि उसकी माँ उसके हाथों पर काली स्याही देख उसको मना करे, उसने जल्दी मे रग मुख पर मल ही दिया, परन्तु जल्दी में वह रंग नीला के स्थान माधुरी के मुख पर मला गया।

नीला समझ तो गई कि यह उसको चुड़ैल बनाने का प्रयास था, जो माधुरी पर प्रयोग हो गया है। इस पर भी वह हँस पडी।

माधुरी को काले-काले हाथ उसके मुख की ओर आते दिखाई दिये थे और पूर्व इसके कि वह बच सकती उसके मुख पर कालख पोत दी गई। माधुरी ने घूमकर देखा। यह प्रबोध था। प्रबोध को भी पता चल गया कि यह नीला नहीं थी। एक क्षण तक प्रबोध को शोक हुआ और माधुरी को क्रोध, परन्तु तुरन्त ही दोनों हँसने लगे। माधुरी ने कहा, "बहन के लिए क्या यह दवात की स्याही रह गई थी? बडे कंजूस हो भैया!"

नीला हँसती हुई भाग गई थी, जैसे सिंह से हिरनी भागती है। प्रबोध के पिता ने देखा और माधुरी के कटाक्ष को सुना, तो नारायण को बुलाकर कहा, "नारायण! जाओ। तुम भी हाथ काले कर आओ।"

वह समझा नहीं। इस पर प्रभुदयाल ने कहा, "जाओ तो। बड़ा मजा आवेगा।"

जब वह हाथ रंगकर आया तो पिता ने उसको एक ओर ले जाकर

कहा, "देखो मैं प्रबोध को अपने पास बुलाकर उसके हाथ पकड़ लूँगा और तुम पीछे से यह उसके मुख पर मल देना। दीदी का बदला निकल जायगा।"

नारायण को यह बात बहुत पसन्द आई। प्रभुदयाल ने प्रबोध को समीप बुलाकर कहा, "यह दवात की स्याही तो रंग से कहीं मँहगी है और माधुरी तुमको कंजूस कहती है?"

"जाट क्या जाने लवंग का भाव।" प्रबोध ने पिता को अपनी हिमायत करते हुए देख प्रोत्साहित हो कहा।

इतने में नारायण कमरे से निकल आया। प्रभुदयाल ने प्रबोध को कहा, "हाथ दिखाओ।"

प्रबोध ने हँसते हुए हाथ दिखाये तो प्रभुदयाल ने उसके हाथों को पकड़ लिया और अवसर देख नारायण ने भैया के मुख पर स्याही मल दी।

सब हँसने लगे। नीला, जो छुपकर देख रही थी, अब वहाँ आ गई और पूछने लगी, "चुड़ैल कौन बना?"

"प्रबोध! अब हाथ धो लो। यह काला रंग बहुत मँहगा है।" प्रभुदयाल ने कहा।

उस दिन सायंकाल, जब पूरी और हलुआ खाया जा रहा था, प्रबोध, जो नीला के समीप बैठा था, कहने लगा, "वास्तव में तुम लाल रंग में बहुत सुन्दर प्रतीत होती थीं।"

"वैसे तो आप भी बहुत भले प्रतीत होते थे। मुझको बन्दर न कहकर हनुमानजी कहना चाहिए था।"

"तुम्हारा इष्टदेव न?" सब जानते थे कि वह हनुमानजी की उपासिका है। प्रबोध उसकी हँसी उड़ाने के लिए कहा करता था, "मिट्टी के लोंदे पर फूल-पत्र चढ़ाने से क्या मिलता है तुमको?"

आज नीला ने स्मरण कर कह दिया था, "नहीं वे तो मिट्टी के लोंदे हैं। आपको वह कहकर मैं भैया का अपमान नहीं कर सकती। आप तो

चलते-फिरते सक्रिय हनुमानजी बन गए थे ।"

"तुम्हारे लिए तो मैं वह भी बन जाना मान जाऊंगा ।"

"नही प्रबोध भैया । वे बन गए तो भाभी नाराज हो जायेंगी ।"

"तो वह भी तुम ही बन जाना । नाराज होने को कोई नहीं होगा ।"

"मिट्टी के लोंदे से कौन विवाह करेगा ?"

"तो पूजा ही कर लेना ।"

"तब तो आपको किसी सार्वजनिक मन्दिर मे स्थापित करना पडेगा । मट्टी के देवता तो सरे-बाजार ही स्थापित किये जाते हैं ।"

नीला के माता-पिता और उनकी छोटी बहन सरिता भी आमन्त्रित थे । राधाकृष्ण और प्रभुदयाल पास-पास बैठे थे । राधाकृष्ण कह रहा था, "नीला के विवाह के लिए बिरादरी के लोग भाग दौड मचाने लगे है ।"

"ठीक है । कहीं बात निश्चय कर रखनी चाहिये ।"

नीला अभी नहीं मानती । इससे जब भी बात की है वह कहती है, "जब आपने पढा-लिखाकर समझदार बनाया है तो उस समझ बूझ के प्रयोग का अवसर दीजिए । मै आपसे अपनी पसन्द के विषय मे राय कर लूँगी ।"

"वह ठीक ही कहती है । यूँ तो वह इतनी अच्छी है कि मै उसको अपने ही घर मे ले आने की इच्छा करता हूँ परन्तु समय बदल गया है और अग्रेजो की भाति माता पिताओ को भी अपने बच्चो को चुपचाप स्वराज्य दे देना चाहिए । कहीं फ्रामीसियो की तरह इण्डोचाइना मे डट जाने की भाति हम भी डटे रहे तो ये अधिकारी लोग गोला बन्दूक लेकर हमे निकाल देंगे ।"

दोनो हँस पडे । प्रभुदयाल ने नीला और प्रबोध की ओर सकेत कर कहा, "यह देखो कम्यूनिस्ट रशिया की भाति प्रबोध इण्डोचाइना को आपके विरुद्ध भडका रहा है । भला इसी बात मे है कि चुपचाप रिटायर हो पर्दे के पीछे छिप जायें ।"

दोनो हँसने लगे । कुछ विचारकर राधाकृष्ण ने कहा, "नीला

इतनी मूर्ख प्रतीत नहीं होती कि किसी कम्यूनिस्ट के चक्कर में फँस जाये।"

"देखते जाइये, भाई साहब!"

प्रबोध नीला से कह रहा था, "सार्वजनिक मन्दिर में बैठाओ अथवा मन-मन्दिर मे, मुझको किसी प्रकार की आपत्ति नहीं होगी। शर्त यह है कि होना मन्दिर चाहिए।"

"बहुत ठीक।" नीला ने मुस्कराते हुए कहा, "परन्तु जब आपके साथी मन्दिर मे पूजा करने वाले को मूर्ख और रूढिवादी का नाम देते हैं तो मन्दिर मे बैठे पूजा कराने वाले को क्या कहेगे?"

"धूर्त।"

"तब तो आपकी किसी मन्दिर मे स्थापना नहीं होनी चाहिये। भैया प्रबोध को कोई धूर्त कहे, यह मुझसे सहन नहीं हो सकता।"

इस कथन ने बात समाप्त कर दी। बार बार भैया शब्द के प्रयोग ने नीला के विचारो का परिचय दे दिया। इस पर भी उसने बात को अन्तिम स्तर तक ले जाने के लिए कहा, "नीला, मै तुम्हारे लिये अपने मन मे एक विचार बना बैठा हूँ। तुमको अपना जीवन-साथी बनाना चाहता हूँ। मैं कल कलकत्ता लौट रहा हूँ और मेरे पास समय नही कि गोल मोल बातो के जाल मे फँसा रहूँ। बताओ, क्या मै अपने माता-पिता को कह दूँ कि तुमने इस जीवन यात्रा मे मेरा साथ देना स्वीकार कर लिया है?"

"नहीं भैया। यह मत कहना। मै अभी इस विषय मे कुछ भी नहीं कह सकती। न हाँ, न ना। मेरा मन अभी इस विषय मे विचार करने के लिए भी तैयार नहीं है।"

"तो तुम न तो नहीं कर रही न?"

"अब यह तुम समझ लो। मुझको डॉक्टर बनना है। इसमे अभी एक वर्ष शेष है। पश्चात् मुझको अपनी प्रैक्टिस जमानी है। तब ही घर-गृहस्थी के लिए समय आवेगा।"

"मै तब तक प्रतीक्षा कर सकता हूँ।"

"तब मै क्या हो जाऊंगी, कह नहीं सकती। हाँ इस समय तो मैं तुम्हारा साथ देने के न तो योग्य हूँ न ही अभिलाषी हूँ।"

"यह अभिलाषा की बात कहाँ से आ गई ? अभी तो तुम कह रही थी कि तुम कुछ नहीं जानती।"

"देखिये। इतना तो जानती हूँ कि मै आस्तिक हूँ, आप नास्तिक है। मै भाग्यफल को मानने वाली हूँ, आप केवल पुरुषार्थ को ही मानते हैं। मै स्वतन्त्र जीवन और व्यवसाय में विश्वास रखती हूँ, आप समाजवादी है अर्थात् प्रत्येक बात मे व्यक्ति को समाज के अधीन करने के पक्ष मे हैं। भला हम दोनो का साथ निभेगा कैसे ?"

"वैसे ही जैसे हमारे चाचा सिख हैं और पिता सहजधारी। अथवा वैसे ही जैसे आपके पिता शैव है और तुम हनुमान् की उपासिका।"

"मै चाचा जी के सिख होने और पिताजी के हिन्दू होने के विषय में तो कह नहीं सकती। जब ये दोनो इकट्ठे रहते थे, तब सिखिजम मे राजनीति और धर्मान्धता अभी घुली नहीं थी, परन्तु अब वे दोनो इकट्ठे रह सकेंगे अथवा नहीं, कह नहीं सकती।

"रहा मेरे और पिता जी के उपास्य देवताओं मे अन्तर। इस अन्तर के कारण हम एक-दूसरे के व्यवहार मे बाधक नहीं होते। पिताजी ने मुझको कभी नहीं कहा कि मै मिट्टी के लोंदे पर पुष्प-पत्र चढाती हूँ। न ही मैंने उनको कभी कहा है कि वे एक पत्थर के टुकड़े पर दूध चढाते हैं। इसके सर्वथा विपरीत आप अभी मेरे जीवन साथी न होने पर भी मेरे इष्टदेव को जली-कटी सुनाते रहते है।"

"मैं समझता हूँ कि, तुम्हारे मानसिक विकास मे, यह एक प्रक्रम है। तुम इस पर बैठी नहीं रहोगी। थोड़ा आश्रय देने से तुम आगे निकल जाओगी।"

"ठीक है। समय आने दीजिये और जब आगे निकल आऊँगी, तब जीवन भर साथ देने की बात विचार कर लूँगी।"

प्रबोध नीलमणि से किसी प्रकार का वचन लिए बिना ही कलकत्ता चला गया। एक प्रकार से वह निराश ही था। इस पर भी जब-जब वह लखनऊ आया, नीला उससे स्नेह भाव ही प्रकट करती रही।

६

हरभजन सिंह को यह ज्ञात नहीं था कि नीला ने प्रबोध को भी स्वीकार नहीं किया और वह जैसे उसके साथ मीठा बोलती है, वैसे ही प्रबोध तथा अन्य परिचितों से भी मुस्कराकर बात करती है। कॉलेज में तो वह उस पर छाया रहता था। इस कारण कॉलेज के विद्यार्थी यह अनुभव करते थे कि उनका विवाह होगा ही। इससे अन्य सहपाठी और परिचित नीला से दूर-दूर ही रहते थे। वे एक पंजाबी युवक से झगड़ा करना उचित नहीं समझते थे।

अन्तिम परीक्षा हुई और नीला इत्यादि सब उत्तीर्ण हो गए। नीला की ड्यूटी असिस्टैन्ट हौस सर्जन के रूप में हस्पताल मे लग गई। डॉक्टर भाटिया के साथ वह चिकित्सा कार्य का अभ्यास करने लगी थी। उसके साथ सुशील भट्टाचार्य की भी ड्यूटी लगी हुई थी, हरभजन सिंह की ड्यूटी एक अन्य डॉक्टर रशीद के साथ लगी हुई थी।

असिस्टैन्टों को दिन मे दो बार हस्पताल जाना पड़ता था। कुछ ऐसा संयोग हुआ कि नीला और सुशील दोनों एक ही समय जाते थे। हरभजन सिंह का समय दूसरा था। इस कारण उसको नीला से मिलने का कम अवसर मिलता था। कई दिनों के पश्चात् हरभजन सिंह समय निकालकर उस समय आया, जब नीला और सुशीलकुमार अपना कार्य समाप्त कर घर को जाने वाले थे।

"हैलो, मिस्टर सिंह!" भट्टाचार्य ने हरभजन सिंह का अभिवादन करते हुए कहा, "आजकल कहाँ रहते हैं आप?"

"यहीं लखनऊ में। यहाँ हस्पताल मे भी आता हूँ, परन्तु मेरे आने का समय ऐसा है कि दर्शन होते ही नहीं।"

नीला ने चुपचाप हाथ जोड़ नमस्कार की थी और तीनों हस्पताल से बाहर को चल पडे थे। तीनों के पास अपनी अपनी बाइसिकलें थीं। भट्टाचार्य ने हरभजन सिंह से सहानुभूति प्रकट करते हुए कह दिया, "यदि आप चाहें तो मैं ड्यूटी बदल सकता हूँ।"

"क्यों, आपको यह समय ठीक नहीं बैठता क्या ?"

"ठीक तो है। नीला देवी भी बहुत सहयोग देती हैं और डॉक्टर भाटिया भी बहुत पसन्द करते हैं। इस पर भी यदि आप चाहें तो आपकी और नीला देवी की सुविधा के लिए यह त्याग कर सकता हूँ।"

नीला हँस पडी और पूर्व इसके कि हरभजन सिंह कुछ कहे, पूछने लगी, "पर मिस्टर भट्टाचार्य! आपको किसने कहा है कि इससे मुझको सुविधा होगी ?"

"मेरा विचार है। कदाचित् हम सब सहपाठियों का भी यही विचार है कि आप दोनों एक ही समय और स्थान पर कार्य करना पसन्द करेंगे। हमारे परिवार की यह रीति है कि हम स्त्री-वर्ग के मान और सुविधा के लिए तैयार रहते हैं।"

"आप बहुत अच्छे हैं मिस्टर भट्टाचार्य ! परन्तु यह आपको भ्रम हो गया है कि मैं मिस्टर सिंह के साथ काम करने को आपके साथ काम करने पर उपमा देती हूँ।"

"ऐसा हम सब का विचार है।'

"मैं आप सबको विश्वास दिलाती हूँ कि यह आप सब का भ्रम-मात्र ही है। मिस्टर सिंह से मिलकर मुझको प्रसन्नता होती है। इनके कुछ गुण हैं, जिनको मैं पसन्द करती हूँ, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि आपकी संगत मुझको कम पसन्द है। आपके भी गुण हैं यद्यपि वे मिस्टर सिंह के गुणों से भिन्न हैं।"

दोनों हस्पताल के बाहर पहुँच गये थे। मिस्टर भट्टाचार्य का मार्ग दूसरा था। इस कारण वह यह कह, 'थैन्क्स फार दि डिस-इल्युजनमैन्ट' (आपके भ्रम-निवारण के लिए धन्यवाद) बाइसिकल पर सवार

हो अपने घर को चला गया। जब सुशील कुमार कुछ दूर निकल गया तो हरभजन सिंह ने कहा, "नीला ! यह तुमने आभार से बचने के लिए कहा है अथवा सत्य तुम मुझमें और भट्टाचार्य मे कुछ अन्तर नहीं मानतीं ?"

"यह एक अति विकट प्रश्न है। अन्तर तो है, परन्तु उस अन्तर के लिए मैं एक को दूसरे पर उपमा नहीं दे सकती। अपने-अपने स्थान पर आप सब भले लोग हैं और मैं सब का बराबर आदर करती हूँ।"

"मैं तो आज तुम से एक अत्यावश्यक विषय पर बातचीत करने आया हूँ।"

"हाँ कहिये।"

"हस्पताल में काम करते हुए तीन मास हो गए हैं। अगले तीन मास के पश्चात् हमको अपना अपना क्लिनिक चलाना होगा। मैं चाहता था कि हम ऐसे स्थान पर क्लिनिक लें, जो सर्वथा साथ-साथ हों, जिससे हम अपने व्यवसाय में एक दूसरे की सहायता भली भाँति कर सकें।"

"विचार तो सुन्दर है, परन्तु मैंने अभी प्राइवेट क्लिनिक खोलने का निर्णय नहीं किया।"

"तो कर लो। जब डाक्टरी पढ़ी है तो काम तो करना ही है।"

"यह आवश्यक नहीं। और फिर मैं किसी हस्पताल में भी काम पा सकती हूँ।"

"क्या तुमको किसी हस्पताल में काम मिलने का विश्वास है ? मैं समझता हूँ कि प्राइवेट काम करने लिए सदा तैयार रहना चाहिए। आजकल दुकान मिलनी अति कठिन है और अभी से यत्न आरम्भ करेंगे तो सम्भव है कि तीन मास तक दुकान मिल सके।"

"मैं व्यर्थ की चिन्ता करनी नहीं चाहती। आपको तो किंचित् मात्र भी इस विषय मे चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। आपके पिता जी के बीसियों मकान व दुकानें हैं। कोई-न-कोई तो खाली होती ही रहती होगी। फिर वे आपके लिए खाली करवा भी सकते हैं।"

"खाली तो होती ही रहती हैं पर मैं चाहता हूँ कि अमीनुद्दौला में कहीं मिल सकती तो ठीक है।"

"वहाँ ही क्यों ? वह तो बहुत भीड़-भाड़ वाला स्थान है। मैं तो उस स्थान को कभी पसन्द नहीं करूँगी।"

"वहाँ ग्राहक खूब आवेंगे।"

"मैं ग्राहकों की संख्या के लिए इतनी चिन्तित नहीं, जितनी आने वाले ग्राहकों की सुख-सुविधा के लिए। स्थान ऐसा होना चाहिए, जहाँ ग्राहकों का ताँगा-मोटर सुगमता से पहुँच सके और खड़ा रह सके। क्लिनिक के अन्दर भी शान्त वातावरण होना चाहिए, जिससे वे अपने कष्ट का निश्चिन्त होकर वर्णन कर सकें तथा हम दत्त-चित्त हो सुन सकें।"

"तुम तो एक-दो ग्राहकों में ही सन्तोष करना चाहती हो। मैं चाहता हूँ कि प्रात. से सायं तक भीड़ लगी रहे।"

"पसन्द अपनी-अपनी है।"

"देखिए आप मेरे प्रस्ताव पर विचार करियेगा। यदि मेरी राय से आपकी राय मिल गई तो मैं इस विषय में बहुत-कुछ कर सकता हूँ।"

"धन्यवाद। मैं विचार करूँगी। यदि मेरे विचार बदल गए तो आपको बता दूँगी।"

"पर यह निर्णय शीघ्र करना चाहिए।"

"यत्न करूँगी।"

: ७ .

नीलमणि का सुशीलकुमार को कहना कि उसका यह विचार कि वह हरभजन सिंह के साथ काम करने को अच्छा समझेगी, एक भ्रम है, उसको कुछ विचित्र प्रतीत हुआ था। उसको दो वर्ष पूर्व की बात स्मरण हो आई, जब वे भारत-भ्रमण पर गये हुए थे। तब उसने अनुभव किया था कि नीला हरभजन सिंह की ओर आकर्षित नहीं, प्रत्युत हरभजन सिंह

का व्यवहार ही भ्रम उत्पन्न करने वाला था। आज फिर उसको यही समझ आया।

सुशीलकुमार इतनी तो बुद्धि रखता था कि नीलमणि एक सुन्दर लड़की है। भ्रमण के दिनो मे उसको यह भी पता चला था कि वह अति सुशील है। इन दिनों हस्पताल में उसके साथ काम करने पर, उसकी एक बात और विदित हुई थी कि उसकी विचार-शक्ति अति सन्तुलित है। रोगी को देखती हो अथवा किसी से बातचीत करती हो, वह अपनी बात बहुत नाप-तोलकर कहती है।

इन सब बातों के ज्ञान के साथ आज उसको यह पता चला कि उसका और उसके साथियों का विचार था कि उसका हरभजन सिंह से विवाह होगा, भ्रम है।

उसके अपने मन में उससे विवाह का कभी विचार उत्पन्न नहीं हुआ था। वह एक शिष्ट बगाली परिवार का लड़का था। उसका पिता उत्तर प्रदेश में चीफ इन्जीनियर था। वेतन बहुत अच्छा था और ऊपर से भी अच्छी आय होती थी। राज्य में तथा राज्याधिकारियों में मिस्टर नीलरत्न भट्टाचार्य का एक प्रतिष्ठित स्थान था।

लखनऊ के बगाली समुदाय का भट्टाचार्य के परिवार से बहुत अच्छा सम्बन्ध था और आरम्भ से ही सुशीलकुमार के मस्तिष्क में यह बात समा चुकी थी कि अच्छी-से अच्छी बगाली लड़की उसको मिल सकती है। अतएव बगाली समुदाय से बाहर उसका ध्यान इस विषय में कभी गया ही नहीं था।

सुशील के परीक्षा पास करने के पश्चात् तो भट्टाचार्य के परिवार को और विशेष रूप मे सुशीलकुमार को उन सब परिवारों से निमन्त्रण आ रहे थे, जिनमे विवाह योग्य लड़कियाँ थीं। कई लड़कियाँ उससे घनिष्ठता का सम्बन्ध उत्पन्न करने का यत्न भी कर रही थीं। वह अपने मन में उनके गुण अवगुणों का अवलोकन भी कर रहा था। इन सब लड़कियों मे एक रेणु मनमोहन सरकार की लड़की बहुत आगे आ चुकी थी।

आज इस बात को जान कि नीलमणि किसी से भी विवाह करने के लिए वचनबद्ध नहीं, उसके मन में बंगाली लड़कियों के साथ इसका भी मुकाबिला होने लगा। इसी विचार मे वह घर जा पहुँचा। उसका पिता रेलवे रोड पर एक कोठी मे रहता था। कोठी के बाहर मनमोहन सरकार की मोटर खड़ी थी। वह समझ गया कि सरकार बाबू के घर से उसके विवाह की चर्चा करने आये हुए है। इस कारण वह अन्तःपुर मे जाने के स्थान बैठक मे आ पहुँचा। वह वहाँ एकान्त में बैठकर नीलमणि के कहने पर मनन करना चाहता था।

मनमोहन सरकार अमीनाबाद पार्क मे बिसाती की दुकान करता था। पिछले युद्ध-काल मे उसने बहुत धन कमाया था और उसके परिवार की स्त्रियाँ जब किसी के घर जाती थीं तो प्राय. सोने से लदी होती थीं। ये गुण सुशील के माता-पिता के लिए बहुत बडे थे। सुशील इनको देख-देखकर ऊब चुका था। अब नीलमणि से मुकाबिला करने पर सरकार बाबू का धनी होना, उसको अवगुण ही प्रतीत हुआ था।

वह बैठक मे पहुँचा तो वहाँ सरकार बाबू को अपने पिता से बातचीत करते देख वह घबराकर द्वार मे से ही वापिस होने लगा। इस समय उसके पिता की नजर उस पर पड गई। नीलरत्न ने सुशील को इस प्रकार लौटते देख बुला लिया,

"सुशील ! इधर आओ।"

विवश वह भीतर गया। पिता ने उसको एक कुरसी पर बैठने को कहा और बताया. "देखो, ये रेणु के विषय में कहने आये है।"

सुशील समझता था कि क्या कहने आए है। इस पर भी उसने पूछा, "रेणु को क्या है बाबा ?"

"रेणु को क्या है ? तो तुम जानते नहीं कि क्या है ? वह सत्रह वर्ष की हो गई है, उसका विवाह होना चाहिए।"

"बस ? मैने समझा कि कोई शारीरिक कष्ट है और किसी डॉक्टर से कहना है। क्षमा करे सरकार बाबू ! आजकल हस्पताल मे काम करने

से मेरे दिमाग मे यही बात भर रही है। हाँ, तो किसी लड़के पर नज़र है सरकार बाबू की ?"

"हाँ," उत्तर सुशील के पिता ने दिया, "एक नीलरत्न भट्टाचार्य के पुत्र सुशीलकुमार एम० बी० बी० एस० पर इनकी दृष्टि गई है। इनका कहना है कि इस डॉक्टर ने रेणु को देखा है और उसको पसन्द किया है। मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ कि क्या सत्य ही उसने इस लडकी को पसन्द किया है ?"

इतना कह दोनों वृद्धजन हँसने लगे। यूँ तो अपने पिता की इस विवेचना पर सुशील भी हँस पडता, परन्तु आज वह इस विषय पर बहुत फूँक-फूँककर पग रख रहा था। इस कारण वह केवल मुस्कराकर ही रह गया।

मनमोहन और नीलरत्न ने समझा कि बड़ों की उपस्थिति में उसका केवल मुस्कराना उनके लिए आदर का सूचक है। वे प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखते रहे।

सुशील ने कुछ विचार कर कहा, "पिता जी! रेणु को सुशील कुमार ने देखा है, पसन्द भी किया है, परन्तु जहाँ तक मैं समझा हूँ उसने उसको विवाह करने के लिए पसन्द नहीं किया।"

"तो क्या उसका अचार डालने के लिए पसन्द किया है ?"

"नहीं पिता जी! वह जानता है कि रेणु गाजर मूली नहीं है। वह लड़की है और लड़कियों का अचार नहीं डाला जाता। परन्तु…… लड़कियों से केवल विवाह ही किया जाता है, ऐसी उसकी धारणा नहीं है। रेणु गाती है, उसका स्वर बहुत ही मधुर है। उसे संगीत का अर्थात् स्वर, ताल, लय, का बहुत अच्छा ज्ञान है। सुशील रेणु का संगीत बहुत पसन्द करता है। अब आपने रेणु के विषय में यह बताया है कि वह विवाह के योग्य है। आपने यह भी बताया है कि सरकार बाबू सुशील कुमार को इस प्रकार सम्मानित करना चाहते हैं। अब वह रेणु को इस दृष्टि से देखकर बतायेगा कि वह विवाह से उत्पन्न उसके प्रति-

त्तरदायित्व को पसन्द करता है अथवा नही।"

"कब तक बतायेगा?"

"यूँ तो आप जब भी कहे कुछ-न-कुछ उत्तर तो वह दे ही सकता , परन्तु वह उत्तर भली-भाति विचार किया हुआ नहीं होगा। पीछे यह त्तर ग़लत भी सिद्ध हो सकता है। आप लोग उसको इस विषय पर इस ग से विचार करने का अवसर दीजिए। उसके मन की भावना आपको था समय विदित हो जावेगी।"

"देखो सुशील! रेणु मुझको बहुत पसन्द है।"

"यह आपकी पसन्द भी विचारणीय सिफारिश है, परन्तु मैं तो यही छूँगा कि आपने उसको लड़की मान कर पसन्द किया है अथवा पतोहू ान कर।"

"कैसी गधो की सी बातें करते हो? क्या लड़की बनाने के लिए भी पसन्द करने की गुंजाइश होती है? वह तो भगवान् जैसी दे, वैसी ही स्वीकार करनी होती है। पतोहू ही तो पसन्द कर ली जाती है।"

"यदि आप आज्ञा देते हैं तो मैं आपकी पसन्द को स्वीकार कर लेता हूँ। यदि आप मेरी प्रार्थना माने तो मैं अपने मन मे निर्णय करने के लिए कुछ समय माँगूँगा।"

पच्चीस वर्ष के युवा पुत्र को इस प्रकार विनीत प्रार्थना करते देख नील-रत्न का मुख बन्द हो गया। उसने कहा, "मैं समझता हूँ कि इसको समय मिलना चाहिए। क्यों सरकार बाबू?"

"जी, ठीक है। इस निश्चय करने मे इनको परस्पर मिलने जुलने का अवसर मिलना चाहिए।"

"वह मैं उत्पन्न कर लूँगा।"

"ठीक है। मुझको भी इसमे सहायता करने दो, सुशील।" सरकार ने कहा।

"हाँ, हाँ, मुझको क्या आपत्ति हो सकती है?"

"तो बताओ। किस दिन हमारे यहाँ चाय पर आओगे?"

"मेरी सायंकाल की ड्यूटी सप्ताह में दो बार होती है। बुद्धवार और शनिवार इन दो दिनों को छोड़कर जब भी आपको सुविधा हो।"

बात तय हो गई। अगले रविवार साय चार बजे का निमन्त्रण सुशील कुमार को मिल गया। जब मनमोहन सरकार और उसकी धर्मपत्नी तथा उनकी लड़की रेणु चले गए तो सुशील कुमार ने अपने पिता से कहा, "बाबा, मैंने रेणु से विवाह के विषय में अभी विचार ही नहीं किया।"

"तो किसी अन्य के विषय में कभी विचार किया है?"

"हाँ बाबा! परन्तु यह विचार कर कि अभी तो मैं कुछ भी नहीं कमाता, मैंने उससे प्रस्ताव नहीं किया। मेरा विचार है कि मुझको अपनी प्रैक्टिस जमा लेनी चाहिए और पीछे विवाह के विषय में बातचीत करनी चाहिए।"

"और यदि तुमको प्रैक्टिस जमाते दस वर्ष लग गए तो? तब तक तो कोई बाज तुम्हारी चिड़िया को उड़ाकर ले जायगा। दूसरे तुम बूढ़े हो जाओगे, तब विवाह कराकर क्या करोगे?

"देखो, मेरा सुझाव यह है कि विवाह पहले कराओ और प्रैक्टिस धीरे-धीरे जमती रहेगी। इतना ध्यान रखना चाहिए कि पत्नी में अनुकूलन शक्ति हो। तुम गरीब हो तो वह गरीब बन कर रह सके। भाग्य से तुम्हारे पास धन आ जावे तो वह धन के भार को सह सके।"

"धन्यवाद बाबा! मैं अब आपके सुझाव के अनुसार ही खोज करूँगा।"

"हाँ, इसी विचार से मैंने रेणु की खोज की है।"

८

परन्तु इसी विचार से सुशील ने रेणु को अस्वीकार दिया। रविवार के दिन सुशील मनमोहन बाबू के घर गया और उसका स्वागत वहाँ बहुत ही सज-धज के साथ किया गया। रेणु भी रेशमी वस्त्र, जिन पर जरी का काम हो रहा था, पहने और भूषणों से लदी-फदी उसकी प्रतीक्षा में बैठी

थी। सुशील का रेणु से पूर्व का परिचय था, इस कारण दोनों जब समीप-समीप बैठे तो परस्पर निस्संकोच भाव से बातें करने लगे। रेणु कुछ तो कपड़ों और भूषणों से लदी होने के कारण और कुछ इस विचार के प्रभाव से कि सुशील उसको पसन्द करने आया है, चञ्चलता अनुभव कर रही थी, परन्तु जब सुशील ने बात आरम्भ कर दी तो उसका भय मिट गया है। सुशील ने पूछा, "रेणु ! यह आज इतनी सज-धज के साथ कहाँ जाने की तैयारी है ?"

"कहीं भी तो नहीं।"

"तो घर के सब भूषण तुमही ने क्यों पहन लिए हैं ?"

"ये सब हमारे घर के नहीं हैं। ये केवल मेरे हैं, इसी कारण मैंने पहने हैं।"

"परन्तु पहले तो तुम घर पर इस प्रकार सजकर नहीं बैठती थीं ?"

"आज कुछ विशेष बात है।"

"मैं आज की विशेषता समझता हूँ, परन्तु ये तुमने स्वयं पहिने हैं या तुम्हारी माता ने पहिनाये हैं ?"

"मैंने स्वयं पहिने हैं। मेरी माता ने तो केवल यह कहा था कि जब मेरा विवाह होगा तो मेरे पिता मुझको दस हजार रुपया देंगे। इतना ही मेरे पति को मिलेगा। यदि मेरे पति कोई कारोबार चलाना चाहेंगे तो वे उसमें भी सहायता देंगे।"

सुशील इतने धन-सम्पद् के प्रदर्शन पर चकित रह गया। उसने मन-ही-मन अनुमान लगाया कि रेणु को विवाहने के लिए उसके पिता पचास हजार तक व्यय करेंगे।

सुशील के मन में इस बात की प्रतिक्रिया उससे सर्वथा भिन्न हुई, जिसका अनुमान रेणु के माता-पिता करते थे। उसको रेणु के माता-पिता सर्वथा फूहड़ प्रतीत हुए। इसके अतिरिक्त रेणु अभी सर्वथा बालिका ही प्रतीत हुई। इस पर उसने अपने भाव रेणु को बता देने उचित समझे। उसने कहा, "बहुत भाग्यशाली होगा तुम्हारा पति। मैं उसको बधाई दूँगा।"

रेणु मुस्कराई और बोली, "इसका अर्थ यह हुआ कि आपको इतना दहेज पसन्द है?"

"नपसन्द किसको हो सकता है! किसी को कुबेर का कोष मिलता हो तो वह इन्कार नहीं कर सकता। इस पर भी विवाह तो कोष के आधार पर नहीं किया जा सकता। यह धन-दौलत बहुत कुछ होने पर भी सब-कुछ नहीं है। विवाह में सबसे आवश्यक वस्तु तो लड़का और लड़की होते हैं। ये देना-लेना उनके मुकाबिले में गौण है।

"साथ ही जब इतना कुछ आना हो तो उसके रखने के लिए स्थान और साधन भी तो होने चाहिएँ।"

"तो मैं पिताजी को कहकर एक सेफ भी साथ ले लूँगी।"

"तब तो बोझा और भी अधिक हो जावेगा।"

"तो फिर क्या किया जाय?" रेणु ने अभिप्राय नहीं समझा।

"देखो रेणु! मैं तुमको देखने आया था। तुम्हारे भूषणों को नहीं। तुमने अपना बहुत-कुछ इन भूषणों के पीछे छुपा लिया है। इससे बहुत कठिनाई हो रही है।"

चाय के साथ खाने के लिए भी बहुत बढ़िया सामान था। चाय के पश्चात् सरकार बाबू और उनकी पत्नी ने ऐसा अवसर उत्पन्न कर दिया कि रेणु और सुशील दोनों एक कमरे में अकेले रह गए। रेणु ने कहा, "हम पिछले इतवार आपके घर गए थे।"

"मुझको विदित है। मैं बाहर पिताजी से एक आवश्यक विषय पर परामर्श कर रहा था।"

"उस समय मैंने ये भूषण और वस्त्र नहीं पहिने हुए थे।"

"तो अब क्यों पहिने हैं?"

"इस कारण कि कदाचित् इनमें कुछ अच्छी लग सकूँ।"

"हाँ, कुछ सुन्दर तो लगी हो। परन्तु मैं तो कुछ और ही देखने आया था।"

"क्या?"

"तुम्हारे मन का विकास।"

"तो आप मेरी परीक्षा लेंगे?"

"ले ली है।"

"कितने नम्बर दिये हैं आपने?"

"परचा घर जाकर देखूँगा।

"पर परीक्षाफल तो पता चलेगा? कब तक आशा कर सकती हूँ?"

इस पर दोनों हँस पड़े। रेणु ने कहा, "परीक्षक तो बहुत ही भयानक जन्तु होते हैं। जब तक स्कूल में पढ़ती रही हूँ, परीक्षकों से डरती रही हूँ।"

"सत्य ही परीक्षक बहुत ही भयंकर प्राणी होते हैं। पर क्या किया जाय! उनके बिना काम भी तो नहीं चल सकता।"

"पर ये परीक्षाएँ कब तक चलेंगी? मैं जब स्कूल से निकली थी तो भगवान् का धन्यवाद किया था। समझी थी कि परीक्षाओं से छुट्टी हुई और अब तो बिना पढ़ाई के ही परीक्षा हो रही है।"

उसी रात सुशील के माता-पिता उससे पूछने लगे, "क्या बात हुई है सुशील!"

"बाबा! चाय और खाने के पदार्थ बहुत बढ़िया थे। कोठी बहुत ही भली भाँति सजाई गई थी। रेणु भी दस हज़ार से अधिक के भूषणों से लदी थी। इन भूषणों तथा कपड़ों के समेत मेरे साथ सिनेमा चलने का आग्रह कर रही थी। बहुत मुश्किल से जान छुड़ाकर आया हूँ।"

सुशील का पिता हँस पड़ा और उसकी माता ने कहा, "बेटा, हमारे समुदाय में दहेज की प्रथा जो है। रेणु के माता-पिता ने समझा होगा कि तुम आनाकानी दहेज के कारण कर रहे हो। इसी से उन्होंने यह दिखाने का यत्न किया होगा।"

"ठीक है माँ। यह एक बहुत ही फूहड़ उपाय है। एक बात और हुई है। बातों-ही-बातों में रेणु ने बता दिया कि उसके विवाह पर दस हज़ार रुपया उसको और दस हजार उसके पति को मिलेगा। साथ ही यदि रेणु का पति कोई कारोबार करना चाहेगा तो उसमें भी उसकी

सहायता होगी ।"

"मेरा विचार है कि अब तो हमको मान जाना चाहिए ।"

सुशील ने आँखें नीची किये हुए कहा, "नहीं माँ ! इन बातों ने मेरे मन पर कुछ अच्छा प्रभाव नहीं बनाया । अभी और विचार करने दो ।"

६

सुशील कुमार ने नीलमणि से कभी विवाह के विषय में चर्चा नहीं की थी । इधर सरकार बाबू रेणु के लिए ज़ोर देने लगे तो उसका ध्यान नीला की ओर भी गया । इस ध्यान जाने में एक कारण नीला का यह कथन भी था कि वह हरभजन सिंह को किसी प्रकार भी उस पर उपमा नहीं देती । उसके मन में अब यह इच्छा होने लगी थी कि नीला से इस विषय पर बात करके देखे ।

लगभग तीन मास से वे इकट्ठे अस्पताल में ड्यूटी दे रहे थे और इस काल में वह नीलमणि के आचार विचार के विषय में बहुत कुछ जान गया था । यह सब ज्ञान उसको नीलमणि के समीप ही ले जाने वाला सिद्ध हुआ था ।

स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् नगरों की जनसख्या एकदम बढ़ी थी, परन्तु इस वृद्धि के साथ हस्पतालों और डिस्पैन्सरियों में वृद्धि नहीं हुई थी । परिणाम यह हो रहा था कि नगर के सब हस्पतालों तथा डिस्पैन्सरियों में रोगयों की भीड़ लगी रहती थी । रोगियों के देखने का समय मध्याह्न बारह बजे तक समाप्त हो जाता था, परन्तु आये हुए रोगियो को देख सकने में प्राय. दो बज जाते थे । कइयो को तो केवल टालने के लिए कुछ भी लिख दिया जाता था ।

सुशील कुमार थक जाया करता था । डॉक्टर भाटिया प्राय' बारह बजे काम सुशील और नीला को सौंपकर चला जाया करता था और नीला सुशील को रोके रखती थी, "जरा ठहरिये ।" कभी कहती, "बस इनको देख ले तो चलेंगे ।" फिर कहती, "ये बेचारे कहाँ जायेंगे ।"

कभी काम बहुत अधिक होने पर कह देती, "दवाई तो सबको मिलनी ही चाहिए।"

सुशील कुमार कभी कह देता, "नीला देवी। अब तो दिमाग भी थक गया है।"

"हम दोनों के दिमाग मे एक जैसा मैटर (पदार्थ) ही तो भरा हुआ है। आप क्यो थक जाते हैं? मै तो देखिये अभी तक तरो-ताजा हूँ।"

सुशील लज्जित हो उठकर जाने का साहस नहीं करता था।

इस प्रकार दोनो मे घनिष्ठता बढती जाती थी। इस पर भी सुशील को साहस नहीं होता था कि वह विवाह के विषय मे बातचीत करे।

रेणु के पिता के घर की घटना के पश्चात् उसने बात चलाने का निश्चय कर लिया। हस्पताल से दोनों निकले तो बाइसिकले हाथ मे पकडे हुए दोनो सडक पर चले आये। जब नीला अपनी बाइसिकल पर चढने लगी तो सुशील ने कहा, "नीला देवी। यदि आज समय हो तो सायकाल चाय का मेरा निमन्त्रण स्वीकार कर ले।"

"आज क्या बात है?" नीला नित्य से इस विलक्षणता को देख पूछने लगी।

"कुछ विशेष बात तो नहीं। इस पर भी बात यह है कि मै अब 'सोशल' होने का यत्न कर रहा हूँ।"

"तो कोई और भी वहाँ पर आ रहा है?"

"आज तो केवल आप ही आ रही हैं।"

"तो पहले किसी और को भी निमन्त्रण दे चुके है?"

"दे तो नहीं चुका। हाँ, निमन्त्रण स्वीकार कर चुका हूँ। हमने अब कारोबार करना है और इसके लिए हमको दूसरों से मेल-जोल का अभ्यास डालना चाहिए।"

"तो किसके यहाँ आप निमन्त्रण पा चुके हैं?"

"कल ही गया था। एक मनमोहन सरकार है। उनकी लड़की रेणु का निमन्त्रण था।"

"क्या आप लड़कियों के ही निमन्त्रण स्वीकार करेंगे और उनको ही निमन्त्रण देंगे ?"

"नहीं, यह बात नहीं। इस पर भी मैं यह अनुभव करता हूँ कि स्त्री-वर्ग से मेरा कम सम्पर्क है। इस कारण इस वर्ग से ही मुझको अधिक मेल-जोल उत्पन्न करने की आवश्यकता है।"

नीला ने निमन्त्रण के उत्तर में कहा, "मुझको निमन्त्रण स्वीकार करने में आपत्ति नहीं, पर देख लीजिये आपको मेरी कम्पनी (संगत) कहीं बहुत फीकी प्रतीत न हो।"

इस उत्तर से सुशील को बहुत प्रसन्नता हुई और उसने कहा, "तजरुबा करने में क्या हानि हो सकती है।"

बात तय हो गई। सुशील कुमार के विचार से वह आधी सफलता पा गया था। इससे वह घर पहुँच चाय का प्रबन्ध करने लगा। जब उसने माँ को कहा, "माँ, आज मेहमान आ रहे हैं, चाय का प्रबन्ध होना चाहिए।"

तो माँ ने पूछा, "कितने मेहमान होंगे ?"

"एक।"

"बस ? तो जो उस समय कहोगे प्रबन्ध हो जावेगा। मैं समझी थी कि बहुत लोग होंगे और मेज़-कुर्सी का भी प्रबन्ध करना होगा।"

माँ ने पूछा नहीं कि मेहमान कौन है और सुशील ने बताया नहीं। ठीक पाँच बजे नीला आई और सुशील उसको कोठी के ड्राइंगरूम में ले गया। वहाँ ही चाय का प्रबन्ध था। सुशील ने उसको बैठाते हुए कहा, "मुझको डर लग रहा था कि कहीं आप अस्वीकार न कर दें।"

"डर की क्या बात थी ? मैं नहीं मानती तो कोई और मान जाती।"

"मैंने अपने जीवन का यह कार्यक्रम अभी नया आरम्भ किया है और यदि आरम्भ में ही असफलता मिलती तो बहुत कठिनाई होती। इसके अतिरिक्त परिचितों मे चुनाव भी तो एक बात है। यह कोई गाजर-मूली खरीदने की बात तो है नहीं, जो एक नहीं तो दूसरी से भी काम

चल सकता है ।"

"ख़ैर अब तो आपको कठिनाई नहीं हुई न ? मैं मेल-जोल को पसन्द करती हूँ परन्तु वह किसी प्रयोजन विशेष से नहीं होना चाहिए। मेलजोल तो स्वयं एक भारी उद्देश्य है ।"

"मैं सोचता हूँ कि आपका परिचय अपनी माँ और बहन से करा दूँ । आप इसको पसन्द करेंगी ?"

"यह तो सौभाग्य की बात होगी ।"

सुशील ने आवाज दी, "दास ! दास !" एक नौकर आया तो उसने कहा, "देखो रजनी है तो उसको बुला लाओ । माँ से कहना, एक मेहमान आये हैं, वे चाय के लिए आ जायँ तो ठीक रहेगा ।"

रजनी आई । बंगालियों में गौरवर्णीय लोग बहुत कम होते हैं । इस पर भी उनका अभाव नहीं । रजनी गोरे रंग की और भँवरे समान काले बालों वाली लड़की थी । वह अभी चौदह-पन्द्रह वर्ष की बालिका-मात्र ही थी । "देखो रजनी !" सुशील ने उससे नीला का परिचय कराया, "यह हैं डॉक्टर नीलमणि । आजकल मेरे साथ हस्पताल में काम कर रही हैं ।"

पश्चात् उसने रजनी का परिचय करा दिया । उसने कहा, "नीला देवी ! यह है मेरी बहन रजनी । पिता की लाडली और मेरे साथ लड़ने वाली ।"

रजनी ने हाथ जोड़ नमस्कार की तो नीला ने बाँह से पकड़कर उसे अपने समीप सोफा पर बिठा लिया । इस समय सुशील की माँ भी आ गई । सुशील ने खड़े होकर नीला का परिचय कराया । नीला ने हाथ जोड़े तो सुशीला की माँ ने उसके सिर पर प्यार देकर कहा, "जुग-जुग जियो बेटी !"

बैठते हुए सुशील की माँ ने कहा, 'तुम भी कुछ मूर्ख हो सुशील ! कहते थे कि मेहमान आ रहे हैं । ये मेहमान हैं क्या ? 'यह नहीं बताया कि एक लड़की आ रही है । लड़कियाँ भी कभी मेहमान होती हैं । वे तो जब आती हैं तो घर की लड़की बनकर ही आती हैं ।"

नीला को बातचीत का ढग बहुत पसन्द आया। सुशील की माँ ने बिना पुत्र को मध्यस्थ बनाये सीधा नीला से पूछना आरम्भ कर दिया, "तुम्हारे पिता क्या करते हैं बेटी ?"

"डॉक्टर हैं माताजी ! राधाकृष्ण सक्सेना नाम है। नाम तो सुना होगा ?"

"केवल सुना ही नहीं, बल्कि उनसे चिकित्सा भी कराई है। बहुत भाग्यशालिनी हो बेटी ! डॉक्टर बहुत अच्छे आदमी हैं। सुशील के पिता तो उनको बहुत अच्छी तरह से जानते हैं।"

इस प्रकार बातचीत चलती गई और संकोच मिटता गया। डेढ घण्टा-भर नीला वहाँ रही और इस काल में दोनों को एक-दूसरे के परिवारों का पूर्ण परिचय हो गया।

सुशील के पिता आये तो सुशील की माँ ने आवाज़ दे बुला लिया, "इधर आइये न। देखिये घर पर कौन आया है।"

नीलरत्न ड्राइंग रूम में आया तो सुशील की माँ ने नीला का परिचय दे दिया।

"अच्छा ?" विस्मय में नीलरत्न ने पूछा। उसने नीला को सम्बोधन कर पूछा, "सुनाओ, डॉक्टर कैसे हैं ? अब तो चिरकाल से उनके यहाँ जाने का अवसर नहीं मिला। सुशील तुमने ! बहुत अच्छा किया है, जो नीला देवी को आमन्त्रित किया है।"

नीला का डेढ घण्टा बहुत ही सुगमता से व्यतीत हुआ। रजनी ने भी बगला मे एक गीत गाया और पीछे उसने वायलिन बजाकर सुनाया।

जब नीला जाने लगी, तो सुशील की माँ ने बहुत ही स्नेह से प्यार दिया और कहा, "बेटी ! कभी-कभी ऐसे ही आ जाया करो, बहुत अच्छा लगता है।"

१०

जब नीला चली गई तो सुशीलकुमार की माँ ने सुशील को बिठाकर

पूछा, "ये कैसे आई थी बेटा ?"

नीलरत्न भी वहाँ बैठा था। सुशील के उत्तर देने से पूर्व उसने कह दिया, "दिखाने के लिए लाया था कि रेणु से यह अच्छी है।"

सुशील अपने मन की बात इस प्रकार प्रकट होती जान लज्जा से लाल हो गया। वह अभी विचार ही कर रहा था कि किस प्रकार बात आरम्भ करे कि सुशील की माँ ने कहा, "यह बंगालिन नहीं है। दूसरे यह कायस्थ है। तीसरे उत्तरी भारत की रहने वाली है। अतएव हमारे रहन-सहन के ढंग से अपरिचित है। रेणु का स्थान यह नहीं ले सकती।"

"माँ!" सुशीलकुमार ने कहा, "मेरी नीला से विवाह के विषय मे कोई बात नहीं हुई। यह मेरे साथ पढ़ती रही है और अब हस्पताल मे मेरे साथ काम करती है। इसी नाते इसको चाय का निमन्त्रण दिया था। अब पिताजी के मन में यह विचार आया है तो मैं अपने मन की बात बताता हूँ। वह कायस्थ के घर पैदा होकर भी कर्म से ब्राह्मण है। आज स्वतन्त्र भारत में तो 'कास्टलैस-सोसायटी' (जात-पातरहित समाज) का निर्माण हो रहा है। आचार-विचार इसका बहुत अच्छा है और जो-कुछ हमारे घर की विशेषता है वह रेणु से अधिक सुगमता से यह सीख सकती है।"

"नहीं, सुशील! मै तो बगाली लड़की ही लाऊँगी।"

"पर माँ! अभी तो विवाह की बात नहीं चली। यदि इस ओर मेरी रुचि हुई तो विचार कर लेंगे।"

इस पर नीलरत्न ने कहा, "मेरे विचार मे लड़की अच्छी है। यदि उससे विवाह कर सको तो कुछ आपत्ति नहीं हो सकती। केवल एक बात है। यदि तुम पढ़े-लिखे युवक उत्तरी भारत की गोरी लड़कियो से विवाह करने लगोगे तो बगाली लड़कियाँ कहाँ जायँगी ? सुशील, अपनी बहन रजनी का भी तो विचार कर लो।"

"यह समस्या पिताजी! ऐसी नहीं, जिसको एक-आध व्यक्ति सुलझा सके।"

"इसी कारण तो बंगला समाज ने यह व्यवस्था की है कि बंगाली लड़कियों से विवाह किया जाय। विशेष रूप में पढ़े-लिखे और धनी परिवारों के लड़कों को तो अपने बंगाली समुदाय का ध्यान रखना चाहिये। देखो सुशील। इस विषय पर अभी हठ नहीं करना चाहिये।"

सुशील अभी नीला के विचारों से परिचित नहीं था, इस कारण वह चुप रहा। यूं तो वह रेणु और नीला में कोई तुलना नहीं समझता था, परन्तु उसकी माँ ने पूछ लिया, "रेणु के विषय में तुम्हारा क्या विचार है?"

"रेणु से मेरा विवाह नहीं होगा।"

"क्यों?"

"रेणु और उसके पिता को धन का अभिमान है। वे धन के आवरण में असली रेणु को छुपाये हुए हैं और मैं नहीं जान सका कि वह क्या है?"

"तुमको धन नहीं चाहिये क्या?"

"धन किसको नहीं चाहिए? परन्तु विचारणीय बात है कि कितना धन पाने के लिए कितना आत्म-सम्मान देना पड़ेगा?"

"आत्म-सम्मान तो उनका जायगा जो लड़की देंगे। तुम्हारा क्या जायगा?"

"बाबा!" सुशील ने अपने पिता से पूछा, "माँ क्या लाई थी अपने मायके से?"

"वह जमाना दूसरा था। मेरे पिता एक क्लर्क थे, जिनका वेतन साठ रुपये मासिक था। अब तुम्हारे पिता प्रान्त के चीफ इन्जीनियर हैं, जो दो हजार रुपये महीना पाते हैं। इसके अतिरिक्त सब जानते हैं कि मैं लाखों का मालिक हूं। तुम भी मुझसे अधिक पढ़े हो। मैं अपने विवाह के समय स्कूल की दसवीं श्रेणी में पढ़ता था। तुम एम० बी० बी० एस० हो।"

"फिर भी कितना दिया था हमारे नाना ने?'

"पाँच सो लड़की की विदाई के समय और बस कुछ नहीं।"

'इस पर भी हम निर्धन नहीं रहे। बाबा! ससुराल से लेकर कौन धनी बना है?"

"यह ठीक है, पर जब मिलता है तो क्यों फेंक दिया जाय?"

"मैं फेंक देने की बात तो कह नहीं रहा। मैं तो कह रहा हूँ कि लेने से कुछ देना भी पड़ेगा। रुपये के लोभ में वह लड़की जो मुझको पसन्द नहीं है, लेनी पड़ेगी। यह घाटे का सौदा नहीं है क्या?"

"क्या बात पसन्द नहीं है रेणु में?" माँ ने पूछा।

"कोई एक बात हो तो बताऊँ। यहाँ तो सब-की-सब बातें घटिया हैं।"

"तो ऐसा करो।" नीलरत्न ने कहा, "कोई अन्य बंगाली लड़की, जिसको तुम अपने योग्य समझते हो, बता दो।"

"यदि कोई मिल गई तो बता दूँगा।"

जीवन में पहली बार सुशील को अपने माता-पिता के विचारों का भास हुआ। इतना तो वह जानता था कि उसके पिता के मन में बंगाली समुदाय के लिए भारी संवेदना है। उन्होंने अपने दफ्तर को बंगाली युवकों से भर रखा था। ठेकों में भी बंगालियों को अन्य स्थान वालों से उपमा मिलती थी। इस पर भी वह समझता था कि विवाह को वे साधारण आर्थिक बातों के स्तर पर नहीं ला रखेंगे। उन जैसा पढ़ा-लिखा व्यक्ति अपने पुत्र पर इस प्रकार के प्रतिबन्ध लगायेगा, वह विचार में नहीं ला सकता था।

अगले दिन वह नीला से मिला तो नीला ने उसकी माँ के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। उसने कहा, "बहुत ही सुहृदय हैं वे। कितना मीठा बोलती हैं! सुशील बाबू! उनसे कहियेगा कि मैं उनकी बहुत कृतज्ञ हूँ।"

"आपने स्वयं ही क्यों नहीं कह दिया?"

"मैं उनको अपने से बड़ा मान मन की बात कहने में झेंप गई थी।"

"जानती हैं कि उन्होंने आपके मेरे निमन्त्रण को स्वीकार करने का क्या अर्थ समझा था ?"

"क्या ?"

"वे समझी थीं कि यह निमन्त्रण देकर मै आपके सामने विवाह का प्रस्ताव रख रहा हूँ और आप इसको अस्वीकार नहीं कर रहीं।"

"इसी कारण उनका व्यवहार इतना मधुर और स्नेहमय था क्या ?"

"यह बात नहीं नीला देवी। मैंने निमन्त्रण इस विचार से नहीं दिया था और मैं जानता हूँ कि आपके मन में भी इस विषय का कोई विचार नहीं था। यह बात मैंने भरसक अपनी माँ के मन पर अंकित करने का यत्न किया भी है। परन्तु वे मेरे कथन को सत्य नहीं मानतीं और ज्यूँ-ज्यूँ मैं इस बात से इन्कार करता हूँ, वे मेरे पर विश्वास न कर मुझको इस सम्बन्ध से मना करती हैं।"

"अर्थात् वे मेरा आपसे विवाह पसन्द नहीं करतीं।"

"बिल्कुल नहीं।"

"तब भी उनका व्यवहार इतना स्नेहमय था ?"

'यह तो उनका स्वभाव है। इस पर भी मैं चाहता हूँ कि आप कभी मुझको और साथ में उनको चाय पर निमन्त्रण दें और मैं देखना चाहता हूँ कि अब इस पूर्ण घटना के पश्चात् उनका व्यवहार कैसा रहता है ?"

"सुशील बाबू! बड़ों को परीक्षा में डालना मुझको भला प्रतीत नहीं होता। अभी तक उनका चित्र मेरे मन मे बहुत अच्छा बना हुआ है। मै उसको बिगाड़ना नहीं चाहती। यह बना रहे तो हानि क्या है ?"

"हानि केवल यह है कि माँ के विचारों का ज्ञान, जो मैं प्राप्त करना चाहता हूँ, नहीं कर सकूँगा।"

"बुद्धिमान लोग तो एक बात से पूर्ण बात का ज्ञान पा जाते हैं। आपको माताजी की इतनी बात से समझ जाना चाहिए कि वे आपका

मेरे से विवाह पसन्द नहीं करती। मैं समझ रही हूँ कि वे ठीक ही कर रही हैं और उन्होंने आपको सचेत कर दिया है।"

"तो इसका अर्थ यह है कि आप हमको कभी निमन्त्रण नहीं देंगी?"

"निमन्त्रण की बात सर्वथा पृथक् है। इसका विवाह से अथवा विवाह के विषय में आपकी माता जी के विचार जानने से, कोई सम्बन्ध नहीं। मैं आपकी माताजी की, किसी विषय में परीक्षा लेने के लिए निमन्त्रण नहीं दूँगी।"

"तो ऐसे ही दे दीजिये।"

"एक शर्त पर कि मेरे विवाह की चर्चा वहाँ पर नहीं होगी।"

"यदि वे करेंगी तो क्या होगा?"

"आप नहीं करना।"

सुशीलकुमार की इस बात का चर्चा करने का उद्देश्य केवल यह था कि नीलमणि को इस दिशा में विचार करने की प्रेरणा मिल सके। वह चाहता था कि उसको पता लग जाय कि ऐसे लोग हैं, जो एक बंगाली युवक को भी उससे विवाह करने की इच्छा करने वाला समझ सकते हैं।

इतना मात्र सुझाव देने के पश्चात् वह शेष के लिए अवसर ढूँढना चाहता था।

: ११ :

एक दिन नीला देवी का निमन्त्रण सुशील को मिला। निमन्त्रण डॉक्टर राधाकृष्ण की ओर से था। निमन्त्रण था, 'मिस्टर एण्ड मिसेज डॉक्टर सक्सेना रिक्वैस्ट दि प्लैजर आफ मिस्टर एण्ड मिसेज भट्टाचार्य विथ फैमिली ऐट ए टी पार्टी टु सैलिब्रेट दि ट्वन्टी-फोर्थ बर्थडे आफ देयर डीयर डॉटर नीला देवी एम० बी० बी० एस०।'

जब यह निमन्त्रण सुशीलकुमार के पिता को मिला तो उसने सुशील को बुलाकर निमन्त्रण दिखाया। सुशील ने देखते ही पूछा, "तो आप चलेंगे?"

"मेरे लिए इन्कार करना अति कठिन है। डॉक्टर राधाकृष्ण मेरे चिकित्सक हैं। परन्तु मुझको भय है कि यह परिस्थिति तुमने ही उत्पन्न की है। तुम हमको डॉक्टर की लड़की से अपने विवाह की ओर धकेल रहे हो।"

"बाबा! मैं कैसे धकेल सकता हूँ? आप जैसा उचित समझें करें। मैं तो उसको अपनी सहपाठिन मान ही यहाँ लाया था। अब उसने निमन्त्रण दिया है तो आप जानें आपका काम जाने।"

"तुम जा रहे हो या नहीं? तुम्हारी माँ तो नहीं जा रही।"

"क्यों?"

"वे नहीं चाहतीं कि उत्तरी भारत की रहने वाली उसकी पतोहु बने।"

"पर इस निमन्त्रण का उसके साथ क्या सम्बन्ध है?"

"यह तुम उनको बता देना। मैं तो जा रहा हूँ। तुम जाओगे अथवा नहीं?"

"मुझको तो पृथक् निमन्त्रण मिला है।"

"तो यह परिवार किस के लिए लिखा है?"

"रजनी को साथ ले जाने के लिए।"

"ओह! अब समझा हूँ। अपनी माँ को तुम मना लो।"

रात भोजन के समय सुशील ने माँ से पूछा, "माँ! बाबा कहते हैं कि तुम डॉक्टर राधाकृष्ण के निमन्त्रण को अस्वीकार कर रही हो। क्यों?"

"जब हम किसी से मिलते हैं तो मीठी-मीठी बातें तो करनी ही होती हैं और इन मीठी बातों का कोई गलत अर्थ लगा सकता है। मैं उसको प्यार दूँगी और वह समझेगी कि मैं उसको अपनी बहू बनाने की स्वीकृति दे रही हूँ। मैं यह भ्रम उत्पन्न होने देना नहीं चाहती।"

"माँ! मैंने उसको तुम्हारे और बाबा के विचार बता दिये हैं। मैंने उसको बताया है कि उस दिन के निमन्त्रण पर आने के अर्थ मेरे माता पिता ऐसा लगाते हैं और मैंने उनकी धारणा को गलत बताया है।"

"इस पर उसने क्या कहा था ?"

"उसने कुछ उत्तर तो नहीं दिया। और मैं समझता हूँ कि वह आपके विचारों पर विस्मय करती थी।"

"तुमने यह भी बताया था क्या कि हम क्यों उससे तुम्हारा विवाह पसन्द नहीं करते ?"

"मुझको यह बताते हुए कि आपने उसको अबंगाली होने के कारण पसन्द नहीं किया, लज्जा लगती है। मैं यह किसी को नहीं कहूँगा।"

"इसमें लज्जा की कौन बात है ? घर की सम्पत्ति घर मे ही रखना बुरा है क्या ?"

"नहीं, यह तो बुरी बात नहीं। बुरी बात है घर को बंगालियों तक सीमित रखना। हम भारतीय हैं। भारत हमारा घर है।"

"और पूर्ण मानव समाज क्यों नहीं ?"

"उसको कौलोनी कह सकते है। एक कौलोनी मे कई घर हैं।"

"मैं तो उसको अपने मन की बात बता दूँगी।"

"तो अपने को उसकी दृष्टि में छोटा बना लोगी।"

"मुझको छोटा बनने मे सकोच नहीं होता।"

सुशील की माँ भी दावत पर गई। सुशीलकुमार एक पार्कर पैन भेंट के लिए ले गया। सबसे विस्मयजनक बात यह थी कि नीला के सहपाठियों में से चार-पाँच अन्य विद्यार्थी भी आमन्त्रित थे। हरभजन सिंह और उसकी छोटी बहन अमृतकौर भी आये हुए थे। डॉक्टर भाटिया और डॉक्टर खन्ना भी उपस्थित थे। पचास के लगभग अभ्यागत थे।

नीला के एक ओर सुशील की माँ और दूसरी ओर माधुरी का भाई प्रबोध बैठा था। सुशीलकुमार और हरभजन सिंह साथ-साथ बैठे हुए थे। इनके साथ हरभजन सिंह की बहन अमृत भी थी। यह प्रबन्ध हरभजन सिंह और सुशील दोनों के लिए अरुचिकर था। सुशीलकुमार तो परिस्थिति को समझ अमृत से बातें करने लगा—

"किस श्रेणी मे पढती हैं आप ?"

अमृत ने आँखें नीची किये हुए कहा, "इंटर में।"

"कौन विषय लिए हैं?"

"इतिहास तथा गणित।"

"गणित कठिन नहीं लगता आपको?"

"मेरा प्रिय विषय है।"

"पर गणित पढकर क्या करोगी?"

"मैं तो काम करने के लिए नहीं पढती। मैं पढने के लिए ही पढती हूँ।"

"हाँ, पिताजी ने बहुत कमाया है न। आपको काम करने की क्या आवश्यकता है?"

"ठीक है। परन्तु मैंने तो विवाह करना है न। फिर काम करने के लिए मुझको चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है?"

"ओह।" सुशील मन-ही मन अमृत कौर के विचारों को पसन्द कर रहा था। इस पर भी उसने कहा, "कहीं किसी गरीब से विवाह हो गया अथवा विवाह के पश्चात् उनका काम छूट गया तो आप उनकी कुछ सहायता नहीं कर सकेंगी?"

"सहायता क्या पैसा कमा कर देने से ही होती है? सैंकड़ों उपाय है सहायता के।"

"किस स्कूल में पढती थीं आप?"

"सेन्ट टॉमस हाई स्कूल में।"

"किस कॉलेज में दाखिल हुई हो?"

"मनकापुर कॉलेज में।"

"यह सब आपको स्कूल और कॉलेज में पढाया गया है?"

"स्कूलों और कॉलेजो मे ये बातें नहीं बताई जातीं। न तो नौकरी करने की बात होती है न ही न करने की।"

हरभजन सिंह इस सब समय नीला की ओर देख रहा था। नीला प्रबोध से घुल घुलकर बातें कर रही थी। यूँ तो सुशीलकुमार भी बीच-

बीच में नीला की ओर देख लेता था, परन्तु उसको अमृतकौर की बातें अधिक रुचिकर लग रही थीं। उसने अमृत को मन की बात बताने में प्रोत्साहित करते हुए कहा,"इस पर भी अमृत देवी जी! पढाई के अतिरिक्त कुछ तो और सीखती ही होगी?"

"हाँ, यह तो है ही। मै बहुत अच्छी रसोई बना सकती हूँ। मैं अच्छे अपटु-डेट फैशन के कपड़े सी सकती हूँ। मैं नर्सिंग की शिक्षा प्राप्त कर रही हूँ। मैं गुरुमुखी पढी हूँ और हिन्दी तथा संस्कृत पढ़ती हूँ। अंग्रेजी तो जानती ही हूँ।"

"बहुत अच्छी लडकी हो तुम। मुझको तुम्हारे विचार बहुत पसन्द हैं।"

"आप तो भैया के सहपाठी थे न?"

"हाँ, अब भी सहपाठी ही हूँ। अभी हम हस्पताल मे रोगी देखने का काम सीखते हैं।"

इस समय हरभजन सिंह ने सुशील को सम्बोधन कर कहा, "सुशील, जानते हो वह नीला के साथ कौन बैठा है?"

"कोई होगा।" सुशील ने नीला के विषय में बात करने मे अरुचि प्रकट करते हुए कहा, "मैं तो तुम्हारी बहन से बहुत मजेदार बाते कर रहा हूँ।"

हरभजन सिंह का ध्यान अब अमृत की ओर चला गया। उसने पूछा. "अमृत! क्या बातें कर रही हो सुशील जी से?"

"मेरी पढाई के विषय में पूछ रहे थे।"

सुशील ने बताया, "मैंने कहा था कि आज प्रत्येक लड़की नौकरी अथवा किसी प्रकार की आय करने के लिए पढाई करती है और ये तो गणित पढ रही हैं, इससे क्या होगा! इस पर इमने बताया है कि यह तो पढाई के लिए ही पढ़ाई कर रही है, कमाई के लिए नहीं। कमाई तो जिससे इसका विवाह होगा, वह करेगा।"

हरभजन सिंह हँस पडा। वह कहने लगा, "अमृत की मेरे से भी

इस विषय में बातचीत हुई है। इसका कहना है कि यदि विवाह नहीं हुआ तब भी तो मेरे पिताजी की सम्पत्ति में से इसको मेरे बराबर भाग मिलेगा ही। कानून बदल गया है न?"

"बहुत ही समझदार लड़की है।" सुशील ने कहा।

"हाँ, परन्तु बातें करने में।"

"तो क्या पढ़ने में नहीं?"

"पढ़ाई की बात मैं नहीं कर रहा। मैं तो इसके कपड़ों की बात कह रहा हूँ।"

"क्या है इसके कपड़ों को।"

"हमारी कम्यूनिटि में ये फैशन में नहीं माने जाते।"

"परन्तु यह जानती तो बहुत कुछ है।"

"हाँ, यह पढ़ाई-लिखाई के अतिरिक्त नृत्य और संगीत भी सीखती है।"

"तब तो सोने पर सोहागा है। हमारे समुदाय में तो कोई भी लड़की सभ्य नहीं समझी जाती, जब तक वह इन दो कलाओं में कुछ-न-कुछ ज्ञान न प्राप्त कर ले। हमारे पिता जी जीवन-भर नौकरी करते रहने से नौकरी की बहुत महिमा मानते हैं। मेरे लिए भी वे किसी हस्पताल में काम ढूँढ रहे हैं।"

अब अमृत ने बीच में बात टोककर कहा, "मेरी इच्छा है कि बंगाली समाज में कभी संगीत इत्यादि का कार्यक्रम हो, तो देखूँ।"

"यह तो बहुत ही साधारण-सी बात है। मैं इसका प्रबन्ध कर दूँगा। मेरी बहन रजनी को जानती हो?"

"आपके साथ आते तो देखा था, परन्तु आपने परिचय नहीं कराया।"

"वह देखो नीला देवी के समीप बैठी हुई है।"

अमृत ने देखा और कहा, "तो चलिये उससे मिल लें।"

हरभजन सिंह तो पहले ही नीला के पास चला गया था। ये भी

वहाँ जा पहुँचे।

जब ये गए तो हरभजन सिंह नीला को एक जोड़ी सोने के टॉप्स भेंट कर रहा था, "मैं आपको इस शुभ अवसर पर बधाई देने आया हूँ और देखिये, मैं समझता हूँ कि आपको अस्वीकार नहीं होने चाहिएँ।"

"ओह, ये तो बहुत कीमती प्रतीत होते हैं। आपने इतना कष्ट क्यों किया?"

"आपने इसको स्वीकार कर लिया, अतएव कष्ट मिट गया है। मुझको भय था कि कहीं आप अस्वीकार न कर दें।"

"वैसे तो मैं समझती हूँ कि इतनी कीमती वस्तु हमको नहीं लेनी चाहिए। कीमती भेंट से ही स्नेह प्रकट होता हो, मैं ऐसा नहीं मानती। इस पर भी जब आप लोग ये लाये हैं तो इन्कार करना तो और भी बुरी बात है।

"आप देखेंगे क्या कि मुझको किस-किस ने क्या-क्या भेंट दी है?"

इस समय सुशील ने भी पार्कर पैन, जो वह भेंट देने के लिए लाया था, निकाल कर नीला देवी के सामने रख दिया। नीला ने पेन लेकर मुस्कराते हुए कहा, "तो आइये दिखाऊँ।"

जब नीला हरभजन सिंह और सुशीलकुमार के साथ चली तो अमृत, जो सुशील के साथ वहाँ आई थी और रजनी, जो नीला के पास बैठी थी, भी साथ-साथ चल पड़ीं। इन सबको एक ओर जाते देख पार्टी पर अन्य आये हुए भी इस ओर देखने लगे। एक कोने में एक मेज पर वे सब वस्तुएँ, जो नीला को भेंट मे मिली थीं, रखी थीं। ये सब वहाँ गए तो सुशील को उन सब कीमती वस्तुओं को देखकर आश्चर्य हुआ। वास्तव मे डॉक्टर साहब की अपनी ख्याति और दूसरों से सम्बन्ध के कारण ही इतनी भेंट की वस्तुएँ आई थीं।

: १२ :

सुशील की माँ उठकर सुशील के पिता के पास चली गई थी। वहाँ

डॉक्टर राधाकृष्ण उससे बातें कर रहा था। सुशील का पिता डॉक्टर राधाकृष्ण से सुशील के विषय में बता रहा था। उसने बताया था कि नगर में डॉक्टरों की इतनी भरमार हो गई है कि किसी नये चिकित्सक के लिए काम स्थापित करना अति कठिन हो रहा है। इस कारण उसने सुशील को किसी हस्पताल में नौकर कराने का विचार बताया। डॉक्टर राधाकृष्ण का विचार था कि हस्पतालों में साधन सुविधा से मिल सकते हैं। इस कारण डॉक्टरी चिकित्सा, जो साधनों के बिना चल ही नहीं सकती, हस्पतालों में ही ठीक चल सकती है।

"तो आप मेरे विचार को पसन्द करते हैं न ?" बाबू नीलरत्न ने पूछा।

"अच्छे विचार हैं। इस पर भी सब-के-सब पास करने वाले लड़के तो हस्पतालों में काम पा नहीं सकते। बहुतों को तो अपनी प्रैक्टिस किसी नगर अथवा गाँव में चलानी ही होगी।"

"मैं समझता हूँ कि नौकरी प्रथम चुनाव होना चाहिए। इसके न मिल सकने पर किसी नगर में काम खोलना पड़ेगा और किसी नगर में भी काम न बन सकने पर ही किसी गाँव का विचार किया जा सकता है।"

"किसी डॉक्टरी कॉलेज में पढ़कर, जहाँ दो-अढ़ाई सौ रुपये मास का खर्चा हो, कौन किसी गाँव में जाकर काम करेगा ?"

"वे जायेंगे, जो न नौकरी पा सकेंगे और न ही किसी नगर में अपना काम जमा सकेंगे।"

सुशील की माँ, जो समीप बैठी ये बातें सुन रही थी, कहने लगी, "डॉक्टर साहब! अब सुशील की सगाई बाबू मनमोहन सरकार की लड़की से हो रही है। सरकार बाबू भी यह पसन्द नहीं करते कि उनका दामाद लखनऊ से कहीं बाहर जाय। लखनऊ में तो किसी हस्पताल में नौकरी ही करनी पड़ेगी। कुछ साल तक नौकरी कर अपना काम किया जा सकेगा।"

सुशील की माँ का विचार था कि उसको यह बात नीला के माता-

पिता से बता देनी चाहिए कि सुशील का विवाह सरकार बाबू की लड़की से हो रहा है।

दूसरी ओर हरभजन सिंह को इतनी भेंट में आई वस्तुओं को देखकर यह सन्देह हो गया कि भेंट देने वाले सब लोग नीला से विवाह के इच्छुक हैं। आज उसको यह जानकर बहुत ही अचम्भा हुआ कि सुशील भी नीला की इच्छा करने वालों मे एक है।

वह अभी यह देख ही रहा था कि नीला के पिता एक अन्य युवक को साथ लिये हुए वहाँ आ गए। उसने नीला को पुकारकर कहा, "नीला! यह देखो, ये तुम्हारे लिए क्या लाये है।"

यह एक ओवरकोट था। बहुत बढिया ऊनी कपड़े का। गले पर लोमड़ी की खाल का कालर बना था और कोट के किनारों पर किसी अन्य जानवर की खाल लगी थी।

नीला इस भेंट के लाने वाले की ओर प्रश्न-भरी दृष्टि में देख रही थी। डॉक्टर राधाकृष्ण उसके देखने का अर्थ समझ कहने लगा, "तुमने इसको पहचाना नहीं। मेरे मित्र श्री चरण को तो जानती हो न। ये उनके सुपुत्र रामचरण है। आजकल काश्मीर मे फौरेस्ट रेंजर लगे हुए है।"

"ओह! अब पहिचान गई हूँ। बहुत काल के पश्चात् भेंट हुई है न। मै पाँचवीं श्रेणी मे थी, जब आपको अन्तिम बार देखा था।"

इस पर उस युवक ने कहा, "शुक्र है, याद तो आया। बारह वर्ष हो गए है। एक युग बदल गया है। तीन फुट की नीला पाँच फुट छः इन्च की हो गई है। राम के कन्धे पर चढकर कूदने वाली नीला अब डॉक्टरनी बन गई है।"

"और आप भी तो अब अफसर बन गए है।"

"हाँ, जगलों की मिट्टी छानने के लिए।"

डॉक्टर राधाकृष्ण ने सबको एक मेज़ पर आमन्त्रित कर लिया और चाय पीने का आग्रह किया। चाय तो सब पी चुके थे, परन्तु जब नीला

वनाने लगी तो एक-एक प्याला और लेने पर राज़ी हो गए।

१३

हरभजन सिंह को ऐसा समझ आया कि नीला से विवाह करने के लिए कई उम्मीदवार हैं। इस पर भी वह अपने मन में यह विचार कर कि वह लखपती का लड़का है, वह एम० बी० बी० एस० की परीक्षा में प्रथम रहा है, साथ ही वह सर्जरी में विशेषज्ञ होने जा रहा है, वह अपने को अन्य सब उम्मीदवारों से श्रेष्ठ मानता था। वह समझता था कि यदि नीला में कुछ भी बुद्धि है, तो उसके चुनाव में तो उसी को आना चाहिए।

वह अपनी तुलना प्रबोध, सुशील और इस नव आगन्तुक से करता था और अपने को किसी प्रकार भी कम नहीं पाता था। उसको कुछ यह समझ आया कि नीला के पिता ने यह जन्मदिन का समारोह नीला को अपना पति चुनने का अवसर पैदा करने के लिए किया है। इस कारण वह कुछ ऐसा अवसर ढूँढ रहा था कि नीला से पृथक् में बात कर सके। वह अवसर समारोह में नहीं मिल सका। इस पर भी हरभजन सिंह जैसा दृढ़ विचार वाला व्यक्ति बिना अपने उद्देश्य में कुछ भी प्रयत्न किए वहाँ से जा नहीं सका। उसने लड़की से बात न कर सकने पर लड़की के पिता से ही बात कर दी। उसने डॉक्टर राधाकृष्ण को अकेले पा समीप जाकर कहा, 'डाक्टर साहब, आपका आज का समारोह बहुत ही सफल हुआ है। मैं इस पर आपको बधाई देता हूँ।"

"हाँ। पर इसका श्रेय आप जैसे सज्जनों को ही है। आप मेरे निमन्त्रण पर अपना अमूल्य समय देकर आए और लड़की को स्नेह-भरे उपहार दिये, इस कारण मैं आपका भारी कृतज्ञ हूँ। मैं आपका बहुत ही आदर करता हूँ।"

"मैं," हरभजन सिंह ने बात बदल कर कहा, "मैं एक अत्यावश्यक विषय में आप से बात करना चाहता हूँ।"

"हाँ कहिए।"

"मैं नीला से विवाह करने का इच्छुक हूँ। मैं जानता हूँ कि वह आपकी इच्छा के विरुद्ध इस विषय मे कुछ नहीं कहेगी। अतएव मैं आपसे अपने विषय मे कुछ कहना चाहता हूँ।"

"हाँ कहिए।"

"मेरे पिता की सम्पत्ति इस समय पच्चीस लाख रुपये से ऊपर है और मै अपने पिता का अकेला लड़का हूँ।

"मैं एम० बी० बी० एस० में प्रथम रहा हूँ।

"मै इस समय डॉक्टर रशीद के साथ सर्जरी का अभ्यास करता हूँ।

"मैंने अपने क्लिनिक के लिए अमीनुद्दौला पार्क मे एक बहुत बडी दूकान ले ली है।

"मैं नीला से प्रेम करता हूँ और समझता हूँ कि वह इस बात से परिचित है।"

इतन कह वह डॉक्टर राधाकृष्ण का मुख देखने लगा। वह डॉक्टर साहब से कुछ कहे जाने की आशा करता था। डॉक्टर साहब ने उसको चुप देख कहा, "आपने नीला से इस विषय में चर्चा की है क्या?"

"ऐसे ही सकेत-मात्र बात हुई है और उससे कुछ उत्तर नहीं मिला।"

"सरदार हरभजन सिह! आज चार लडको ने मुझको नीला के विषय मे कहा है। आप पाँचवे है। मैंने जो कुछ उन चारो को कहा है, वही आपको कहता हूँ। मैं आप-सब के विषय में उससे कहूँगा। परन्तु निर्णय करना उसका काम है। यदि उसने अपना निर्णय आप तक पहुँचाने का काम मुझको सौंपा, तो आपको यथा समय सूचित कर दूँगा।"

जब हरभजन सिह को पता चला कि नीला से विवाह करने वाले चार अन्य उम्मीदवार भी है, तो उसके पाँव तले से मिट्टी खिसक गई। वह मन में विचार करता था कि वे कौन-कौन हो सकते है? उसको अभी तक

सन्देह था सुशील, प्रबोध और रामचरण पर। चौथे के विषय मे वह कुछ नहीं जानता था। उसने साहस कर पूछा, "क्या अन्य उम्मीदवारों के नाम जान सकता हूँ?"

"नाम बताने उचित नहीं। इस पर भी आप सभ्य और सुशील हैं। इस कारण आपके लिए इतना कर सकता हूँ कि यदि आपको किसी पर सन्देह हो तो पूछ सकते हैं कि वह मेरे पास इस प्रयोजन से आया है या नहीं। मैं आपको हाँ अथवा न में बता दूँगा।"

हरभजन सिंह ने इसको भी सुअवसर समझा। इस कारण उसने पूछा, "क्या एक सुशीलकुमार हैं?"

"नहीं। वे मेरे पास अभी तक नहीं आये। मैं उनसे यह आशा तो करता था, परन्तु उन्होंने मुझसे अभी तक इस विषय पर बात नहीं की।"

इससे तो हरभजन सिंह को भारी विस्मय हुआ। इसका अर्थ हुआ कि कम से-कम दो हैं, जो उसके ज्ञान से बाहर हैं। उसने फिर पूछा, "तो क्या एक प्रबोध जी हैं।"

"हाँ, एक वे हैं।"

"दूसरे श्री रामचरण हैं क्या?"

"नहीं, वह तो नीला को बहन मानता है।"

"तो फिर और कौन हो सकते हैं?"

"अनुमान लगाओ।"

हरभजन सिंह इससे अधिक अनुमान नहीं लगा सका। इस कारण बात बदल कर उसने पूछा, "कोई भी हो, मैं तो यह समझता हूँ कि आप चाहे नीला देवी को कितनी भी स्वतन्त्रता दें, वह आपकी सम्मति से ही अपना निर्णय बनायेगी। अतएव आपके सम्मुख अपना निवेदन लेकर आया हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आप इस विषय मे मेरे अनुकूल सम्मति देंगे।"

"मिस्टर हरभजन सिंह! नीला के विषय में आपका अनुमान ठीक

ही प्रतीत होता है। वह मेरी सम्मति माँगेगी और कदाचित् उसको मान्यता भी देगी, परन्तु मुझको अपनी सम्मति बनाने के लिए आपसे दिया गया आपका विवरण पर्याप्त प्रतीत नहीं हुआ है।"

"आप आज्ञा करिये। और किस विषम मे आप जानना चाहते हैं।"

"देखिये, प्रबोध से इस विषय मे मेरी बातचीत हुई है और उससे मैंने पूछा था कि वह नास्तिक है और यदि उसकी पत्नी ने उसके घर में ही किसी देवी-देवता का प्रतिष्ठान कर लिया तो वह क्या करेगा ?

"वह इसका उत्तर नहीं दे सका। इस पर मैंने उसको कहा था, प्रबोध बेटा! पहले अपने मन को समझाने का प्रयत्न करो। गृहस्थ एक सयुक्त जीवन है। एक से अधिक प्राणियो के इकट्ठे रहने का नाम परिवार है और गृहस्थ तथा परिवार पर्यायवाचक शब्द हैं। इकट्ठे रहने के कुछ नियम है। उन नियमो में सहिष्णुता, सुहृदयता और परस्पर अनुकूलन-क्रिया अत्यावश्यक हैं। धन, ख्याति और बुद्धि का विकास तो आते-जाते रहते है। इनका गृहस्थ-जीवन से कुछ अधिक सम्बन्ध नहीं है।"

हरभजन सिह इसका अर्थ समझने मे लगा था कि डॉक्टर राधाकृष्ण ने एक प्रश्न कर दिया, "मान लो तुम्हारी पत्नी अपनी सन्तान को केश-धारी बनाना नहीं चाहती, तो तुम क्या कहोगे ?"

यह प्रश्न इतना नग्न था कि हरभजन सिंह को समझने मे कठिनाई नहीं हुई। उसने कहा, "डॉक्टर साहब! मै आपका आशय समझ गया हूँ। इसका उत्तर मै विचार कर दूँगा। यह प्रश्न केवल मेरे विचारों और भावनाओं से ही सम्बन्ध नहीं रखता, प्रत्युत इसका सम्बन्ध तो मेरे माता-पिता और अन्य सम्बन्धियो से भी है।"

"ठीक है। यह मैंने एक ऐसी बात कही है, जिसकी सम्भावना हो सकती है। इस पर भी विश्वास से नहीं कहा जा सकता कि यह अवश्य होगी ही। इस विचार-स्वातन्त्र्य का प्रकटीकरण किसी अन्य रूप मे भी हो सकता है।"

१४

सुशील भी इस चाय पार्टी पर यह विचार कर आया था कि नीला से विवाह के विषय में विचार करेगा, परन्तु उसके विचारों मे एकदम परिवर्तन हुआ, जब उसने अमृतकौर को देखा ।

उसको अमृत नीला से अधिक सुन्दर और विकसित मन की लड़की प्रतीत हुई । जब वह नीला को अपनी भेंट, एक पार्कर पैन, दे चुका और उसको अन्य लोगों से मिली भेंट की वस्तुएँ देख चुका तो वह पुनः अपने स्थान पर लोट आया । अमृत और रजनी पहले ही वहाँ पहुँच चुकी थीं । हरभजन सिंह डॉक्टर राधाकृष्ण से बातें कर रहा था । जब यह उनके पास पहुँचा तो अमृत ने पूछा, "कितने का खरीदा है यह पैन आपने ?"

"यह पचासी रुपये का मिला है । पाँच वर्ष तक वह मेरी सहपाठिन रही है और अब हस्पताल में सहयोगिन है । अब आगे भगवान् जाने कौन किधर जायगा । अतएव मैंने अपनी एक स्मृति उसको देनी उचित समझी ।"

"मैंने समझा था कि आप भी नीला से विवाह के उम्मीदवार हैं । भैया ने ममी से कहकर एक बढिया टॉप्स का जोड़ा मँगवाया है । वे आज विवाह का प्रस्ताव करने वाले हैं ।"

"तुम्हारे भैया ने यह तुमको बताया है क्या ?"

"मुझको तो नहीं बताया । वह माँ को कह रहे थे और मैंने सुन लिया था ।"

"तुम क्या समझती हो, नीला तुम्हारी भाभी बनने योग्य है क्या ?"

"मैं उसको अच्छी तरह नहीं जानती, अभी दूर से ही देखा है । पर जब भैया उसको पसन्द करते हैं, तो ठीक ही होगी ।"

"वह तुम जितनी सुन्दर तो है नहीं ।"

अमृत का मुख लाल हो गया । इस पर भी उसने हँसकर कहा "सुन्दर का अर्थ मैं नहीं समझी । वह मुझसे कहीं अधिक पढी लिखी औ लम्बी-ऊँची है । मुझको तो वह बहुत ही भली प्रतीत हो रही है ।"

"भली तो वह है ही, पर अमृत! तुम अपने विषय मे बहुत कम जानती हो। कारण यह कि तुम्हारी बुद्धि और मन के विकास का अनुमान लगाने वाला तुम्हारे घर मे शायद कोई नहीं।

"मैं चाहता हूँ कि एक दिन वहाँ जाऊँ, जहाँ तुम्हारा नृत्य तथा सगीत हो रहा हो। यदि उसमें भी तुमको वैसे ही पाया, जैसा मैं अपने मन मे तुम्हारा चित्र बना बैठा हूँ, तो मै तुमको एक आदर्श लड़की मानने लगूँगा।"

अमृत की ऐसी प्रशसा पहले किसी ने भी उसके मुख पर नहीं की थी। यह ठीक था कि उसको नृत्य और सगीत में बहुत रुचि थी और उसको सिखाने वाले कहते थे कि वह इन कलाओं में बहुत उन्नति कर रही है, परन्तु उसका किसी के मन मे कुछ चित्र बन गया है और वह बहुत ही सुन्दर और मधुर है, यह बात उसके मन में एक विशेष प्रकार की गुदगुदी उत्पन्न करने वाली थी।

उसने केवल यह कहा, "आप कोई ऐसा अवसर बनाइये, जहाँ मैं आपके समुदाय की कला-प्रवीणता देख सकूँ और जहाँ मैं भी अपनी योग्यता दिखा सकूँ।"

"बहुत ठीक। मैं शीघ्र ही ऐसा कोई प्रबन्ध करने का यत्न करूँगा। हमारी एक नाटक-सभा है। उसके किसी समारोह पर तुमको बुलाऊँगा।"

यह अवसर बहुत शीघ्र आया। नीला के जन्म दिन के एक मास के भीतर ही बंगला नाटक मण्डली ने सगीत समारोह किया। कवि सम्राट् श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की पुण्य-स्मृति में यह समारोह किया गया और व्यवसाई तथा अव्यवसाई सब प्रकार के सगीतज्ञो के कला-प्रदर्शन का प्रबन्ध था। बच्चो, युवकों तथा वृद्ध-जनों को भी इसमे भाग लेने का अवसर दिया गया। इसी प्रकार उस समारोह मे पुरुष और स्त्रियाँ भी भाग ले रही थीं। बगाली समुदाय से बाहर के भी एक-दो भाग ले रहे थे और उनमे एक अमृतकौर भी थी।

समारोह का प्रबन्ध गगाप्रसाद हाल में किया गया और वहाँ पर्दे इत्यादि लगाकर सजावट कर दी गई थी।

अमृत अपने शिक्षक और अपने परिचित तबला बजाने वाले को साथ लाई थी। वाद्यों में वह वीणा बजाती थी। यह पजाबी समुदाय में एक नवीन बात थी।

कार्यक्रम ऐसा रखा गया था कि बारी-बारी से एक व्यवसाई सगीतज्ञ और तदनन्तर एक अव्यवसाई कला-विज्ञ मच पर आता था और कला-प्रदर्शन करता था। इसी प्रकार एक बच्चा, एक युवक और एक वृद्ध अपना कार्य दिखाता था। भाग लेने वाला में स्त्रियाँ अधिक थीं। यह भिन्नता दर्शकों में रुचि बनाए रखने के लिए थी।

सुशीलकुमार इस नाटक-मण्डली का, जिसकी ओर से यह समारोह किया जा रहा था, मन्त्री था। वह ही मच पर आकर कलाकारों का परिचय दे रहा था। दर्शकों में नीला, प्रबोध, हरभजन सिह, रामचन्द्र और अन्य कई अबगाली भी थे। नीला के माता पिता तथा माधुरी भी आमन्त्रित थे। इस प्रकार एक विराट समारोह का प्रबन्ध किया गया था।

आरम्भ, वन्दे मातरम के गीत से किया गया। एक दर्जन दस वर्ष से छोटी बालिकाओं द्वारा यह वन्दना अति मधुर स्वर, ताल लय के साथ गाई गई। इस समय सब दर्शक-गण खड़े होकर राष्ट्रीय गान सुनते रहे।

पश्चात् विधिवत् कार्य आरम्भ हुआ। नृत्य-गान और वाद्य-वादन चलता रहा। कार्यक्रम के मध्य मे अमृतकौर की बारी आई। उसका वाद्य-वादन सगीत और नृत्य तीनों कार्यक्रम होने वाले थे। ऐसा प्रतीत होता था कि सुशील ने उसके लिए समय सबसे अधिक विशेष रूप से रखा था। सुशील को भय था कि कहीं उसकी कला, दर्शकों के लिए रोचक न हुई तो भद्द हो जावेगी, इस कारण उसने अमृत के मच पर आने से पूर्व उसको कह दिया, "देखो अमृत। यदि रग जमा तो तुमको पूरा समय दिया जायगा और यदि श्रोतागण उकताने लगे तो मैं तुमको मन्च के किनारे लगी लालबत्ती जलाकर सकेत कर दूँगा और तुमको शीघ्र ही

बन्द कर देना होगा।"

"आप चिन्ता न करें। मैं लाल बत्ती का ध्यान रखूँगी।"

पश्चात् सुशील ने श्रोतागणों को अमृतकौर का परिचय कराया। "नगर के विख्यात् उस्ताद सीतापुर वाले तिवारी जी की ये शिष्या हैं। ठाकुरबाबू के लिए मन मे श्रद्धा और भक्ति से ही प्रेरित होकर इन्होंने हमारा निमन्त्रण स्वीकार किया है। ये पहले वीणा पर वागेश्वरी बजायेंगी। तदनन्तर हिन्दी मे मालकौंस सुनायेंगी और पश्चात् अपना नृत्य दिखायेंगी।"

अभी तक सब कार्यक्रम बंगला में ही चल रहा था। वाद्य यन्त्रों में भी कोई बाँसुरी और कोई बैंजो बजाने वाला ही आया था। नृत्य भी छोटे-छोटे बच्चों के ही हुए थे। इस कारण एक युवती को वीणा लेकर मञ्च पर आते देख सब दत्त-चित्त हो गए।

अमृत ने वीणा बजाई। ज्यों-ज्यों मींड और आलाप निकलते गए, श्रोतागण मन्त्र-मुग्ध की भाति बैठे सुनते गए। धीरे-धीरे संगीत की गति बढ़ने लगी। तबले वाले की उँगलियाँ तबले पर नाचने लगीं। झनक-झीं-झनक झीं की ध्वनि से हाल विकम्पित होने लगा और श्रोतागणों के सिर झूमने लगे।

वीणा-वादन घोर करतल-ध्वनि मे बन्द हुआ। यद्यपि श्रोतागणों का आग्रह था कि एक और धुन बजाई जाए, परन्तु सुशील ने कह दिया, "कार्यक्रम लम्बा होने के कारण यह सम्भव नहीं है।"

अतएव मालकौंस के आलाप आरम्भ हुए। आलापों के पश्चात् बोल, बोलतान, तानें हुईं। प्रत्येक बार जब तान सम पर आकर तबले वाले के साथ समाप्त होती तो वाह-वाह से हाल गूँज उठता।

आधा घण्टा भर के संगीत के पश्चात् अमृत ने उठकर हाथ जोड श्रोतागणों का धन्यवाद किया और कहा, "मैं अपना समय न दो ही 'आइटमों' पर ले चुकी हूँ, अतएव अब क्षमा चाहती हूँ।" दर्शकों ने शोर मचा दिया, "नृत्य अवश्य हो, नृत्य अवश्य हो।"

इस पर सुशील ने मच पर आकर कहा, "एक लड़की रजनी ने अपना समय अमृत देवी जी के लिए दे दिया है। अतः मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वह अपने नृत्य के कार्यक्रम को मत रोकें।"

विवश पॉव में घु घरू बाँधकर अमृत मञ्च पर आ गई। और उसका उस्ताद स्वय तबला बजाने के लिए मच पर आ बैठा। एक साथी वायलिन बजाने लगा। अमृत नाचने लगी।

इस रात अमृत ने अपने पूर्ण यत्न से नृत्य किया। चार घण्टे के कार्यक्रम में अमृत का कार्य सबसे लम्बा और प्रशसनीय रहा।

समारोह के पश्चात् जब अमृत जाने लगी तो सुशील, नीला और अन्य परिचितो ने अमृत को इस सफल कला-प्रदर्शन पर बधाई दी। अमृत बहुत प्रसन्न थी। जब वह हाल के बाहर निकल हरभजन सिह के साथ मोटर में सवार होने लगी तो सुशील आ गया और उसने अमृत का बहुत ही धन्यवाद किया। अमृत ने कहा, "मेरी एक लालसा पूरी नहीं हुई। मैं रजनी का सगीत सुनना चाहती थी।"

"वह तो हम तुमको किसी दिन घर पर ही सुनवा देंगे।"

"ज़रूर ?"

"हाँ, ज़रूर।"

१५

हरभजन सिह ने अमृत को इतना अच्छा गाते-बजाते पहले नहीं सुना था। इससे वह विस्मय में पूछने लगा, "आज क्या बात थी अमृत! तुमने बहुत ही अच्छा गाया है ?"

वे मोटर मे घर जा रहे थे। अमृत ने उत्तर में कहा, "मैंने सुन रखा था कि बगाली लोग सगीत में बहुत ही प्रवीण होते हैं। इस कारण मैं बहुत अभ्यास कर यहाँ आई थी।"

"तो विशेष तैयारी थी, इस समारोह के लिए।"

"मैं विचार करती थी कि आपके मित्र सुशील क्या समझेंगे कि

पजाबी भी कलाकार होते हैं अथवा नहीं।"

"तो सुशील को निराश न करने का भी विचार था।"

अमृत को हरभजन सिंह की बातों में कुछ व्यंग-सा प्रतीत हुआ। इस कारण उसने बात बदल दी। उसने पूछ लिया, "भैया! नीला का क्या हुआ?"

"नीला का क्या होना था?" हरभजन ने विस्मय मे पूछा।

"आप से सगाई। कुछ निश्चय हुआ?"

"उसने इन्कार कर दिया है।"

"बिलकुल?"

"हाँ। उसने कहा है कि उसने कभी मन मे चिन्तन भी नहीं किया था कि उसका विवाह किसी सिख केशधारी से होगा।"

"इसका क्या अभिप्राय?"

"वह हमारे सम्प्रदाय के लोगो को पक्षपात-युक्त धर्मान्ध समझती है।"

"तो आपने उसका भ्रम निवारण नहीं किया?"

"कैसे करता? वह बात तो सत्य कहती थी। उसने एक घटना बताई और मे उस घटना का साक्षी हूँ। पिछले वर्ष वैशाखी के दिन गुरुद्वारा मे लगर था। सब सगत को भोज में निमन्त्रण था। प्रभुदयाल की माता, माधुरी और नीला भी लगर मे सेवा-कार्य करने के लिए आई थीं और खाना बनाने वालों का हाथ बँटा रही थी। उस समय सरदार कर्तार सिंह गुरुद्वारा के मन्त्री की पत्नी आई और ऊँची आवाज में बोली, 'जिन बहनो ने अमृत नहीं छका, वे भोजन बनाने का कार्य न करें।'

"परिणाम-स्वरूप प्रभुदयाल की माता, माधुरी. नीला और कुछ अन्य हिन्दुओ के घरों से आई स्त्रियाँ काम छोड़ पीछे हट गई। प्रभुदयाल की माता को भोजन पाने को कहा गया परन्तु नीला और माधुरी उनको लेकर बिना भोजन पाये चली आईं। प्रभुदयाल की माता ने भी इस आदेश को अपमान-जनक माना, परन्तु उन्होंने नीला और माधुरी से सौगन्ध ले ली कि वे घर जाकर किसी को यह बात नहीं बतायेगी।"

इस समय मोटर कोठी पर पहुँच गई थी। मोटर को 'गैरेज' के सामने खड़ी करके भी हरभजन सिंह मोटर से नीचे नहीं उतरा। उसने एक लम्बी साँस खींचकर कहा, "हिन्दुओं में भगी-चमारों के हाथ का नहीं खाया जाता। इस विषय में भी वे बदल रहे हैं, परन्तु हमने अमृत छके हुओं की एक नवीन जाती बना ली है और दूसरों को चूड़ा-चमार समझने लगे हैं।

"ऐसी अवस्था में नीला ने ठीक ही कहा है कि वह किसी सिख से विवाह नहीं कर सकती।"

"पर आपको कहना चाहिए था कि आप इतने सकुन्चित विचार के नहीं हैं।"

"कहा था, परन्तु उसने कहा, 'हम हिन्दुओं ने छुआछूत का विचार त्याग दिया है। परन्तु जब तक आप पाँचो 'ककार' रखते हैं, तब तक कौन आपके कहने का विश्वास करेगा?' फिर उसने कहा, 'विवाह करने से आप एक लड़की को अपने घर लाते हैं। घर में केवल पति ही तो नहीं होता। पति के सम्बन्धी भी होते हैं और उनके भावों का भी तो ध्यान करना है ही। आपकी समाज पाँच ककारों को न रखने वालों को अपने से निकृष्ट समझती है और आपके माता पिता उस समाज का एक अंग हैं। तो फिर आपके विशाल विचारों का कुछ अर्थ नहीं रह जाता।'"

अमृत इसको सुन गम्भीर हो गई। हरभजन सिंह ने गाड़ी से उतर कर अमृत के उतरने के लिए गाड़ी का दरवाज़ा खोल दिया। वह विचारों में खोई हुई उतरी और अन्यमनस्क भाव से कोठी में चली गई।

रात-भर उसको नींद नहीं आई। उसको कुछ ऐसा समझ आया कि नीला की कथा सत्य नहीं हो सकती। वह इसकी सच्चाई को जानने के लिए उत्सुक थी। इस कारण वह दिन चढ़ने की प्रतीक्षा करने लगी।

अगले दिन वह अपनी माँ के पास गई और उससे वैशाखी के दिन के लगर की बात पूछने लगी। उसने वह सब बात, जो हरभजन सिंह

ने उसको बताई थी, कहकर पूछा, "क्या यह सच है मम्मी ?"

"क्यों ?"

"इसी कारण नीला ने भैया से विवाह करने से इन्कार कर दिया है।"

"तो कोई और पंजाबी लड़की मिल जायगी। हरभजन सिंह तो उसके पीछे पागल हो रहा है। क्या लगा हुआ है उसको ?"

"माँ ! तो यह बात सत्य थी न ?"

"तो हुआ क्या ? हमारे धर्म मे अमृत पान किये हुओं को श्रेष्ठ मानते हैं।"

"वैसे ही हिन्दुओं मे यज्ञोपवीत पहनने वालों को ऊँचा माना जाता है। तो अन्तर क्या हुआ ?"

"पर वे तो छोटी जाति वालों को यज्ञोपवीत देते ही नहीं। हम तो सब को अमृत पीने को देते हैं।"

"अब आर्य समाजी तो चमारों को भी यज्ञोपवीत देने लगे हैं, पर मम्मी, मैं तो यह पूछती हूँ कि यज्ञोपवीत न पहनने वाले और अमृत न पिये हुए अछूत क्यों हो गए ?"

"हां। गुरुद्वारे मे उनकी प्रतिष्ठा नहीं हो सकती।"

"तभी नीला ने एक ऊंची जाति वाले से विवाह करने से इन्कार कर दिया है।"

"देखो अमृत !" उसकी माँ ने कहा, "दिल्ली के एक प्रसिद्ध प्रोफेसर सरदार नरिंजन सिंह ने अपनी लड़की का रिश्ता भेजा है और वे बीस हजार रुपया दहेज में देने वाले हैं। सम्पत्ति मे चौथा भाग पृथक् मिलेगा।"

अमृत ने कुछ उत्तर नहीं दिया और वहां से चली आई। आज जब वह कॉलेज जाने लगी तो हरभजन सिंह से कहने लगी, "भैया, तीस रुपये उधार तो दो।"

"क्या करने हैं ?"

"चाहिएँ। महीने की पहली तारीख को खर्चा मिलने पर दे दूँगी।"

हरभजन सिंह ने अपनी मेज़ के दराज़ में से एक सौ रुपये का नोट निकालकर देते हुए कहा, "टूटे हुए नहीं हैं। शेष सायकाल वापस कर देना।"

आज बुधवार था। हरभजन सिंह को सायकाल भी हस्पताल जाना था। अमृत का कॉलेज दो बजे ही समाप्त हो जाता था। हरभजन सिंह को रुपयों की आवश्यकता थी। इस कारण वह अमृत के लौटने की प्रतीक्षा करने लगा। जब अमृत चार बजे तक भी नहीं आई तो हरभजन सिंह माँ से बीस रुपये उधार लेकर चला गया। जाते हुए कह गया, "अमृत के पास मेरे सत्तर रुपये हैं। माँ! ये बीस उनमें से ले लेना।"

१६

अमृत पाँच बजे के लगभग आई। आते ही वह अपने कमरे में चली गई और वहाँ जाकर दरवाजा भीतर से बन्द कर, सिर से कपड़ा उतार शीशे के सामने खड़ी हो, अपने कटे बालों को देखने लगी। बाल काटने वाले ने उस पर लहरें बनाने तथा नीचे कुंडल बनाने के तीस रुपये लिए थे। इसी के लिए वह हरभजन सिंह से रुपये ले गई थी।

अमृत ने अपने को दर्पण में देखा तो उसको समझ आया कि उसका सौन्दर्य दुगुना हो गया है। अपने सौन्दर्य को देखने के साथ-साथ वह सिख रूढ़िवादियों से अपने विद्रोह को स्मरण कर हा 'हा' कर हँस पड़ी। उसके मस्तिष्क में घर वालों का चटपटाना नृत्य करने लगा और मन-ही मन वह उस संघर्ष का, जो अब होने वाला था, स्मरण कर गर्व से फूलने लगी। उसके मुख से अनायास ही निकल गया, "बहुत मज़ा रहेगा।"

वह अभी दर्पण में अपने मुख को देख ही रही थी कि किसी ने बाहर से उसके कमरे का दरवाज़ा खटखटाया। वह मन में विचार करती थी कि यदि दरवाजा खटखटाने वाली उसकी माँ हो तो बहुत मज़ा रहे।

उसका विचार था कि माँ पहले तो नाराज होगी, परन्तु वह जल्दी ही मान जायगी।

दरवाजा जब कई बार खटखटाया जा चुका तो उसने आराम से सिर पर ओढनी की और दरवाजे की ओर घूमकर पूछा, "कौन?"

"मैं।" अमृत समझ गई कि माँ है। उसने सिर पर कपड़ा रहने दिया और दरवाज़ा खोल दिया। माँ ने भीतर आते ही पूछा, "क्या कर रही हो अमृत?"

"आराम कर रही थी मम्मी।"

इतना कह वह पलग पर बैठ गई। माँ पलंग के पास रखी कुरसी पर बैठ गई। बैठकर उसने कहा, "हरभजन कह गया है कि उसके रुपयों में से बीस रुपये मैं ले लूँ।"

अमृत ने आते ही पर्स अपने सिरहाने के नीचे रख दिया था। घूम-कर वह उसको उठाने लगी तो उसके सिर से कपड़ा उतर गया। माँ ने उसके घुँघराले कटे बाल देख लिए। वह "ओह!" कहकर देखती रह गई। अमृत ने पर्स उठा ली और सीधी हो पर्स में से रुपये निकालने लगी तो माँ ने एक चपत उसके मुख पर लगाते हुए कहा, "यह सिर कब मुँडाया है?"

अमृत को चपत लगने की आशा नहीं थी। इस कारण वह एक क्षण तक तो भौचक्की हो माँ का मुख देखती रह गई, परन्तु तुरन्त ही अपने को सँभालकर बोली, "आज ही कटाये है मम्मी। क्यों, अच्छे नहीं लगे?"

"नहीं! चुड़ैल लगती हो।"

"बहुत सुन्दर लगती हूँ, माँ!"

"तुम अन्धी हो रही हो। तुमको अपने माता-पिता के अपमान की चिन्ता नहीं। हमारे सम्बन्धी, तुम्हारे पिता और उनके मित्र, यहाँ तक कि नौकर-चाकर भी बातें बनायेंगे। अब तुम गुरुद्वारे में भी नहीं जा सकोगी।"

"इसीलिए तो कटाये हैं। मम्मी! गुरुद्वारा छोड़कर बाहर विशाल संसार में मेरे लिए द्वार खुल गए हैं।"

"चुप! बक-बक बन्द करो।"

"पर हुआ क्या है? मेरे मामा मौसिया तो इसको पसन्द ही करेंगी।"

"मुझको उनसे क्या है?"

"तो मुझसे भी कुछ नहीं रहेगा क्या?"

"अच्छा देखो, कमरे से बाहर नहीं निकलना।" इतना कह वह बीस रुपये ले अमृत के कमरे का दरवाज़ा बाहर से बन्द कर चली गई।

अमृत अभी तक अपने गाल पर चपत की वेदना को चुपचाप सह रही थी। अब माँ के चले जाने पर, वह उठी और दर्पण में मुख देखने लगी। गाल चुन चुन कर रहा था और लाल हो गया था। उसने ड्रेसिंग टेबल पर से क्रीम उठाई और उँगली से थोड़ी लेकर लाल हुए गाल पर मलने लगी।

क्रीम लगाने से उसको शान्ति मिली और उसने मुस्कराते हुए अपने प्रतिबिम्ब को कहा, "देखो अमृत! यह आजादी की प्रथम यन्त्रणा है। अभी तो और मुसीबत आने वाली है। धैर्य से सहन करने के लिए तैयार हो जाओ। अन्तिम विजय तुम्हारी होगी।"

इतना कह वह फिर हँस पड़ी। पश्चात् वह मन में यह विचारती हुई कि सुशील अब उसको कैसे पायेगा, पलग पर लेट गई। उसको स्मरण हो आया कि सुशील ने उसको कहा था, 'नीला तुमसे कम सुन्दर है।' फिर कहा था, 'कदाचित् तुम्हारे शरीर और मन के सौन्दर्य का अनुमान लगाने वाला तुम्हारे घर मे कोई नहीं।'

वह मन मे विचार करती थी कि अब तो सुशील को उस पर मोहित हो जाना चाहिए। उसका विचार था कि अब वह लखनऊ की एक दो सर्वश्रेष्ठ सुन्दरियों मे गिनी जानी चाहिए।

इस प्रकार के विचारों मे पड़ी हुई, सुशील की मधुर स्मृति में खोई

हुई सो गई। उसकी नींद तब खुली जब उसके कमरे का द्वार खुला। उसने मुख उठाकर देखा। कमरे मे अँधेरा हो रहा था। वह समझी कि वह दो घण्टे तक सोई है। हरभजन सिह ने बिजली का स्विच दबाया तो प्रकाश हो गया। उसने देखा कि हरभजन सिह के साथ उसके माता-पिता भी है। तीनो भीतर आ गए तो उसकी मा ने दरवाजा भीतर से बन्द कर लिया और तीनो उसके पलंग के पास आकर खडे हो गए।

सरदार बढियाम सिंह ने बहुत ही नम्र भाव मे कहा, "अमृत! यह तुमने क्या किया है?"

"व्यर्थ की दासता से छुट्टी पाई है, भापा जी!"

हरभजन ने दो कुर्सियाँ दीवार के समीप से उठाकर पलंग के समीप रख दी। एक कुर्सी वहाँ पहले ही रखी थी। तीनो कुर्सियो पर बैठ गए। अब पिता ने पूछा, "दासता किस बात की थी बेटी?"

"बालो को कैंची लगाने की मनाही थी। साथ ही इस बात का अभिमान था कि हम पाच ककारो को रखने वाले न रखने वालो से श्रेष्ठ है। यह अभिमान अब हट गया है और अब मैं ससार के अन्य कोटि-कोटि मानवों के बराबर हो गई हूँ।"

"पर हिन्दुस्तान मे सब औरते बाल रखती है। यहाँ लम्बे बाल सौन्दर्य का लक्षण समझे जाते है।'

'भापा जी! सौन्दर्य की धारणा दिन-प्रतिदिन बदल रही है। आज इतने बालो को ही अच्छा समझा जाता है। जैसे पहनने के कपडो मे धारणाएँ बदल रही है, वैसे ही अन्य शृंगार-प्रसाधनो मे भी है।"

"तुमने अमृत भी तो पिया हुआ है?'

"बाल कट जाने से वह निकल नहीं जायगा।"

"पर उस समय कुछ प्रतिज्ञा भी तो की थी?"

"हाँ। वह व्यर्थ की प्रतिज्ञा थी। उसका पन्थ से कोई सबन्ध नहीं है।'

"परन्तु इसका प्रभाव मेरे पर तो होगा।"

"क्या प्रभाव आप पर हो सकता है ?"

"मेरी प्रतिष्ठा समाज में कम हो जायगी।"

"क्यों ? आपने क्या किया है ?"

"तुमने प्रतिज्ञा भग की है और तुम मेरी बेटी हो।"

"मैंने प्रतिज्ञा भग नहीं की और यदि की है तो उसका उत्तरदायित्व मुझ पर है।"

"पर लोग तो इतनी बात समझ नहीं सकते।"

"जो वे समझ हैं, उनके समाज में आप रहते क्यों हैं ? इस समाज को छोड दीजिये। न रहेगा बॉस न बजेगी बॉसुरी।"

"देखो अमृत। तुम अभी नाबालिग हो। मैं तुमको आज्ञा देता हूँ कि जब तक तुम्हारे केश फिर लम्बे नहीं हो जाते, तब तक इस कमरे से बाहर तुम कदम नहीं रखो।"

"तो कॉलेज की पढाई ?"

"कुछ जरूरत नहीं उसकी।"

"अच्छी बात है, आप बाहर से ताला लगा दीजिये, नहीं तो मैं बाहर चली जाऊगी और बाज़ार में घूमूँगी।"

"मेरा कहा भी नहीं मानोगी ?"

"कोई अक्ल की बात हो तो मानूँ। मै "

पिता को क्रोध चढ आया और उसने भी एक ज़ोर का चॉटा उसके मुख पर दे मारा।

अमृत चॉटे के बल से पलग पर लोट पोट हो गई। हरभजन सिह अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ। उसे उठता देख बदियाम सिह ने कहा "बैठो हरभजन सिह। मेरी बात अभी समाप्त नहीं हुई।"

"मै समझता हूँ कि हो गई है। आपने इसको पीटा और समझ लिया कि ठीक किया है।"

"नहीं, यह तो कुछ भी नहीं। यदि यह इस कमरे से बाहर गई तो इसकी टांगे तोड डालूँगा।"

इतना कह वह उठ खड़ा हुआ। अमृत ने कुछ पीछे हटकर कहा, "अगर दरवाजा बन्द नहीं होगा और कोई रोकने वाला नहीं होगा तो मैं, जहाँ मन करेगा जाऊँगी। चुपचाप अन्दर बैठे रहने का मतलब यह होगा कि मैं अपनी भूल मानती हूँ।"

"दरवाजा बन्द कर दूँगा और बाहर पहरेदार बैठा दूँगा।" इतना कह बढ़ियाम सिंह कमरे से बाहर निकल गया।

हरभजन सिंह भी जाने लगा तो उसको रुपयों की याद आ गई। उसने कहा, "अमृत ! कुछ रुपये बचे हैं या नहीं?"

"भैया ! उस बटुए में रखे हैं। ले लो।"

हरभजन सिंह ने बटुए में से पचास रुपये निकाल लिए और उनको अपनी जेब में रख कमरे से बाहर चला गया। अमृत की माँ पीछे रह गई थी। उसने नम्रता से कहा, "अमृत बेटी ! हठ ठीक नहीं होता। पहले तो तुमने भूल की और ऊपर से बहस करती हो?"

"मम्मी ! अब जाओगी भी या नहीं।"

"क्यों जाऊँ?"

"मैं अपने मुख पर सेक करना चाहती हूँ। तुम जाओ तो करूँ।"

"लाओ मैं कर दूँ।"

"नहीं। चपत लगाने वाले क्या सेक करेंगे। तुम जाओ माँ। भापाजी से कह देना कि इस समय तो मेरा मुख सूज गया है। जब ठीक हुआ तो मैं बाहर जाऊँगी। मैं अपनी इच्छा से कैद होना नहीं चाहती। अपने-आप छुपकर बैठने के अर्थ होंगे कि मैं अपनी भूल मान गई हूँ। मुझको अपनी भूल समझ नहीं आई, इस कारण मुझको छुपकर बैठने की आवश्यकता नहीं। जिसको मुझको छुपाकर रखने की आवश्यकता है, वह मुझे ताला लगाकर रखे।"

"लातों के भूत बातों से नहीं मानते। तुमको ताला लगाना ही होगा।"

इतना कह माँ वहाँ से उठी और कमरे से बाहर चली गई। बाहर

दरवाज़े को बन्द कर कुंडा चढ़ा दिया।

१७

अमृत के संगीत और नृत्य ने नीला के मन पर और प्रबोध के मन पर भी बहुत गहरा प्रभाव उत्पन्न किया। नीला, प्रबोध और माधुरी 'रवि-स्मृति समारोह' से पैदल लौट रहे थे। माधुरी को संगीतादि से कोई विशेष रुचि नहीं थी। वह तो प्रबोध के आग्रह पर ही चली आई थी।

मार्ग में प्रबोध ने नीला से कहा, "ऐसा प्रतीत होता है कि हरभजन सिंह का परिवार अच्छा सभ्य और शिक्षित है। जिस परिवार की लड़की इतना अच्छा गा और नाच सकती है उसका जीवन स्तर श्रेष्ठ ही होना चाहिए।"

माधुरी ने कहा, "नाच और गाना तो बाहरी बातें हैं। यह आवश्यक नहीं कि अच्छे गाने वाले श्रेष्ठ विचारों के ही हों।"

नीला ने हँसते हुए कहा, "मैं समझती हूँ कि प्रबोध जी का परिचय अमृत से करा दिया जाये और हो सके तो इस श्रेष्ठ परिवार की लड़की से प्रबोध जी का नाता करा दिया जाय।"

"तो क्या सब श्रेष्ठ लोगों से नाते ही जोड़े जाते हैं?"

"क्या विवाह के लिए अमृत अच्छी लड़की नहीं?"

"यह केवल नाच गाना देखने से कैसे कह सकता हूँ?"

"इस पर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि उनका परिवार पढ़े लिखे लोगों का है। प्रबोध भैया! लड़की बहुत अच्छी है। गोरी है, नखशिख भी अच्छे हैं, लम्बी चाल की है। और क्या चाहते हैं आप?"

"मैं चाहता हूँ तुम्हारा सिर। तुम्हारी बातों से तो यह पता चलता है कि आखिर तुम्हारा विवाह हरभजन सिंह से होगा ही।"

"वाह! यह कैसे सिद्ध हो गया?"

"तुम अमृत के विषय में 'कन्वैसिंग' जो कर रही हो। इससे तो यही प्रतीत होता है कि तुम्हारा उस लड़की पर कुछ तो अधिकार हो

गया है।"

"वाह जी वाह! यह कैसे सिद्ध हो गया? क्या इञ्जीनियरिंग पढने से मनुष्य युक्तिहीन हो जाता है। किसी दूकान पर रखे सेबों की प्रशंसा करूँ तो क्या मैं दूकान की मालिक हो गई?"

"अच्छा नीला! यह बताओ, तुम मुझसे विवाह के लिए क्यों तैयार नहीं होती?"

"बहुत अच्छा समय ढूँढा है बात करने का? वह देखिए हमारा मकान आ गया है।"

"तो इस बात करने के लिए कोई मुहूर्त्त निकलवाना चाहिए?"

"इसमें सन्देह ही क्या है। रात के ग्यारह बजे, सड़क पर चलते हुए विवाह की कन्वैंसिंग नहीं की जाती।"

"तो कल मैं इस विषय पर बात करने आऊँ?"

"ज्योतिषी से पूछकर आईयेगा।"

"मेरे ज्योतिषी तो तुम ही हो?"

"मैंने तो आपके विषय में ज्योतिष लगा रखा है।"

"क्या?"

"इस समय बाजार में चलते-चलते तो बताया नहीं जा सकता। किसी ठीक समय आइये तो बता दूँगी।"

अगले मध्याह्न के समय प्रबोध नीला के घर जा पहुँचा। नीला के पिता अपने क्लिनिक से लौटे तो प्रबोध को बैठा देख पूछने लगे, "कैसे आये हो प्रबोध?"

"नीला ने आज मध्याह्न के भोजन पर बुलाया है।"

"उसके आने में तो अभी एक घण्टा है। वह डेढ़ बजे से पहले हस्पताल से नहीं लौटती।"

"तो मैं कुछ जल्दी आ गया हूँ। अब विचार है कि यहीं उसकी प्रतीक्षा करूँ।"

"हाँ हाँ. मेरा यह अभिप्राय नहीं था कि तुम चले जाओ। मैं तो

यह कह रहा था कि यदि बहुत भूख लगी है, तो मेरे साथ ही भोजन कर लो।"

"नहीं जी, कुछ ऐसी जल्दी नहीं। आप भोजन करिये।"

वह ड्राइंग रूम में बैठा हुआ एक पुस्तक पढ रहा था। डॉक्टर राधाकृष्ण भोजन करने चला गया। भोजन कर विश्राम के लिए वह अपने कमरे में जाकर लेट गया।

डॉक्टर को विश्वास हो रहा था कि नीला ने प्रबोध को जब इस प्रकार आमन्त्रित किया है, तो उसने प्रबोध के विषय में मनमें कुछ निश्चय कर लिया प्रतीत होता है। यद्यपि वह प्रबोध को एक प्रकार से निराश कर चुका था, तो भी वह इस सम्बन्ध से प्रसन्न ही था। प्रबोध उसके मित्र का लड़का था और बच्चे भी बाल्यकाल से एक-दूसरे को जानते थे। डॉक्टर राधाकृष्ण प्रबोध को कम-से-कम हरभजन सिंह से अच्छा समझता था।

नीला की मा आई तो उससे इसी विषय पर बातें होने लगीं। नीला की माँ ने बताया कि जन्मोत्सव के दिन सुशीलकुमार की माँ ने मुझसे नीला के विवाह के विषय में पूछ-गीछ की थी। उसने पूछा था कि नीला की सगाई कहीं की है अथवा नहीं। मैंने जब बताया कि अभी नहीं तो कहने लगी कि नीला बहुत अच्छी लड़की है। बहुत ही प्यारी लगती है। किसी भाग्यशाली के घर ही वह जायगी।

"मैंने समझा कि सुशील के विषय में वह कहने जा रही है, परन्तु उसने सुशील के विषय में बताया कि उन्होंने उसके विषय में सरकार बाबू की लडकी का चुनाव कर रखा है। लडकी गाना बहुत अच्छा गाती है। दसवीं श्रेणी तक पढ़ी है और घर का काम-काज बहुत अच्छा करती है। उसने यह भी बताया कि बंगाली लडकों की बंगाली लड़कियों से ही पट सकती है। खान-पान, रहन-सहन और मनकी भावनाएँ विवाह सम्बन्ध के लिए समान होनी आवश्यक हैं।

"मुझको कुछ ऐसा समझ आया कि वह मुझको सचेत करने के लिए कह रही है कि नीला सुशील की ओर ध्यान न दे।"

डॉक्टर राधाकृष्ण हँस पड़ा और बोला, "तुम्हारा विचार ठीक ही है। इधर कठिनाई यह है कि नीला के विषय में हम कुछ समझ भी तो नहीं रहे। उसकी रुचि का तो कुछ पता ही नहीं चलता।"

"देखें प्रबोध से वह क्या कहती है। लड़का अच्छा है। पढ़ा-लिखा है। पैसे वाला भी है और कारोबारी परिवार का है। नौकरी करने वालों मे उन्नति की एक सीमा-सी रहती है। उनको विचारों के एक ढर्रे पर चलने का स्वभाव-सा बन जाता है। परिणाम यह होता है कि उनमें नवीनता लोप हो जाती है।"

डॉक्टर राधाकृष्ण लेटा तो खुर्राटे भरने लगा और नीला की माँ घर के काम में लग गई।

नीला डेढ बजे आई और ड्रायग रूम मे प्रबोध को बैठा देखकर रात की बातें स्मरण कर गम्भीर हो गई। उसने पूछा, "आप भोजन करेंगे क्या ?"

"इसीलिए तो बैठा हूँ।"

"मैंने समझा था कि किसी ज्योतिषी की प्रेरणा से आए हैं।"

"हाँ, वह भी है; परन्तु पिताजी ने बताया था कि तुम अभी भोजन करने आने वाली हो। मैंने समझा कि एक पन्थ दो काज हो जायेंगे। रोटी खाने के लिए घर नहीं जाना पड़ेगा।"

"तो आइये, मुझको तो बहुत भूख लग रही है।"

: १८ :

"देखो नीला," प्रबोध ने भोजन करते-करते कहा, "मैंने गैरेज ले लिया है और उसमें उचित मशीनरी फिट हो गई है। पेट्रोल का पम्प, हवा भरने की मशीन और ग्राहकों की अन्य सुविधा के प्रबन्ध भी हो गए हैं। अब तो खोलने के लिए कोई अच्छा दिन देख रहा हूँ। काम तो चलेगा ही।

"अब केवल एक काम रह गया है और उसमे तुम्हारी सहायता की

आवश्यकता है।" .

"किस बात में मेरी सहायता चाहते हैं?"

"अपना घर बनाने में।"

"जहाँ इतना लम्बा कारोबार आपने अपने ही बल पर खोल लिया है, वहाँ घर बनाना कौन बड़ा काम है? किसी ठेकेदार को ठेका दे दीजिए और वह घर बनाकर तैयार कर देगा।"

"नहीं देवी जी! मेरा अभिप्राय दीवारें और छत निर्माण करना नहीं। मेरा प्रयोजन घर गृहस्थी से है। उसमें मैं तुमको सहयोगिन बनाना चाहता हूँ।"

"हाँ, एक बात स्मरण आ गई है। आप तो समाजवादी हैं न। यह बताइये कि अपने कारखाने में मालिक बनकर रहेंगे अथवा नौकर?"

"यूँ तो समाजवादी समाज की स्थापना करना सरकार का काम है। सरकार ने इस बात की घोषणा भी कर रखी है। इस पर भी मैं तो अपने कारखाने में सब काम करने वालों के समान ही अपने को समझना चाहूँगा। मैं ऐसा कर रहा हूँ कि सरमाये का भाग निकालकर शेष सब काम करने वाले कर्मचारियों को बाँट दूँगा।"

"कितना सरमाया लगा रहे हैं?"

"चालीस हजार खर्च हो गया है। कुछ और भी होगा। यह पचास हजार बिना सूद के पिताजी से मिला है। यह मैं पाँच किश्तों में पिताजी को लौटा देना चाहता हूँ। शेष लाभ सब काम करने वालों का होगा। मैं भी एक काम करने वाले के रूप में ही होऊँगा।"

"तो आप अभी भी इस विचार पर विश्वास रखते हैं कि धन और मेहनत पर्यायवाचक शब्द हैं?"

"हाँ। मैं अपने कारखाने को एक आदर्श समाजवादी संस्था बनाने जा रहा हूँ।"

"आपको विश्वास है कि आपका यह प्रबन्ध ठीक रहेगा?"

"बिलकुल।"

"तो मैं आपको बधाई दूँगी, जब आप पिताजी का धन दे सकेंगे।"

"तो तुमको मेरी योजना की सफलता मे सन्देह है क्या?"

"हाँ। मैं समझती हूँ कि यह अस्वाभाविक है।"

"नहीं। इसी कारण कदाचित् तुम मुझ से विवाह पसन्द नहीं करतीं।"

"नहीं, यह बात नहीं। आप अपनी तथा अपने पिता जी की सम्पत्ति को जिस भाँति चाहें व्यय करे। मेरा इससे कोई सम्बन्ध नहीं। मैं तो अपनी स्वतन्त्रता के लिए चिन्तित हूँ। मैं चाहती हूँ कि मैं अपने निजी आचार और व्यवहार में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र रह सकूँ।

"सरदार हरभजन सिंह पाँच वर्ष से मेरे पीछे घूम रहे है, परन्तु वे सिखिज्म के अनन्य भक्त है। चार-पाँच दिन की बात है। मैंने पूछा था कि क्या वे सिखिज्म को मानवता से ऊपर समझते है? वे इसका अभिप्राय नहीं समझे। मैंने अपने कथन की व्याख्या कर दी और कहा कि आप अमृत पिये हुओं के अतिरिक्त मनुष्य को मनुष्य समझते हैं क्या? मैंने उनको उनके गुरुद्वारे की एक घटना बताई, जिस पर वे निरुत्तर हो गए। मैंने पूछा कि क्या वे अपने गुरुद्वारे को, जहाँ मानव को मानव नहीं समझा जाता, छोड़ने को तैयार है? वह उत्तर नहीं दे सके। मैंने उनसे कह दिया कि मै 'इज्मों' के कीचड में फसे हुए व्यक्ति से विवाह नहीं कर सकती।

"सुशील कुमार भी मेरे से विवाह के लिए उत्सुक प्रतीत होते थे। एक दिन उनकी मा मेरी माता जी से कह गई कि बंगाली लडके की बंगाली लडकी से ही पट सकती है। मैं समझी हूँ कि वे भी प्रॉविंश्यलिज्म में फँसी हुई है। सुशील की मा भी एक प्रकार के 'इज्म' की बेडियों में जकड़ी है और इसी कारण वह मुख में आई बात कह नहीं सकीं।

"एक अन्य हैं। वे भद्री के जमींदार के लडके हैं। पिताजी से चिकित्सा कराते थे। कहीं मुझ पर दृष्टि पड गई तो पिताजी से प्रस्ताव कर बैठे। मुझको पता चला कि आर्य समाजी हैं और उन्होने अपने

इलाके में से महादेव के मन्दिर को मूर्ति शून्य कर दिया है। जब पिताजी से आज्ञा ले वे मुझसे मिले और विवाह का प्रस्ताव किया तो मैंने बताया कि मैं तो हनुमानजी की उपासना करती हूँ और इसमें उनको आपत्ति होगी।

"इस पर वे कहने लगे, 'आपत्ति तो है परन्तु इसके लिए झगड़ा नहीं करूँगा।'

"मैंने कहा, 'झगड़े की बात नहीं। मैं वहाँ हनुमानजी के मन्दिर में पूजा के लिए जाया करूँगी।'

"वे बोले, 'हमारे इलाके में हनुमानजी की कोई मूर्ति नहीं रही।'

'मैं यदि वहाँ एक मन्दिर बनवा लूँ तो ?'

'पर आप ऐसा क्यों करेंगी ? एक मिट्टी की मूर्ति में कौन विशेषता है ?'

'विशेषता तो उनमें है, जिनकी वह मूर्ति है। मूर्ति तो केवल चिह्न-मात्र है।'

'पर क्या उनकी पूँछ थी ?'

'मैं कैसे कह सकती हूँ कि नहीं थी। मैंने स्वय तो देखा नहीं उनको।'

'पर मनुष्यों के तो पूँछ होती नहीं।'

'कदाचित् वे मनुष्य नहीं थे। वे क्या थे कहना कठिन है। इतना ही कहा जा सकता है कि वे श्री राम के, जो 'आर्य सस्कृति की रक्षा' के लिए युद्ध कर रहे थे, भक्त, सहायक और सहयोगी थे।'

'मूर्ति-पूजा तो मूर्खता है।' उनका कहना था।

"इस पर मैं चुप कर रही। एक बार उनका पत्र आया, जिसमें उन्होंने अपने प्रस्ताव का उत्तर माँगा। मैंने उत्तर दे दिया, 'मैं विचार-स्वातन्त्र्य को अपने जीवन से भी अधिक मूल्यवान् मानती हूँ और मेरा पति ही मुझको यह अधिकार नहीं दे सकेगा तो दूसरों से यह स्वतन्त्रता कैसे माँग सकूँगी ? मेरा आप से विवाह नहीं हो सकेगा।'

"अब आप भी मेरे सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखे हुए है। आपके आर्थिक आयोजन से मेरा कोई सरोकार नहीं। मैंने तो यह बात इस कारण पूछी थी कि आपके कम्यूनिज्म के विषय मे विचारो का पता करूँ। मैं जानना चाहती थी कि वे अभी हैं अथवा मिट गए हैं? मुझको 'इज्मों' से अभी भय लगता है। इस कारण मैं आपके प्रस्ताव का उत्तर अभी हा में नहीं दे सकती।"

"परन्तु नीला! कम्युनिज्म तो इस्लाम, सिख, ईसाई इत्यादि 'इज्मो' की भाति नहीं है। यह तो केवल आर्थिक व्यवस्था के लिए है।"

"देखिये प्रबोध जी। 'इज्म' मे विरोधी के लिए असहनशीलता की गन्ध आती है। कम्यूनिज्म में भी वही असहनशीलता विद्यमान् है, जो किसी भी दूसरे 'इज्म' में है। क्या यह सत्य नही कि कम्यूनिस्ट अपने विरोधी के नाश के लिए प्रत्येक उपाय क्षम्य समझते हैं?"

"तुम ठीक कहती हो। इसमें कारण है कि सरमायादार भी तो मजदूरों के नाश के लिए यत्नशील रहता है।"

"मुझको आज से एक सौ वर्ष पहले की बातो का पता नहीं। मैं तो आज की और हिन्दुस्तान की बात जानती हूँ। आज यहा तो कोई मजदूर मारा नहीं जा रहा। मजदूरो के अधिकार कानून से निश्चय किये जा चुके है। इस अवस्था में तो वर्ग-युद्ध अथवा वर्ग-घृणा की आवश्यकता नहीं रही।"

"कानून अभी सन्तोषजनक नहीं हैं।"

"तो इनको सन्तोषजनक बनाने के लिए यत्न किया जा सकता है। परन्तु सरमायादारी स्वयं तो अवाञ्छनीय नहीं हो सकती। बिना सरमाया के काम भी तो नहीं चल सकता न?"

"यही तो मतभेद की बात है। सरमाया एक स्थान पर एकत्रित हो जाने मात्र से ही कर्मचारियों पर अन्याय होने लगता है।"

"पर बिना सरमाये के काम भी तो नहीं चल सकता। कम्यूनिस्टों

को भी तो सरमाये की आवश्यकता पड जाती है। अन्तर केवल यह आ पडता है कि कम्यूनिस्ट प्रपञ्च में सरमायादार केवल राज्य होता है और वैयक्तिक स्वतन्त्रता के प्रपञ्च में राज्य के अतिरिक्त कई अन्य लोग भी सरमायादारी करते हैं।

"मशीन-युग में बिना सरमाये के कार्य नहीं चल सकता। साथ ही मशीनो की सहायता से एक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओ से अधिक निर्माण कर सकता है। परिणाम यह हो रहा है कि धन एकत्रित होगा। प्रश्न यह है कि वह धन किसके पास जमा हो। योजना बनाने वाले तथा मेहनत और युक्ति से कार्य करने वाले के पास धन जमा हो अथवा देश के शासकों के पास ?

"देश के शासक शासन करते हैं, इस कारण उनको कर दिया जाता है। वे न तो आविष्कारक हैं, न ही कारखानों के सचालक, तो उनके पास धन क्यों एकित्रत हो ?"

"इस कारण कि वे जनता के प्रतिनिधि हैं।"

"जनता के प्रतिनिधि वे अवश्य हैं। उनका उस वस्तु पर अथवा उस कार्यफल पर अधिकार होना चाहिए, जिसको जनता सामूहिक रूप में बनाती है। जिसको सब जनता नहीं बना सकती, जिसका निर्माण सर्व-साधारण के वश का नहीं, उस पर जनता के प्रतिनिधियो का अधिकार तो न्याय नहीं कहा जा सकता।"

"हमारा कहना तो यह है कि प्रत्येक कार्य, प्रत्येक कारखाना, प्रत्येक व्यवसाय देश की साझी सम्पत्ति है। इस कारण देश के प्रतिनिधियों का उन पर अधिकार होना ही चाहिए।"

"यह आपका कहना है अथवा इसमें कोई प्रमाण भी है। कैसे एक व्यवसाय सबकी साझी सम्पत्ति हो गया ? उदाहरण के रूप में बीमा कम्पनियाँ हैं। कुछ व्यक्तियो ने मिलकर एक व्यवसाय चलाया और लोगों में बीमा कराने का चलन कराया। यह ठीक है कि बीमा कराने वाले लोग सख्या में बहुत हैं, परन्तु यह व्यवसाय न तो साझे प्रयत्न का फल है न ही

इसकी उन्नति सबके साझे का परिणाम है। इस पर जनता के प्रतिनिधियों का अधिकार क्यों हो, समझ नहीं आता।"

"इसमे कारण यह है कि बीमा कम्पनी वालो ने बहुत लूट मचा रखी थी।"

"उस लूट को बन्द करने के लिए कानून बनाये जा सकते थे। उदाहरण के रूप में बीमे की किश्त के विषय में यह नियम बनाया जा सकता था कि बीमा की दर निश्चित रकम से अधिक न हो। साथ ही बीमा की रकम के देने के समय ग्राहको की सुविधा के लिए भी कानून बनाये जा सकते है। यह कहाँ की युक्ति है कि शासन, जो चोर और साधु में न्याय स्थापित करने वाला है, वह स्वय ही मालिक हो जाए।"

"व्यवसाय मे तो कुछ सीमा तक तुम्हारी बात ठीक भी हो सकती है, परन्तु नीला देवी! कारखानों में यह युक्ति ठीक नहीं बैठती। मान लो एक कपडा मिल है। उसमे सहस्रों प्रकार की मशीनें लगी हैं। उन मशीनो के आविष्कारक तो भूखे मर गए और लाभ उठा रहे हैं कारखानों के मालिक।"

"उन मशीनों के मोल मे से जितना चाहे, आविष्कारको तथा उनके वारिसों को सरकार दिला दे। यह बात तो समझ में आती है, परन्तु कारखानों की ही सरकार मालिक बन जाये, यह कहाँ की युक्ति है। एक कारखाने का मालिक मशीनें खरीद कर लगाता है, वह मशीनो के आविष्कारकों से क्या सम्बन्ध रखता है।"

इस समय भोजन समाप्त हो गया था। दोनो हाथ-धो कुल्ला कर फिर ड्रायग रूम में आ गए।

१६

प्रबोध ने कहा, "देखिये नीला देवी! यदि इसी प्रकार लडकियाँ विवाह से पूर्व अपने होने वाले पतियों के विचारों की छान-बीन करने लगें तो विवाह कभी हो ही न सके। सब लडके-लडकियाँ कँवारे ही रह

जायें।"

"बात यह है कि अब वह परिस्थिति नहीं है, जो यहाँ पर कुछ वर्ष पहले थी। अब भारत में लड़कियाँ भी बाप की सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बन गई हैं। पहले तो बाप की जायदाद केवल लड़कों को ही मिलती थी। लड़कियों के पालन-पोषण का कर्तव्य उनके पति महोदयों को प्राप्त था। लड़कियों की अपनी सम्पत्ति होने से वह यह जानने का अधिकार रखती हैं कि उनके पति समानता के ढोंग में उनकी सम्पत्ति हड़प तो नहीं कर लेंगे ?"

"पति पत्नी का झगड़ा तो रहेगा ही नहीं, राष्ट्रीयकरण से तो यह समस्या समूल नाश हो जायेगी।"

"यह कोई युक्ति नहीं, सरकार पति-पत्नी मे झगड़े को मिटाने के स्थान दोनों की सम्पत्ति को अपने पास रखना चाहती है। यह तो 'बन्दर बाँट' वाली बात हो गई।

"इसके अतिरिक्त राज्य का कार्य है यह देखना कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी-अपनी योग्यता और मेहनत के अनुसार पारिश्रमिक मिलता है अथवा नहीं, न कि सबके पारिश्रमिक को अपने पास ले लेना और फिर उसको अपनी इच्छानुसार व्यय करना।

"मान लीजिये कि मशीन के आविष्कारक को मशीन बनाने के कारखाने वाले उचित रॉयल्टी नहीं देते, तो सरकार इसमें हस्तक्षेप कर सकती है, परन्तु इस हस्तक्षेप का यह अर्थ नहीं कि सरकार मशीनें बनाने के कारखाने को स्वय ही समेट ले और फिर अपनी इच्छानुसार रॉयल्टी दे अथवा न दे।"

"तो फिर किस प्रकार सरमायादार वर्ग के अन्याय और अत्याचार से कर्मचारियों को बचाया जा सकता है ?"

"उपाय तो सरल है। कानून से सबका परिश्रम निश्चय किया जा सकता है ?"

"यह तो बहुत कठिन काम है। इसको यदि असम्भव कह दिया

जाये तो अनुचित न होगा।"

"यह एक चोर पकड़ने से कम कठिन है। किसी व्यवसाय में कौन-कौन वर्ग के लोग कार्य करते हैं, उनका निश्चयकर सबका उस कार्य मे भाग निश्चय कर दिया जाये।"

"इस सब झगड़े से छुट्टी पाने के लिए यह ठीक क्यों नहीं कि सरकार सब-कुछ अपने हाथ में ले।"

"यह इस कारण उचित नहीं कि प्रजातन्त्र सरकार बनती है राजनीतिक पार्टियों के बल पर। अतएव सरकार की सम्पत्ति, सरकार की नौकरियाँ, सरकार के पुरस्कार और सरकार द्वारा दिये जाने वाले पारिश्रमिक उनको मिलता है, जो सरकार बनाने वाले दल में होते हैं।

"यदि किसी पुरस्कार अथवा पारिश्रमिक के अधिकारी को अपना भाग न मिले तो उसके लिए सरकार से दावा करके लेना न केवल कठिन प्रत्युत् असम्भव ही होगा। सरकार ही अपराधी होगी और सरकार ही दावे का निर्णय करने वाली न्यायकर्ता होगी।

"यही बात मजदूरों की होगी। यदि किसी कारखाने की मालिक सरकार होगी और किसी मजदूर को उजरत उचित नहीं मिलेगी तो वह मजदूर दावा किस पर करेगा? सरकार के विरुद्ध दावे की निर्णायक भी सरकार ही होगी।

"यदि सरकार ही मालिक हो, सरकार ही दुकानदार हो और सरकार ही न्याय करने वाली हो, मजदूर अथवा ग्राहक अपनी शिकायत किसके पास लेकर जायगा?"

"पर सरकार तो जनता की होगी, इस कारण जनता से अन्याय क्यों करेगी?"

"जनता की कैसे होगी?"

"निर्वाचन से।"

"निर्वाचन मे संसद की एक जगह के लिए केवल ही एक व्यक्ति खड़ा हो सकेगा अथवा एक से अधिक?'

"एक से अधिक भी हो सकेंगे।"

"तो जनता के दो अथवा अधिक भाग हो जायँगे। सफल उम्मीदवार को जनता का एक भाग ही मतदान करेगा। स्वभाविक रूप में सफल सदस्य जनता के उस भाग की ही सहायता करेगा, जिसने उसको मत दिया होगा। वह विपक्षियों का न तो प्रतिनिधि है और न ही वह उनसे न्याय कर सकेगा।"

"निर्वाचन के पश्चात् वह अपने को सबका प्रतिनिधि मान लेगा।"

"कैसे मान लेगा? यह न सत्य होगा न सम्भव। कारण यह कि पाँच वर्ष के पश्चात् उसने पुन. चुनाव लड़ना होगा। वह अपने सहायकों को धन और पद से प्रसन्न करेगा।"

"तो फिर क्या हो?"

"मैंने तो बता दिया है, परन्तु आपत्ति केवल इस बात पर है कि कोई राष्ट्रीयकरण पसन्द करता है अथवा नहीं करता, उन दोनों को अपने पक्ष के सिद्ध करने और उसके प्रतिपादन करने की स्वतन्त्रता तो होनी चाहिये। मैं तो विचार करने और अपने विचार प्रसार करने की ही स्वीकृति चाहती हूँ।"

२०

प्रबोध को नीला की युक्तियाँ समझ में नहीं आई। साथ ही वह यह समझता था कि समाज में पहले सबको स्वतन्त्रता दे देना और फिर उसके दुरुपयोग को रोकने के लिए कानून बनाना अन्धकार ढोने के समान है। वह समझता था कि समाज के अर्थ ही यह हैं कि सब मिल-जुलकर रहें और सबकी आवश्यकताएँ और कठिनाइयाँ समाज की चिन्ता का विषय हों। इससे व्यक्ति बहुत प्रसन्न होगा।

परन्तु नीला से विवाह भी तो करना था। वह सुन्दर है, सभ्य है और फिर डॉक्टरी पढ़ी है। कम-से कम अपने निर्वाह के लिए कमा सकेगी। ऐसी लड़की तो अन्य कहीं ढूँढने पर भी नहीं मिलेगी। अतएव उसने

नीला को दूसरे ढग से मनाना आरम्भ किया। उसने पूछा, "नीला! तुम मुझसे प्रेम करती हो अथवा नहीं ?"

"आपका यह जानने से क्या प्रयोजन है ?"

"मैं अभी तुम्हारा भ्रम दूर कर दूँगा। पहले यह बताओ तुम मुझसे घृणा करती हो अथवा प्रेम ?"

"देखिये! मैं आपको अपने मन का विश्लेषण करके बताती हूँ। आप एक योग्य वर हैं। आपको मैं बचपन से जानती हूँ। यदि मेरी मानसिक स्वतन्त्रता और विकास में बाधा न हो तो मैं अपने सब परिचितों से आपको उपमा दूँगी। अब इसको प्रेम समझो अथवा जो मन करे समझो।"

"तुम मेरे कहने का अभिप्राय नहीं समझीं। देखो मैं समझाता हूँ। प्रेम एक मानसिक सम्मोहन है, जिसमें एक व्यक्ति दूसरे के लिए सब-कुछ न्योछावर कर सकता है।"

"मेरी अवस्था यह नहीं। मैं अपने मनकी स्वतन्त्रता किसी भी व्यक्ति को प्रसन्न करने के लिए छोड नही सकती। इन अर्थों मे मेरा किसी से प्रेम नहीं है। मैं तो समझती हूँ कि प्रेम के अर्थ है एक-दूसरे के भावो का आदर करना और कोई ऐसा कार्य न करना, जिससे प्रेमी के मन को ठेस पहुँचे। ऐसा प्रेम एक-पक्षीय नहीं हो सकता। कारण यह कि इसमें सम्मोहन नहीं है, परन्तु सोच-विचार कर, स्वीकार की हुई एक स्थिति है।"

"तो ऐसा ही सही। क्या तुम मन मे मेरे लिए आदर रखती हो ?"

"हाँ, अभी तक तो है। अभी आपने यह नहीं कहा कि आप अपने विचारों को स्वीकार कराने के लिए मुझको विवश करेंगे अथवा नही। मेरा प्रश्न यह है और आपने उसका उत्तर नहीं दिया।"

"मै समझता हूँ कि भारत सरकार की भाति हम अपने घर में भी दो सैक्टर (क्षेत्र) खोल सकते है अर्थात् प्राइवेट सैक्टर और पब्लिक सैक्टर। जैसे भारत सरकार के ये दोनो क्षेत्र साथ-साथ काम कर रहे है,

वैसे हम भी घर में दोनों क्षेत्रों को चला सकेंगे।"

"परन्तु भारत सरकार की भाँति तो कार्य नहीं चल सकेगा। हाँ यदि आप यह वचन दें कि आप अपने ढग से जीवन चलाते हुए, मेरे ढग पर मुझको जीवन चलाने में स्वतन्त्रता देंगे तो हम परस्पर साथ साथ रहना स्वीकार कर लेंगे।"

"आओ नीला! हम अपना घर बनायें और हम एक-दूसरे का आदर कर सकें और अपने साझे कामों मे सहयोग दे सकें।"

नीला इसका उत्तर न दे सकी। वह गम्भीर विचार में पड़ गई। वह विचार करती थी कि यदि ऐसा चल सके और अपने साझे व्यवहार में सहयोग दे सकें तो क्या हानि है। परन्तु वह सोचने लगी कि यदि का उत्तर क्या है। वह सोचती थी कि विवाह के पश्चात् यदि प्रबोध ने वचन-भग किया तो क्या होगा। यह ठीक है कि विवाह विच्छेद का कानून बन गया है, परन्तु यह कोई शुभ कार्य तो है नहीं। न ही यह आर्थिक तथा धार्मिक स्वतन्त्रता के लिए मिल सकेगा। इस पर भी वह प्रबोध को बाल्यकाल से जानती थी और समझती थी कि वह उससे किया गया वचन भग नहीं करेगा। इस पर भी उसको एक तरकीब सूझी। उसने कहा, "यदि आप ऐसा कहते हैं तो आप मेरे आपसे सम्बन्ध में, जैसे विचार आपने अभी व्यक्त किये हैं, एक पत्र में लिखकर भेज दें। मैं उन विचारों को आराम से बैठकर पढ़ूँगी और विचार करूँगी और फिर उत्तर दूँगी।"

"मैं लिख दूँगा, परन्तु मैं यह चाहता हूँ कि यदि कोई बात उससे स्पष्ट न हो तो विवाह से इन्कार करने के स्थान उसको स्पष्ट कराने का यत्न करना चाहिए। मैं तुमको प्रेम करता हूँ और प्रत्येक शर्त पर तुमसे विवाह करने पर उद्यत हूँ।"

"अच्छी बात है। यदि आपकी प्रेम की परिभाषा के अनुसार मैं इसको अपने प्रति सम्मोहन समझूँ तो फिर आप मेरी बात मान ही जायेंगे। आप लिखिये।"

इसके दूसरे दिन प्रबोध का पत्र नीला को मिला। उसमें प्रबोध ने लिखा,

"मैं मानसिक स्वतन्त्रता को मनुष्य की एक परम प्रिय वस्तु समझता हूँ। मैं वचन देता हूँ कि तुम्हारे विचारों का आदर करूँगा और जब तक तुम्हारा व्यवहार मेरे कामो में बाधक नहीं होगा, मैं उसमे किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करूँगा।"

इस पत्र को नीला ने पढा और उस पर विचार किया और कई दिन के मनन के पश्चात् उसने उत्तर लिख दिया—

"आप अपने पिताजी से कहकर मेरे पिताजी से विवाह की तिथि इत्यादि निश्चित करा लीजिए।"

२१

अमृतकौर, माँ के बाहर से कुडा लगा जाने पर पलग पर लेट गई और इस विकट समस्या का सुझाव ढूँढने लगी। वह यह भली भाँति समझती थी कि कुछ काल तक घर में खिच-खिच चलेगी और पश्चात् उसके माता-पिता सन्तोप कर चुप कर रहेंगे। वह विचार तो यह कर रही थी कि यह खिच-खिच का काल किस प्रकार कम-से-कम किया जाय। उसको अपने और माता-पिता में बीच-बचाओ करने के लिए केवल दो ही व्यक्ति समझ आ रहे थे। एक हरभजन सिंह और दूसरा उसका मामा विष्णु सहाय। विष्णु सहाय सिख नहीं था और वह अमृत के व्यवहार को इतना बुरा नहीं समझेगा। इस पर भी वह अपने भाई हरभजन मिह पर अधिक आशा रखती थी।

इतना विचारकर वह हरभजन सिंह को बुलाकर परामर्श करने का विचार करने लगी। इस समय नौकर खाना लेकर आया। अमृत ने उससे पूछा, "सोहनू! भैया घर पर आये हैं अथवा नहीं?"

मोहनू ने कमरे में आते ही अमृत के कटे घुँघराले बालों को देखा था। वह देख विस्मय मे खडा रह गया। उसके हाथ मे थाली पकडी हुई

थी। वह उस थाली को मेज़ पर रखना भूल गया और बालों की ओर ही देखता रहा। उसने अमृत के कहने को भी नही सुना था। उसको चुप खड़ा देख अमृत ने पूछा, "क्या देख रहे हो? थाली क्यो नहीं रखते?"

सोहनू को अभी भी होश नहीं आया। अमृत के बालों को देख उसके मन में अनेकानेक विचार उठने लगे थे। इस पर अमृत ने कुछ डाँटकर कहा, "सोहनू! खाना रखो।"

डाटे जाने पर उसको चेतनता हुई और वह, "हाँ सरकार!" कहकर थाली को एक तिपाई पर रखने के लिए आगे बढा।

"क्या देख रहे थे, सोहनू?" अमृत उसके विस्मय का कारण समझ मुस्कराई।

अब सोहनू की ज़बान खुली और उसने कहा, "माँ जी ने कहा था कि खाना देकर बाहर से ताला लगा दूँ। मैं विचार कर रहा था कि इस आज्ञा का क्या अर्थ है, और आपके बाल देख मेरे मन में ज्ञान हो रहा था। इसीलिए अमृत बहन! खाना रखना भूल गया था। क्षमा करना।"

सोहन सिह बचपन से इस घर मे नौकरी करता था। इस कारण वह अमृत के साथ खेला था और अन्य नौकरो से अधिक अमृत के साथ खुलकर बात कर सकता था। अमृत ने पूछा, "तो क्या बाल अब अच्छे नहीं लगते?"

"लगते तो हैं, परन्तु··माताजी नाराज मालूम होती हैं।"

"अच्छा बताओ, भैया आये हैं अथवा नहीं।"

"नहीं आये। पर अमृत बहन! अब क्या होगा?"

"किस का क्या होगा?"

"माताजी नाराज हैं।"

"भैया मना लेंगे।"

अमृत भोजन करने लगी। सोहनू सामने खड़ा रहा। उसका मतलब था कि कोई वस्तु चाहिए तो ला सके। साथ ही वह देख रहा था कि बाल कट जाने से अमृत का सौन्दर्य और भी निखर आया है। उसको

बचपन की बातें स्मरण हो आईं। अमृत उसके केश पकड़कर खींच लिया करती थी और उसकी माँ कहा करती थी 'अमृत ! केशों को हाथ लगाना गुरु महाराज का अपमान करना है।' आज अमृत को केशों को कटवाने पर माँ कितना नाराज हुई होगी, वह अनुमान लगा रहा था।

अमृत ने भोजन करते हुए कहा, "भैया आयें तो उनको यहाँ भेज देना।"

"परन्तु माँजी ने तो ताला लगाने के लिए कहा है।"

"तो लगा देना।"

"फिर भैया जी कैसे मिलेंगे ?"

"ताला तोड लेंगे।"

सोहनू कुछ काल तक विचार करता रहा। पश्चात् कहने लगा, "दरवाजा तोड़ना ठीक नहीं है।"

अमृत भोजन कर चुकी तो सोने के कमरे के साथ बने गुसलखाने में हाथ धोने चली गयी। सोहनू अभी जी उसके केश ही देख रहा था। वह मन में विचार करता था, "अमृत ने यह क्यों किया है ?"

अमृत आयी तो उसने बर्तन उठाते हुए पूछ ही लिया, "अमृत बीबी ! यह क्यो किया है ?"

"तुमको क्या ? जाओ अपना काम करो।"

"यह ठीक नहीं हुआ।" इतना कहकर बर्तन उठाकर वह कमरे के बाहर चला गया।

अमृत के मन मे आया कि एक चपत सोहनू के मुख पर लगा दे, परन्तु यह विचारकर कि इससे झगडा नहीं करना चाहिए, कदाचित् इसकी आवश्यकता पड जाये, हँस पडी।

इस पर भी सोहनू अधिक काल तक ठहरा नहीं। उसने जूठे बर्तन कमरे के बाहर भूमि पर रखकर दरवाजा बन्द कर दिया। अमृत ने ताला लगाने का शब्द सुना और हताश होकर पलग पर लेट गयी।

हरभजन सिंह बाजार से लौटा तो रात के दस बज रहे थे। वह

अपने कमरे में जाने के स्थान पहले अमृत के कमरे में चला आया। दरवाजा खोल भीतर आया तो अमृत ने प्रसन्न हो कहा, "भैया ।"

वह पूछना चाहती थी कि माँ ने चाबी दे दी है क्या, परन्तु अपने भाई के सिर पर पगड़ी उलट पुलट बँधी देख और दाढ़ी-मूँछ सफा देख विस्मय में मुख देखती रह गयी। हरभजन सिह अमृत के विस्मय का कारण देख समझ, सिर से पगडी उतार बोला, "देखो अमृत। मैंने विचार किया है कि मैं पीछे क्यों रह जाऊँ ?"

हरभजन सिंह ने भी केश कटवा बाल फैशन से बनवाये हुए थे। अमृत समझती थी कि उसके विषय में तो कदाचित् उसके माता-पिता चुप भी कर जाते। उसने घर से बाहर नहीं जाना, परन्तु भैया के विषय में तो आग-बबूला हो जावेंगे। भैया ने दिन भर घर से बाहर घूमना है और एक ही दिन में बात नगर भर में विख्यात हो जावेगी। साथ-ही वह यह विचार करती थी कि अब उसकी माता-पिता से सन्धि कराने वाला कोई नहीं रहा।

अमृत अभी भी अपने भाई का मुख देख रही थी। उसको इस प्रकार चुप देख हरभजन सिंह ने कहा, "कल मुझको दिल्ली के एक प्रोफेसर साहब अपनी लड़की से रिश्ता करने के विचार से देखने आ रहे हैं। इस कारण मैंने यह उचित समझा है कि यह बात जो पीछे होने वाली है, आज ही हो जावे तो ठीक है। सो हजामत बनवा आया हूँ।"

"पिता जी ने देखा है ?"

"मैं अभी उनके पास नहीं गया। कोठी के फाटक पर सोहनू खड़ा था और उसने बताया है कि तुमने मुझको बुलाया है।"

"परन्तु अब आप मेरी क्या सहायता कर सकते हैं ? अब तो आपने भी मेरे साथ बगावत कर दी है।"

"दोनों की सहायता एकदम ही हो जावेगी। मैं हजामत बनवा, मामा जी के घर गया था। उन्होंने हमारी इस बात को तो पसन्द नहीं किया। इस पर भी कहते थे कि रक्त पानी से गाढा होता है। जैसे

उन्होंने अपनी बहिन एक सिख से विवाहने में संकोच नहीं किया था, वैसे ही अपने भान्जे को पुनः हिन्दू होते देख उनको बुरा नही लगा। वे कहते थे कि यदि हम उनके घर रहने के लिए गये तो वे हमको अपने घर से निकालेंगे नहीं।"

"पर मैं तो चाहती थी कि आप माता-पिता को समझाकर मेरे विषय में राजी कराते। अब आपके समझाने का कुछ भी प्रभाव नहीं रहेगा।"

"अब मामा जी समझायें-बुझायेंगे। तुम कुछ चिन्ता न करो। पिता जी को हमारी बात माननी पड़ेगी। वे तुमको तो कैद भी कर सकते हैं, पर मुझको कैसे रोकेंगे? मैं इक्कीस वर्ष से ऊपर का हो चुका हूँ और अपने क्लिनिक में अपने निर्वाह के लिए कमा सकता हूँ।"

"तो अब क्या किया जाये?"

२२

"चलो मेरे साथ। हम दोनो पिता जी के सामने जाते हैं और तुम सुनती जाना, मैं सब बातचीत कर लूँगा।"

"पर उन्होंने तो मुझको ताले में बन्द करवाया हुआ है।"

"जब मैं आया था, तब ताला तो लगा नहीं था?"

"सोहनू ने लगाया तो था।"

दोनों बाहर आ दरवाज़ा देखने गये। ताला लगा था, परन्तु कुण्डे को बिना साँकल चढाये। हरभजन सिह देखकर हँस पड़ा। उसने कहा, "सोहनू मूर्ख ने भारी भूल कर दी प्रतीत होती है। खैर, हमको तो लाभ ही हुआ है।"

"मैं समझती हूँ कि भूल नहीं की। उसने जान-बूझकर ताला ऐसे लगाया है।"

कुछ विचार कर हरभजन सिह ने कहा, "चलो, यह झगडा भी सब समय के लिए समाप्त कर आयें।"

अमृत ने अब और कुछ नहीं कहा। वह हरभजन सिह के साथ

कोठी के उस बाज़ू को चल पड़ी, जिधर उसके पिता का कमरा था। सरदार बढियाम सिंह के घर गुरुद्वारा कमेटी के मन्त्री और कुछ गुरुद्वारे से सम्बन्धित लोग आये हुए थे। वे डाइनिंग हॉल में भोजन कर रहे थे।

हरभजन सिंह सिर से नगा था और उसकी दाढ़ी मूँछ सफा थी। इस कारण वह जब अमृत कौर के साथ वहाँ पहुँचा तो पहले किसी ने पहचाना ही नहीं। पीछे जब उसके पिता ने उसको पहचाना तो उसका मुख विवर्ण हो गया। वह अवाक् उन दोनों को देखता रह गया।

हरभजन सिंह ने हाथ जोड़कर गुरुद्वारा कमेटी के मन्त्री को 'सत श्री अकाल' बुला दी। पश्चात् एक कुरसी पर बैठ, अमृत को अपने समीप बिठाकर बैरे से कहने लगा, "हम भी खायँगे।"

"मैं खा चुकी हूँ।" अमृत ने कह दिया।

बैरा और अन्य सब लोग विस्मय में मुख देख रहे थे। उनको अपनी ओर बितर-बितर विस्मय से देखते हुए पा, हरभजन सिंह ने बैरे को डाँटकर कहा, "देख क्या रहे हो? मेरे लिए खाना लाओ।"

बढियाम सिंह के मन में भारी सघर्ष चल रहा था। उसका मन कहता था कि दोनो को, पुत्र और पुत्री को, घर से बाहर निकाल दे। इस पर भी उसके मुख से बात नहीं निकलती थी। वह विचार करता था कि दे लेकर जीवन भर की यही दो सन्तान तो कमाई हैं। इनको किसी बात के लिए विवश करना ठीक नहीं।

बात मन्त्री गुरुद्वारा कमेटी ने आरम्भ कर दी। उसने कहा, "हरभजन सिंह! यह क्या कर दिया है?"

"तेईस वर्ष की आयु तक तो सिर पर केश रखकर देखे हैं। अब ज़रा इनके बिना भी देखना चाहता हूँ। ये जीवन में बाधा बनने लग गए थे।"

"आपको हम गुरु मुख समझते थे। धर्म की महिमा इस छोटी-सी असुविधा से बहुत बड़ी है सरदार साहब!"

"गुरु मुख तो अब भी हूँ। दस में से नौ गुरु तो केशधारी नहीं थे।

कम-से-कम उनके अभिमुख तो हूँ ही। मैंने धर्म को भी नहीं छोड़ा। क्या सिख धर्म केश-करों में ही रह गया है ?"

"ये धर्म के लक्षण माने जाते हैं, हरभजन।"

"धर्म के लक्षण ? कहाँ लिखा है ? यह आज आपसे नई बात सुनी है।"

मन्त्री बेचारा बहुत पढ़ा-लिखा आदमी नहीं था, इस कारण चुप कर गया। वट्टियाम सिंह ने बात आगे चला दी। इस समय तक वह अपने मन को दृढ बना चुका था। उसने पूछा, "ये हत्या तुम दोनों ने परस्पर राय कर की है अथवा अपने-अपने मन से ?"

"भापाजी! जब आपने अमृत को चाँटा मारा था, तब ही मैंने भी उसका साथ देने का निश्चय किया था और अब मै आया हूँ कि मुझको भी मुख पर चपत लगाइये।"

"तुमको चपत ? नहीं। तुमको नहीं प्रत्युत अपने मुख पर चपत लगानी चाहिए, जो मैंने तुम दोनों को कॉलेज मे शिक्षा देकर भूल की है।"

"कॉलेज का इसमे क्या दोष है ? यह तो प्रतिक्रिया है, जो-कुछ हम गुरुद्वारे में देखते रहे हैं।" अमृत ने बात मे दखल देते हुए कहा।

"क्या गुरुद्वारों में देखा है आपने ?" एक और सज्जन ने, जो मन्त्री के समीप बैठा हुआ भोजन खाने मे व्यस्त था, पूछा।

"मैंने इतिहास में पढा है कि गुरु महाराज ने गौ और ब्राह्मण की रक्षा के लिए पन्थ का निर्माण किया था और गौ तथा ब्राह्मण की प्रतिष्ठा हिन्दू-धर्म का सार है। अब आप लोग तो अपने को हिन्दू-धर्म से पृथक् एक धर्म और जाति मानने लगे हैं।"

"देखो, अमृत बीबी! इस प्रकार के तर्क ही मनुष्य को पतन की ओर ले जाते है।"

"पर हम अपने को किसी प्रकार भी पतित नहीं मानते। हम में आज के परिवर्तन के पश्चात् किसी प्रकार का भी नैतिक पतन आया हो, दिखाई नहीं देता।"

"तुम दशम गुरु महाराज के सिखों के लिए पाँच ककारों के विधान को ठीक नहीं समझते।"

"उन्होंने अपने काल मे जो कुछ कहा, वह ठीक ही होगा। मैं उस समय की अवस्था को नहीं जानती। एक बात मुझको समझ नहीं आ रही। उन्होंने एक ओर तो कह दिया कि तुर्कों का विश्वास नहीं करना। इस विषय में उनका कहना है कि हाथ को तेल में भिगोकर यदि तिलों के ढेर में डाला जाए, तो जितने तिल हाथ को लग जायें, उतनी ही क़समें एक तुर्क खाये तो भी उस पर विश्वास नहीं करना। इतना कुछ कहने पर भी श्री गुरु महाराज ने अपना नौकर एक तुर्क रखा हुआ था, जिसने उनकी हत्या कर दी थी।

"क्या इसका यह अर्थ नहीं कि गुरु महाराज ग़लती भी कर सकते थे? जो-कुछ उन्होंने कहा अथवा किया, वह उस समय के लिए ठीक हो सकता है, परन्तु आज समय बदल रहा है। आज तो आठ आने में सेफ्टीरेज़र मिलता है और कपड़ा इतना सस्ता है कि एक कच्छेड़े के मोल में कई पजामे बन सकते हैं। परन्तु सबसे बड़ी बात तो यह है कि इन वस्तुओं का धर्म के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।"

"यह सिख पन्थ मे रहने वालों का चिह्न है।"

"तो हम सिख पन्थ में नहीं रहे न? तो क्या आप केवल सिख पन्थ वालों से ही सम्बन्ध रखेंगे।"

"सम्बन्ध तो रहेगा ही, परन्तु उनके साथ वह सम्बन्ध नहीं हो सकता, जो पन्थ के अन्दर के लोगों से हो सकता है।"

"तो ठीक है। हम आपके अधिमान्य व्यवहार (Preferred treatment) के अधिकारी नहीं रहे न? न सही। बंगाली बंगालियों को गुजराती गुजरातियों को अथवा मुसलमान मुसलमानों को और ब्राह्मण ब्राह्मणों को, इसी प्रकार मज़दूर मज़दूरों को तथा पैसे वाले पैसे वालों को, अधिमान्य व्यवहार देते हैं। हम इस सब प्रकार के साम्प्रदायवादियों से बाहर रहना चाहते हैं। धर्म और पन्थ के नाम पर दलबन्दी, आर्थिक

विचारों के नाम पर दलबन्दी अथवा राजनीतिक विचारो के नाम पर दल-बन्दी सब-की-सब अवाञ्छनीय हैं।

" दलबन्दी भले और बुरे में, चोर और साधु में, सहनशील और असहनशील मे, इसी प्रकार ईमानदार और बेईमान में होनी चाहिए।"

"हरभजन सिह !" सरदार बढियाम सिंह ने बहस बन्द करते हुए कहा, "यह बहस व्यर्थ की है। तुम हमारी सगत मे नहीं रहना चाहते तो न सही, परन्तु गुरु महाराज से दी गई व्यवस्था पर मजाक तो न उड़ाओ। धोती-सलवार के लिए कपड़ा नहीं था अथवा हजाम नहीं थे, यह सब बकवास हम सुनना नहीं चाहते।"

इस समय रसोइया भोजन लाया। सब लोग तो पहले ही खा रहे थे। यह खाना हरभजन सिंह के लिए था, परन्तु बढियाम सिह ने रसोइये को कह दिया, "वीर सिह। यहाँ नहीं, इनका खाना इनके कमरे मे ले जाओ। ये हमारी संगत मे नहीं रहना चाहते।"

हरभजन सिह और अमृतकौर उठ खडे हुए, "तो क्या हम भगी-चमार हो गये हैं अथवा चोर-डाकू हो गये है ?"

"उनसे भी बुरे। मेरे लिए तुम नहीं रहे और समझो कि मैं तुम्हारे लिए नहीं रहा।"

हरभजन सिंह इससे अधिक बात सुनने की शक्ति नहीं रखता था और वह बिना कुछ और कहे डाइनिंग हॉल से बाहर निकल गया। इस पर अमृत, जो अभी भी वहाँ खडी थी, कहने लगी, "भापा जी ! हम हैं तो आपके बच्चे ही। इन बाहरी लक्षणों के बदलने से हमारा रक्त तो बदल नहीं गया।"

"मर जाने पर तो बदल जाता है न। तो समझो कि मैं मर गया हूँ।"

अमृत इस बात को सुन अवाक् रह गई। हरभजन सिंह ने बाहर से आवाज दे दी, "अमृत, आ जाओ। यहाँ अक्ल को फारखती मिली हुई है।"

२३

हरभजन सिंह और अमृत अपने मामा के घर चले गये। विष्णु सहाय, अमृत का मामा, अगले दिन वढियाम सिंह के घर उससे मिलने आया। उसकी वहन और वहनोई बहुत ही परेशान हो रहे थे। वढियाम सिंह का विचार था कि गुरुद्वारा कमेटी के सदस्यों के सम्मुख अमृत इत्यादि को नहीं आना चाहिये था और यदि वे आये थे, तो उनको उसके क्रोध की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए था। वढियाम सिंह का यह भी विचार था कि उसका पुत्र और पुत्री किसी मित्र के घर पर गये हैं और प्रातःकाल वे लौट आयेंगे। वे नहीं आये, परन्तु विष्णु सहाय आया। उसे आया देख वढियाम सिंह को सन्तोष तो हुआ, परन्तु रोव दिखाने के लिए उसने क्रोध की मुद्रा बनाये रखी। उसने विष्णु सहाय के आने की ओर ध्यान नहीं दिया। विष्णु सहाय अपने आप ही बैठकर कहने लगा, "भापा जी! रात हरभजन सिंह और अमृत वहाँ पहुँचे तो कहने लगे कि आपने उनको घर से निकाल दिया है।"

"निकाला तो नहीं। हाँ, कुछ डाँटा अवश्य था, परन्तु विष्णु सहाय! तुमको पता होना चाहिए कि उन्होंने मेरा अपमान गुरुद्वारा कमेटी के सदस्यों के सामने कर दिया था। केश कटवाये थे तो क्या उसका प्रचार करना भी जरूरी था? मेरे मुख पर उन्होंने कालख पोत दी तो मैं क्या करता?"

"वे तो बच्चे हैं। आप बड़े हैं, आपको तो बुद्धिमान और कारोबारी आदमी की भाँति व्यवहार करना चाहिये। आपको आपे से बाहर नहीं होना चाहिए था।"

"सिक्ख केश कटवाने को बहुत बुरा मानते हैं।"

"उनके मानने से क्या होता है? आप तो इसको बुरा नहीं मानते न?"

"मैं भी तो इसको अच्छा नहीं समझता।"

"ठीक है। पर वह अच्छा और बुरा आप अपने लिए कह सकते

हैं। देखिये, भापा जी ! हम स्वयं केश नहीं रखते, परन्तु हम अपनी बात किसी दूसरे पर थोपते नहीं। हमने आपसे कभी बहन के विवाह से पूर्व तथा पश्चात् नहीं कहा कि आपने केश क्यों रखे हैं ? हमनें बहन का विवाह आपसे करने में कोई खराबी नहीं समझी।"

"आपको इसमे खराबी क्यों मालूम होती ? आपकी बहन तो हिन्दू-धर्म के कीचड़ से निकल कर गुरु महाराज के चरणों मे आ गई थी। यहाँ तो बात उलटी हुई है। गुरु महाराज की शरण छोड़कर वे कीचड़ में जा फँसे हैं।"

"इस पर भी भापा! हम सिख नही बने। यदि हम अपनी बहन को किसी ऊँची पदवी पर गया समझते तो हम भी सिख बन जाते। हमको तो हिन्दू-धर्म कीचड़ नहीं, प्रत्युत सागर प्रतीत होता है। उस सागर मे सिख भी एक भाग ही है।"

"नहीं, हम हिन्दू नही हैं। गुरु महाराज ने सिख-धर्म का निर्माण ही इस कारण किया था कि वे हिन्दुओ मे कुछ खराबी देखते थे। हिन्दू-धर्म में सुधार करने के लिए ही उन्होंने सिख-धर्म की स्थापना की थी।"

विष्णु सहाय को आज पहली बार अपनी बहन को इनके घर देने का खेद हुआ। इस पर भी उसने अपने बहनोई की बात को समझने के लिए कहा, "आप हिन्दू नहीं है तो इसका अभिप्राय यह हुआ कि हमने जान-बूझकर अपनी बहन को हिन्दू-धर्म से बाहर किया था ? उस बेचारी ने तो आपसें विवाह के लिए नहीं कहा था। वह तो गऊ थी। हमने जिसके हाथ उसका रस्सा पकड़ा दिया, वह उसके साथ चली गई। तो उसको हिन्दू-धर्म से पतित करने का पाप हम पर है ?

"इस पर भी भापा! हम ऐसा नहीं समझते थे। हम तो सिखों को हिन्दुओं की एक शाखा ही समझते थे। गुरु महाराज ने हिन्दू-धर्म की रक्षा के लिए कुछ बहादुर आदमियों की एक टोली बना दी थी। हम इस इतिहास पर विश्वास करते थे। यदि पता होता कि आप हिन्दुओं से इतनी घृणा करते है तो..."

वह कहने लगा था कि यह विवाह कभी न होता, परन्तु उसके मुख से यह बात नहीं निकली। इस पर भी वढियाम सिंह ने इस चुप्पी का अर्थ समझ कह दिया, "तो अब अपनी बहन को वापस ले जाओ और उसको पतित होने से बचा लो।"

"यदि ऐसा हो सकता है तो कर लेते। भापा ! मैं आपको इतना हठी नहीं समझता था। अच्छा अब मैं जाता हूँ।" इतना कह विष्णु-सहाय उठकर जाने लगा तो वढियाम सिंह ने उसको हाथ के सकेत से रोककर कहा, "ठहरो ! मैं तुम्हारी बहन को बुलाकर तुम्हारे सामने ही निर्णय कर देना चाहता हूँ।"

इस पर विष्णुसहाय को भी क्रोध चढ आया था। उसने कहा, "ठीक है, उससे पूछ लो। यदि वह आपके घर में नहीं रह सकेगी तो उसको भी ले जाना होगा।"

वढियाम सिंह उठकर भीतर चला गया और दो मिनट के भीतर हरभजन की माँ को बाँह से पकड़कर ले आया। उसको विष्णु सहाय के सामने खड़ाकर कहने लगा, "देखो भागन ! यह तुम्हारा भाई कहता है कि यदि उसको पता होता तो तुम्हारा मुझसे विवाह न करते।"

"किस बात का पता होता, यह भी बता दो न ?" विष्णुसहाय ने कहा।

"हाँ, हाँ, बताता हूँ। मैंने कहा कि एक सिख के घर आने से कीचड़ से निकलकर गुरु-चरणों में आ गई हो। इस पर ये कहने लगे कि यदि इनको मेरे विचारों का पता होता तो तुम्हारा मुझसे विवाह न करते। बताओ क्या तुम पुन कीचड में जाना चाहती हो।

विष्णु सहाय का मुख क्रोध से ताम्बे की भाति लाल हो रहा था। इस पर भी वह चुप था और देखना चाहता था कि उसकी बहिन क्या चाहती है।

भागन ने वहीं भूमि पर बैठते हुए कहा, "मैं एक हिन्दू की बेटी होकर अपने पति का घर छोडकर जा नहीं सकती। ये जैसे भी हैं, मेरे पति

हैं। सुना है विष्णु ! तुम यहाँ से चले जाओ। यह बात विवाह से पहले सोचनी थी।"

विष्णु परिस्थिति की विषमता को समझता था। इस कारण वह जाने के लिए घूमा तो बढियाम सिंह ने कहा, "विष्णु ! अभी सुनो। हरभजन और अमृत को जाते ही भेज दो, वरना ठीक नहीं होगा।"

"देखो भापा ! मैं उनको पकड़कर नहीं रखे हुआ। मेरे घर के दरवाजे खुले हैं। जाओ उनको ले आओ। मुझको कुछ नहीं कहना।"

इतना कह वह घर से बाहर निकल गया।

विष्णु सहाय के चले जाने के पश्चात् बढियाम सिंह ने अपनी पत्नी से कहा, "अब तो पता चल गया है कि वे अपने मामा के घर पर हैं। तुम जाओ और उनको ले आओ न।"

"चली तो जाती हूँ, पर मुझको यह बताइये कि आप मुझको भी घर से निकाल देने के लिए तैयार हो गए थे ? आखिर क्या हो गया है आपको ?"

बढियाम सिंह बहुत खिसियाया और कहने लगा, "उस बात को छोड़ो। मुझको क्रोध चढ आया था।"

"मैं तो चली जाती हूँ, परन्तु वे इस प्रकार अब आयेंगे नहीं। वे पूछेंगे कि आप उनको पीटेंगे तो नहीं और उनको गाली तो नहीं देंगे।"

"तुम तो जानती हो कि मुझको क्रोध आ जाता है तो फिर मैं भूल जाता हूँ कि क्या उचित है और क्या अनुचित।"

"तो एक बात करिये। मेरे साथ चलिये। मैं भीतर चलकर बात करूँगी, परन्तु यदि उन्होंने कोई शर्त रखी, तो आपसे राय तो कर लूँगी।"

"तुम स्वय विचार कर लेना। मुझको अब मत ले जाओ।"

"मैं तो उनको रात भी जाने न देती। उन्होंने धर्म के विरुद्ध कुछ किया है अथवा वे धर्म पर आरूढ़ हैं, इसका निर्णय करने वाली मैं कौन हूँ। मैं तो उनको जाकर कहूँगी कि घर पर चलकर रहो। मैं माँ हूँ

और वे चाहे कुछ करें, मेरे बेटे ही रहेंगे।"

"तब तो तुम सब कुछ बिगाड़ दोगी। चलो मैं भी चलता हूँ। मैं मोटर में रहूँगा और तुम भीतर जाकर बुला लाना।"

अतएव दोनों मोटर में सवार होकर विष्णु सहाय के घर पर जा पहुँचे।

विष्णु सहाय के घर पहुँचने से पूर्व ही हरभजन सिंह तो चला गया था और अमृत कॉलेज की तैयारी कर रही थी। विष्णुसहाय ने अमृत को केवल इतना बताया, "तुम्हारे पिता तुमको इस रूप में घर में लेने के लिए तैयार नहीं।" कहते-कहते उसकी आँखें आँसुओं से भर आईं।

अमृत ने देखा तो भयभीत हो पूछा, "मामा जी! क्या हुआ है वहाँ?"

"कुछ नहीं, वे तो तुम्हारी माँ को भी घर से निकाल देने को तैयार थे। परमात्मा भागन को सौभाग्यवती रखे। उसने बात टाल दी।"

अमृत के माथे पर त्योरी चढ़ गई। उसने कुछ कहा नहीं, परन्तु वह विचार कर रही थी कि यदि माँ को भी निकाल दिया गया तो क्या होगा? वह अपने मन में कुछ समझ नहीं सकी थी। यह विचार कर कि सायंकाल अपने भाई से इस विषय में कुछ निर्णय लेगी, उसने अपने मामा से कहा, "आप चिन्ता नहीं करें। हम यहाँ से भी चले जायेंगे।"

"यहा से जाने पर तो बात और भी बिगड़ जायगी। यहाँ रहोगी तो अन्त में सुलह होकर रहेगी।"

अमृत रात को आते समय अपनी किताबें तो लाई नहीं थी। इस कारण एक कापी और पैन्सिल बाजार से मोल लेने के लिए दो रुपये मामा से लेकर घर से निकली। ज्यूँ ही वह दरवाजे से निकली कि उसने अपनी माँ को मोटर से निकल घर की ओर आते देखा। यह देख उसका माथा ठनका। उसको समझ आई कि उसके पिता ने उसकी माँ को भी घर से निकाल दिया है। इससे भागकर उसको मिली और पूछने लगी, "तो मा! तुम भी आ गई हो?"

"हाँ, पर तुमको लेने के लिए।"

"हम जाने के लिए नहीं आये ।"

"तो किस लिए आये हो ?"

"माँ ! जिस घर मे मनुष्य का मान मनुष्य के नाते न होकर सिर पर बाल रखने से हो, वहाँ रहकर क्या करेंगे ? हम अपने मान की रक्षा के लिए आये हैं ।"

"देखो तुम्हारे पिता जी भी आये है । वे मोटर मे बैठे है ।"

अमृत एक क्षण तो अन्यमनस्क भाव से खड़ी रही, फिर माँ को वहीं छोड़ मोटर के समीप जा खड़ी हुई । उसने हाथ जोड़कर कहा, "भापा जी ! सत् श्री अकाल ।"

"चलो अमृत ! तुम्हारा यहाँ मामा के घर रहना ठीक नहीं है ।"

"आप भीतर तो आइये । मामाजी कहते थे कि आप बहुत नाराज़ है । कहें तो मामा जी को यहाँ बुलाऊँ ?"

"नहीं, मैं तुमको लेने आया हूँ ।"

"और भैया को नहीं ?"

"नहीं, उसने मेरे मुख पर कालख पोत दी है ।"

"उन्होंने भी तो वही कुछ किया है, जो मैंने किया है । फिर उन पर अधिक रोष क्यों ?"

"देखो अमृत ! तुम अब कॉलेज पढ़ने नही जाओगी । घर पर ही रहोगी । इस कारण तुमको तो कोई देखेगा नहीं । दो-चार महीने में केश फिर वैसे ही हो जायेंगे । तब तुम गुरुद्वारा इत्यादि मे जा सकोगी । परन्तु हरभजन की बात दूसरी है । वह तो हस्पताल में जायेगा ही और उसको लोग देखेंगे ही । उसके मित्र और मेरे परिचित सब उसको देखेंगे और जान जायेंगे कि उसने बाल कटा दिये है । दो दिन में यह विख्यात हो जायेगा कि वढियाम सिंह ठेकेदार के लड़के ने केश कटवा दिये हैं । इस अवस्था में मेरी इज्जत तो इस प्रकार ही बच सकेगी कि उसको घर पर न आने दूँ और उसको अपनी जायदाद से फारखती दे दूँ ।"

"तो मै भी नहीं जाऊँगी । आयेंगे तो हम दोनो इकट्ठे ही आयेंगे ।"

इतना कह अमृतकौर कॉलिज को जाने के लिए चल पड़ी। वढियाम सिंह ने मोटर से नीचे उतर कर मार्ग रोककर कहा, "इस प्रकार नहीं मानोगी तो मैं बलपूर्वक पकड़कर ले जाऊंगा।"

"यह आपकी इच्छा है। मैं अपनी इच्छा से नहीं जाऊँगी।"

इस समय विष्णुसहाय यह समाचार पा कि उसकी बहन और बहनोई आये हैं, मकान के बाहर आ गया। वढियाम सिंह ने अमृत को बाँह से पकडकर मोटर की ओर घसीटा तो अमृत भूमि पर लेट गई। वढियाम सिंह ने अपनी पत्नी को कहा, "तुम इसकी टाँगें पकड़ो और मैं बाँहें पकड़ता हूँ।"

भागन को यह बात पसन्द नहीं आई। उसने कहा, "छोड़ दो इसको। पढी लिखी लडकी से इस प्रकार का व्यवहार नहीं किया जा सकता। उठो अमृत! चलो, घर के भीतर चलो। देखो मार्ग पर चलते-फिरते लोग तमाशा देखने लगे हैं।"

वढियाम सिंह ने बाँहों को छोडा तो वह उठकर घर के भीतर चली गई। उसकी माँ भी उसके साथ गयी। विष्णु सहाय ने वढियाम सिंह से कहा, "भापा! आओ, तुम भी आओ। चलो, उसको समझाओ और ले जाओ।"

वढियाम सिंह राह चलते लोगों को इकट्ठा होते देख मकान के भीतर चला आया। उसको यही ठीक प्रतीत हुआ। सबके पीछे पीछे विष्णु-सहाय भी घर में आ गया।

राह चलते लोग मोटर ड्राइवर से पूछने लगे, "क्या बात है भाई!"

मोटर ड्राइवर जिला बर्दवान का रहने वाला ठाकुर था। उसने कह दिया, "लड़की ने सिर के बाल कटा दिये हैं। इस पर माता-पिता ने लड़की को पीटा है और वह भागकर मामा के घर आ गई है।"

२४

एक घण्टे की बातचीत के उपरान्त समझौता हो गया। यह निर्णय

हुआ कि सायकाल अमृतकौर और हरभजन सिंह घर चले जायेंगे। वे गुरुद्वारे तथा सिखों की संगत में नहीं जाया करेंगे। वे, जब घर में मेहमान आये होंगे, डाइनिंग हॉल मे खाना नहीं खायेंगे। वे सिख-धर्म की निन्दा नहीं किया करेंगे। इस सब-कुछ करने पर माता-पिता उन्हे केश रखने को विवश नहीं करेंगे। यदि उनकी अपनी इच्छा कभी होगी तो वे पुनः पौल ले सकते हैं।

इस प्रकार शर्त कर वढियाम सिंह और उसकी पत्नी अपनी कोठी लौट गए। कॉलेज का समय निकल चुका था। अतएव अमृत कॉलेज जाने के स्थान हस्पताल की ओर चल पड़ी। जब वह वहाँ पहुँची तो हस्पताल की मुख्य इमारत की ओर चली गई। वहाँ वह नीला और सुशील के वार्ड में जा पहुँची।

एक बज चुका था और नीला तथा सुशील अपना कार्य समाप्त कर हाथ धो रहे थे। सुशीलकुमार की दृष्टि उधर गई तो उसने समझा कि कोई नया रोगी आया है। उसने नीला से कहा, "लो एक और आ गई है। क्या अब इसको भी देखेंगी?"

नीला ने घूमकर देखा तो पहचान गई। उसने कहा, "यह रोगी नहीं है। पर···" वह आगे नहीं कह सकी। अमृत के कटे बालों पर बने कुंडल उसके कन्धों पर लटकते दिखाई पड गए थे।

"ओह!" सुशील ने भी उसको पहचाना तो विस्मय में देखता रह गया। अमृत इस फैशन मे तो उसको बहुत भली प्रतीत हुई, "यह क्या हो गया है अमृत जी?" उसने पूछा।

"चुप रहिये। महाभारत का युद्ध करके आ रही हूँ।"

"कौरव कौन थे?" नीला ने पूछा।

अमृत हँस पड़ी और पूछने लगी, "भैया कहाँ मिलेंगे?"

उत्तर सुशील ने दिया, "आज एक ऑपरेशन हो रहा है। मालूम नहीं कि खाली हुए हैं अथवा नहीं।"

"किधर है, ऑपरेशन थिएटर?"

"चलो, मैं साथ चलता हूँ।" सुशील ने कहा।

नीला हाथ धो, तौलिये से पोंछ और अपना ऐप्रॉन उतार घर जाने को तैयार हो रही थी कि सुशील ने कहा, "ज़रा अमृत जी को इनके भाई का पता कर दें तो चलते हैं।"

"बहुत भूख लगी है, सुशील बाबू।"

"चलिये आपको कार्लटन में खिला दूँगा।"

"दिवाला पिट जायगा।"

"आप चलिए तो, दिवाला भी स्वीकार है। क्यों अमृत! खाना तो नहीं खाया?"

"खाया तो नहीं लेकिन वहाँ पाँच रुपये एक खाने के लग जायँगे।"

"तो क्या हुआ? हम चार ही तो होंगे।"

"चौथा कौन? मैं तो जा नहीं रही।" नीला ने कहा।

"वाह! यह कैसे हो सकता है। आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ नीला देवी! आपको भी उस प्रसन्नता में सम्मिलित होना चाहिए।"

"क्या बात है? किस बात की प्रसन्नता है?"

"वहीं होटल में चलकर बताऊँगा।"

नीला जानती थी कि सुशीलकुमार की सरकार बाबू की लड़की से सगाई होने वाली है। सुशील की माँ ने उसकी माँ को बताया था। इस कारण वह समझी कि दावत उसी के उपलक्ष में हो सकती है। इससे चुप रही। तीनों ऑपरेशन थिएटर की ओर चल पड़े। ऑपरेशन समाप्त कर लड़के और डॉक्टर बाहर निकल रहे थे। यह देख सुशील ने कहा, "ऑपरेशन समाप्त हो गया प्रतीत होता है। अब नीला देवी को अधिक काल तक कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा। यहीं से टैक्सी लेकर चल देंगे।"

"हरभजन सिंह की गाड़ी होगी।" नीला ने सुझाव उपस्थित कर दिया।

अमृत ने कह दिया, "नहीं, आज वे गाड़ी में नहीं आये। गाड़ी बिगड़ गई थी।"

इस समय तक सब ऑपरेशन थिएटर के बाहर जा पहुँचे थे। न तो नीला ने और न ही सुशील ने हरभजन सिंह को पहचाना। वह सिर से नगा और हजामत बनवाये खडा था। अमृत जब उसके सामने जाकर खड़ी हो गई, तो वे समझ गये कि बहन-भाई ने मिलकर ससार की विशाल बिरादरी में पदार्पण किया है। सुशील तो खिल-खिलाकर हँस पडा। हरभजन के हस्पताल के साथी तो पहले ही उसकी हँसी उड़ा चुके थे। अब सुशील को हँसते देख फिर हँसने लगे।

"यह क्या हुआ है हरभजन ?"

हरभजन इन सबके विस्मय करने पर हँसता रहा और उसने उत्तर नहीं दिया। जब हसी बन्द हो गई तो नीला ने कहा, "चलिये, आपको सुशील जी निमन्त्रण दे रहे हैं।"

"कहाँ के लिए और क्यो ?"

"लंच के लिए और कुछ बात है, जो ये होटल में चलकर बतायेंगे।"

"हाँ।" सुशील ने बात स्पष्ट कर दी, "कहीं पहले बता दिया तो आप निमन्त्रण अस्वीकार भी कर सकते हैं।"

इस पर नीला ने कह दिया, "ओह! यह बात है। तब तो बिना जाने निमन्त्रण स्वीकार नहीं करना चाहिये।"

"परन्तु आप तो स्वीकार कर चुकी हैं। अब आप न कैसे कर सकती है ?"

"तो मुझको अस्वीकार होगा क्या ?" हरभजन ने पूछा।

"कह नहीं सकता कि मेरी प्रसन्नता का कारण किसी के दुःख का कारण हो जावे।"

"एक मित्र की प्रसन्नता किसके लिए दुःख का कारण हो सकती है ?"

"बताना बहुत कठिन है। सम्भव है कि वह सुख का भी कारण हो जावे।"

"पहेली मत डालो सुशील।" हरभजन सिंह ने कहा, "आज घर पर महाभारत करने जा रहा हूँ। मुझको भय है कि कहीं यहाँ पर ई

झगड़ा न हो जाय ?"

"हरभजन ! घर का महाभारत तो अमृत जी लड़ आई हैं। क्य अमृत ?"

सब हस्पताल से निकल टैक्सी-स्टैंड की ओर चल पड़े थे। हरभजन चलता चलता खड़ा हो गया और अमृत की ओर देखने लगा। अमृत न सुशीलकुमार के समर्थन मे कहा, "सुशील बाबू ठीक कहते हैं। मैं महाभारत लड़कर जीत आई हूँ ! पिताजी से समझौता हो गया है।"

"क्या हुआ है ?"

"हम यहाँ से अपने घर जायेंगे।"

"यह जीत कैसे हो गई ?"

"इसके साथ और भी बातें तय हो गई हैं। घर चलकर बताऊँगी।

"तब तो सत्य ही दावत खानी चाहिए।"

"तो भैया ! तुम ही दावत खिला दो न।"

"नहीं।" सुशील ने हरभजन के कहने से पहले ही कह दिया।" "आज तो दावत मेरी ओर से ही होगी। हरभजन सिह कल दावत दे सकता है।"

नीला को भूख लगी हुई थी। उसने टैक्सी वाले को हाथ के सकेत से बुला लिया। सब उसमें बैठे और कार्लटन को चल पड़े।

होटल के डाइनिंग हॉल में जब खाना परसा जा रहा था, सुशील ने अपने निमन्त्रण का कारण बता दिया। उसने कहा, "अमृत जी ने अपने बाल कटवाकर घर वालों से विद्रोह किया है और जिस महाभारत की ओर इन्होंने सकेत किया है, वह हम सब समझते हैं। मैं बगाली होने के नाते विद्रोहियों का भक्त हूँ। अमृत के विद्रोह के उपलक्ष में ही मैंने यह दावत दी है।"

"क्या विद्रोह कोई अच्छी बात है ?" नीला ने पूछा।

"हाँ, जब अपने अधिकारों के लिए पुरानी रूढियों से किया जाय।"

"दूसरों को देखकर ही प्रसन्न होते हैं, सुशील बाबू ! या कुछ स्वय

भी कर सकने की योग्यता रखते हैं ?"

नीला जानती थी कि सुशील के माता-पिता प्रान्तीयता में कितने रत हैं। सुशील ने नीला के कटाक्ष का यह अर्थ समझा कि वह अपने माता-पिता के भावो के विरुद्ध खडा नहीं हो सकता। इस कारण उसने कह दिया, "देखिये, हम सब यहाँ मित्र हैं। इस कारण एक-दूसरे का रहस्य मन मे ही रख सकते हैं। मै आपको एक गूढ रहस्य की बात बताता हूँ।

"एक दिन मैंने नीला जी को घर पर चाय के लिए बुलाया। ये कृपा कर आई। मेरी माता जी ने समझा कि मैं नीला देवी से विवाह करने की इच्छा रखता हूँ। मैंने बहुत कहा कि चाय देने का यह उद्देश्य नहीं है, परन्तु वे मानी ही नहीं और वे तथा पिता जी मेरा विवाह एक बगाली लडकी से करने का प्रबन्ध कर रहे हैं। मैं मान नहीं रहा।

"आज माता-पिता के रूढिवाद के विरुद्ध अमृत जी को विद्रोह करते देख मेरे मन में उत्साह भर आया है। मैं भी यह विद्रोह की पताका अपने घर में ले जाना चाहता हूँ। यह है दूसरा कारण मेरे आज के निमन्त्रण का। मैं अमृत जी का कृतज्ञ हूँ कि उन्होंने मुझको अपना मार्ग दिखा दिया है।"

"कैसे विद्रोह करेंगे आप ?" नीला ने विस्मय में पूछा।

"मैं एक अबगाली लडकी से ही विवाह करने का हठ करूँगा और विद्रोह कर दूँगा।"

"पर वह लड़की और उसके माता-पिता मानेंगे तब ही न ?"

"बस आज से ही इसके लिए यत्न आरम्भ कर दूँगा।"

"वह कौन है, जिस पर आपकी दृष्टि लगी है। मैं उसको सचेत कर देना चाहती हूँ कि वह एक निपट विद्रोही के चगुल में न फँसे।"

"नीला देवी! आप नहीं जानतीं कि एक बगाली युवक आँधी के समान होता है। उसके सामने कोई वस्तु नहीं ठहर सकती। इस पर एक बगाली विद्रोही तो 'साइक्लोन' का प्रतिरूप ही होगा। बडे-बडे मकानों को भी वह उडा ले जाने की सामर्थ्य रखता है।"

इस समय भोजन का एक कोर्स आ गया था। सब खाने लगे थे। अमृत अपने मन में सुशील के लिए अति कोमल विचार रखती थी। इस कारण वह यह जानने के लिए उत्सुक थी कि सुशील किसको अपना साथी बनाना स्वीकार करेगा। इस पर भी वह अपने भावों को प्रकट करना नहीं चाहती थी। वह हृदय से इस वार्तालाप के और आगे चलने को देखना चाहती थी। जब सुशील ने अपने मन की बात कही तो अन्य बैठे हुओं की भी इच्छा हो गई कि वह किसको अपनी इच्छा का निशाना बनाना चाहता है। इस कारण हरभजन सिंह ने कहा, "मैं समझता हूँ कि सुशील का अभिप्राय नीला देवी से है। नीला देवी सुशील के घर चाय पीने गइ। इस पर सुशील की माँ ने उसके नीला देवी से विवाह को पसन्द नहीं किया। वे सुशील का एक बंगाली लड़की से विवाह पसन्द करती हैं। अब सुशील बाबू अमृत के उदाहरण से उत्साहित हो माता-पिता के विरुद्ध विद्रोह करना चाहते हैं। मैं इस सब का अर्थ यह लगाता हूँ कि ये महाशय आँधी बन नीला देवी को उड़ा ले जाने पर तुले हुए हैं।

"मुझको नीला देवी पर बहुत दया आती है। वास्तव में आप तो जानते हैं कि मैं भी नीला देवी से विवाह करने का एक प्रार्थी हूँ। आज से नहीं, कई वर्षों से। नीला देवी ने मुझको रिजैक्ट कर दिया है। इस बिना पर कि सिख हिन्दुओं से घृणा करते हैं और उनको अपने से छोटा समझते हैं। सिख हिन्दुओ को धार्मिक स्वतन्त्रता भी देना नहीं चाहते। आज मैं भी अपने बाल कटाकर यही सिद्ध कर रहा हूँ कि मैं सिख नहीं हूँ।

"मैं आँधी बनकर तो नहीं आया। मैं शरद् ऋतु की धूप की भाँति मधुर तथा स्निग्ध ताप बन इनके हृदय की हिम को पिघालने का यत्न करना चाहता हूँ।"

नीला अपने विषय में अपने दो साथियों को इस प्रकार बातें करते देख खिलखिलाकर हँस पड़ी। हँसकर उसने कहा, "एक बात समझ में आई है कि सिर के बाल कट जाने से मस्तिष्क कविता करने लगता है। मधुर स्निग्ध, ताप, हिम बहुत सुन्दर उपमा है। देखना तो यह है कि

आँधी और सूर्य का ताप एक स्थान पर एकत्रित होने वाले है, कहीं दोनों अपने गुण एक-दूसरे से टकराकर नि.शेष न कर लें।"

"मैं एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ।" सुशील ने कहा, "मैं हरभजन सिंह के ताप का विरोध करने नहीं आ रहा।"

"अर्थात् तुम्हारी दृष्टि नीला देवी पर नहीं है?" हरभजन सिह ने प्रसन्नता से देदीप्यमान होते हुए पूछा, "तो मैदान साफ है।"

"हाँ।" सुशीला ने कहा।

"तो वह कौन है?" नीला ने बात अपने पर से बदलते हुए पूछा।

"समय पर पता चल जायेगा। अभी आज की यह दावत तो अमृत जी के विद्रोह के उपलक्ष मे ही समझनी चाहिए।"

"यदि आप अपना चुनाव बता देते तो आज की दावत मे रग जम जाता।" अमृत ने झिझकते हुए कहा।

"मुझको डर है कि कहीं आप में से कोई भाँजी न मार दे।"

"मैं वचन देती हूँ कि मैं आपकी निन्दा नहीं करूँगी।"

"पर नीला देवी ने तो चुनौती दे दी है। वे तो मेरे लक्ष्यविन्दु को सचेत करने के लिए कह रही है।"

हरभजन सिह ने मिन्नत करने के भाव में कह दिया, "नीला देवी! आपको तो ऐसा नहीं करना चाहिए। सुशील हमारे सहपाठी है, साथी हैं और मित्र हैं।"

"मुझको इनमे कोई गुण प्रतीत नहीं होता।" नीला ने मुस्कराते हुए कहा।

सुशील ने हँसते हुए कहा, "लोमडी को दाख न मिली तो कहने लगी थू कडवी।"

"ओह! तो मै लोमडी हूँ?"

"नहीं तो मेरी निन्दा क्यों करेगी? क्या मै लँगड़ा हूँ, लुंजा हूँ अथवा अपाहज हूँ?"

"आप विद्रोह करेंगे न? इस कारण। आज माता-पिता से विद्रोह

करेंगे। कल पत्नी से भी विद्रोह कर सकते हैं। मुझको विद्रोह के स्थान सत्याग्रह पसन्द है।"

"मुझको विद्रोह पसन्द है।" अमृत ने कह दिया, "मैं स्वय एक विद्रोही हूँ और मुझको विद्रोही बहुत अच्छे लगते हैं।"

"तब तो ठीक है।" सुशील ने प्रसन्नवदन हो कहा, "मेरी विजय का प्रथम चरण तो शुभ पड़ा है।"

"ओह, समझी।" नीला ने कहा, "तो यह बात है। विद्रोही-विद्रोही की खूब पटेगी।"

अमृत हँसी तो सब हँसने लगे। सुशील बहुत प्रसन्न था। उसने अपने मन के भाव अपनी प्रेमिका पर व्यक्त कर दिये थे।

दो

१

प्रबोध से विवाह के पश्चात् ही नीला को यह समझ आया कि वह डॉक्टर बनकर भी, यदि अपने पति की आय पर निर्भर रही, तो वह अपनी स्वतन्त्रता, जिसको वह अपने मन में बचपन के काल से ही प्रश्रय दे रही थी, निर्मूल हो जायेगी। इस कारण उसको अपना चिकित्सा-कार्य आरम्भ करने के लिए चिकित्सालय खोलना आवश्यक हो गया।

इसमे एक कारण यह भी हो गया कि प्रबोध का कारखाना अभी खर्चा निकालने के योग्य नहीं हुआ था। नीला ने जब इस विषय मे बात की तो प्रबोध ने उत्तर मे कहा, "नीला देवी! मैने कहा था न कि मेरा कारखाना सहचारिता की प्रथा पर चलेगा। मै चाहता हूँ कि उसकी कमाई अभी कुछ वर्ष तक उसमे ही डाली जाय, जिससे उसमे लगा सरमाया कारखाने का अपना ही हो जावे। मै अभी घर के खर्चे के लिए उसमें से निकाल नहीं सकता। यह बात एक-दो वर्ष के उपरान्त हो सकेगी।"

"यदि आप यह करना चाहते हैं कि पिताजी से लिया धन, शीघ्राति शीघ्र वापिस कर दिया जाए तो मैं इस प्रयास मे आपकी पूर्ण सहायता करूँगी। मैं अविलम्ब अपना चिकित्सालय खोलकर घर के खर्चे के लिए पैदा करने लगूँगी।"

उसके विवाह के समय उसके पिता ने दस सहस्र रुपये की कीमत का सामान और भूषण दिये थे। इसमें लगभग दो सहस्र रुपया नक़द भी था। उससे नीला ने अपना कार्यारम्भ करने का विचार कर लिया। अगले ही दिन वह चिकित्सालय के लिए स्थान ढूँढने में लग गई। प्रबोध ने विवाह होते ही एक कोठी राय बरेली रोड पर किराये पर ले ली थी और वह अपने माता पिता से पृथक् रहने लगा था। यद्यपि प्रबोध की माता ने इसको कुछ अच्छा नहीं समझा था, परन्तु प्रभुदयाल, जो विलायत के आचार विचार को ठीक समझता था, इस बात में लड़के को प्रोत्साहन देता रहा। कोठी नगर से दूर होने के कारण चिकित्सालय के लिए उपयुक्त स्थान नहीं था। इस कारण नीला को अपने निवास-स्थान से पृथक् दूर आकर चिकित्सा-कार्य करने के लिए स्थान ढूँढना पड़ा।

दो-चार दिनों में वह नगर के सब प्रमुख स्थानों में घूम गई। वह कोई बैठकनुमा दूकान चाहती थी और उसमें वह बच्चों और औरतों के लिए चिकित्सा-कार्य करना चाहती थी।

इस खोज में वह अमीनुद्दौला पार्क में से भी गुजरी, जहाँ उसने हरभजन सिंह का क्लिनिक देखा। पहले दिन तो वह उसके आगे से गुजर गई। उसकी इच्छा साझेदारी में काम करने की नहीं थी। इस कारण उसने दूकान की खोज में हरभजन सिंह से बात नहीं की। परन्तु जब कई दिन की खोज के पश्चात् भी उसको उपयुक्त स्थान नहीं मिल सका तो वह अपनी खोज में हरभजन सिंह से सहायता लेने के लिए उसके क्लिनिक में जा खड़ी हुई।

यह तीन दर की एक बड़ी-सी दूकान थी। हरभजन एक कोने में बैठा था। उसने चीरा फारी के लिए ही प्रबन्ध किया था। दूकान में बहुत-सा स्थान खाली पड़ा था।

जब नीला दूकान में आई, तो हरभजन सिह किसी से बातें कर रहा था। नीला एक ओर खड़ी हो दूकान में स्थान तथा उसमें फर्नीचर देखने लगी। हरभजन सिंह ने उसको देखा तो उठकर खड़ा हो गया

और आगे बढकर हाथ जोडकर बोला, "आइये डॉक्टर नीला ! आज आपके दर्शनों का सौभाग्य कैसे मिला है ?"

"अपने क्लिनिक के लिए कोई स्थान ढूँढ रही थी कि आपको बैठा देख मिलने चली आई हूँ । मैंने समझा कि शायद आप पहचान सकें ।"

हरभजन सिंह ने नीला को सिर से पाँव तक देखकर कहा, "कुछ बदला दिखाई नहीं देता । पहचानने में कोई कठिनाई नहीं हुई ।"

"कुछ परिवर्तन तो हुआ ही है । यदि आपकी मोटी दृष्टि उसको नहीं देख सकी तो अच्छा ही है । बताइये काम-धन्धा कैसा है ?"

"माइनर ऑपरेशन के केस तो आते ही रहते है । हाँ, तीन मास में एक मेजर ऑपरेशन का केस मिला और वह भी भगवान् की कृपा से 'राम नाम सत्य' हो गया ।"

"ओह ! क्या था उसको ?"

"गाल स्टोन निकालने में यह हो गया ।"

"वैसे तो अब कुछ मिलने लगा है क्या ?"

"जब पढता था, तो समझता था कि ऑपरेशन-पर-ऑपरेशन करने को मिलेगे, परन्तु तीन महीने मे एक ही ऐसा केस आया और उसमें भी असफलता देख निरुत्साह हो गया हूँ ।

"समझा था कि महीने में दो-तीन हजार रुपया पैदा करना साधारण-सी बात होगी, परन्तु नौबत तीन-चार सौ तक भी नहीं जाती । इतना तो दूकान का खर्चा ही है ।"

"यह ठीक है । परन्तु अभी तो आरम्भ ही है न । चार महीने में यदि तीन सौ तक भी नौबत पहुँच गई है तो ठीक ही है ।"

"मुझको भय है कि यदि एक-दो वर्ष तक मेजर ऑपरेशन न आये तो अभ्यास छूट जायेगा ।"

"और जब ऑपरेशन के केस आने लगेंगे तो पुनः अभ्यास हो जावेगा ।"

"बहुत आशावादी हो, नीला देवी ! जब काम आरम्भ करोगी तो

पता चलेगा ।"

"काम तो करना ही है, चाहे पता चले चाहे न चले ।"

इस पर हरभजन सिंह नीला को दूकान का फर्नीचर और चीरा-फारी का सामान दिखाने लगा । दिखाते हुए उसने कहा, "सब सामान पर मैं पाँच हजार तक व्यय कर चुका हूँ । अभी दस हजार और चाहिए । मैं साथ-साथ पैथोलौजिकल लैबोरेटरी खोलना चाहता हूँ और एक ऐक्सरे का आला लगाना चाहता हूँ ।"

"पिता जी से माग लीजिये न । आपको रुपये की कमी होनी नहीं चाहिए ।"

"जब से मैंने केश कटवाये हैं, पिता जी ने मेरा बहिष्कार कर रखा है । वे मेरे साथ बोलते भी नहीं । रहता तो कोठी में ही हूँ, परन्तु उनके दर्शन किये सप्ताह ही व्यतीत हो जाते हैं ।"

"बहुत विचित्र बात है । तो जो रुपया लगाया है, वह कहाँ से आया है ?"

"मामा जी से पाँच हजार उधार लिया था । वह सब व्यय हो चुका है । यही कारण है कि मैं अपनी आय बढाने में लगा हुआ हूँ । मैं उनका ऋण शीघ्र ही उतारने का यत्न कर रहा हूँ । मैंने कुछ बीमा-कम्पनियों में डॉक्टर बनने के लिए प्रार्थना की हुई थी, परन्तु उन पर सरकार ने अधिकार कर लिया है और अब वहाँ क्या होगा, कहा नहीं जा सकता ।"

२

नीला इस परिस्थिति को देख अपने को भाग्यवान मानती थी, जो हरभजन सिंह से विवाह के लिए राजी नहीं हुई । प्रबोध में और चाहे जो भी दोष हो, उसने उसको चिकित्सा-कार्य के लिए विवश नहीं किया था । साथ ही प्रबोध के पिता जी ने लड़के को काम पर लगाने के लिए पूरी सहायता की थी ।

हरभजन सिंह ने उसको चुप देख पूछ लिया, "आपको क्लिनिक के लिए स्थान मिला है अथवा नहीं ?"

"नहीं, अभी नहीं मिला।"

"कितना स्थान चाहिए आपको ?"

"बहुत अधिक नहीं चाहिए। बीस गज-स्क्वेयर मिल जाय तो मै अपना सब प्रबन्ध कर लूँगी।"

"इसी दूकान का आधा क्यो नहीं ले लेतीं ?"

"क्या आप अब भी देगे ?"

"क्यो नहीं ? आधा किराया आप दे दें तो जरूर दे दूँगा।"

"कितना देना पडेगा ?"

"पूरी दूकान का डेढ सौ देता हूँ। पचहत्तर रुपये आप दे दीजिएगा। सफाई के लिए एक नौकर रखा हुआ है। वह भी दोनो स्थानो पर काम कर देगा। उसका आधा वेतन, आधा बिजली-पानी का खर्चा। सब मिल-मिलाकर आपको सवा सौ खर्च बैठ जायगा।"

"विचार कर लीजिए। मै तो तैयार हूँ।"

"तो ऐसा करिये, आप किराया पेशगी देकर कल से अपनी फिटिंग करवानी आरम्भ कर दीजिये।"

"हरभजन जी! बहुत ही धन्यवाद। मै समझती थी कि आप नहीं मानेंगे। इसी कारण कई दिन से इधर-उधर भटक रही थी और आप तक आने का साहस नहीं कर सकी।"

"यह सन्देह और सकोच क्यों हो रहा था ? मैंने तो आपको आज से छः मास पूर्व ही यह प्रस्ताव दिया था।"

"तब आप मुझसे विवाह के लिए इच्छुक थे। अब मेरा विवाह प्रबोध जी से हो चुका है।"

"नीला! एक बात पूछूँ ? नाराज तो न हो जाओगी ?"

"नाराज क्यों हूँगी ? पूछिये, क्या पूछना चाहते हैं ?"

"आप अपने विवाहित-जीवन से सन्तुष्ट है ?"

"असन्तोष के लिए कोई कारण प्रतीत नहीं हुआ। आपने यह बात क्यों पूछी है?"

"पिछले दो मास से मेरा प्रबोध जी से मेल हो रहा है। उनके हाव-भाव से मुझको कुछ ऐसा भास हुआ है कि वे विवाहित-जीवन से सन्तुष्ट नहीं। उनका मेल-मिलाप अपने से निम्न कोटि के मनुष्यों से बहुत है।"

"मुझको ऐसी कोई बात विदित नहीं, जिससे मैं उनके व्यवहार को पसन्द न करूँ। हम अपने निजी जीवन में स्वतन्त्र हैं। पारिवारिक-जीवन में हम एक-दूसरे के विरुद्ध किसी प्रकार का काम नहीं करते।"

हरभजन सिंह गम्भीर हो कुछ विचार करने लगा। इसके अनन्तर उसने उनके निजी जीवन में झाँकने के लिए क्षमा माँगी। नीला ने कहा, "क्षमा की कोई आवश्यकता नहीं। मुझको आपका पूछना कुछ बुरा नहीं लगा। मैं समझती हूँ कि आपका इस पूछने में उद्देश्य मेरा हित ही है।"

"मेरे साथ तो मज़ाक ही हुआ है।" हरभजन ने कमरे की छत की ओर देखते हुए कहा, "सरदार निरजन सिह दिल्ली यूनिवर्सिटी के बायोलोजी के प्रोफेसर हैं। उनकी पत्नी और लडकी मुझको विवाह के लिए देखने आई थीं। दोनों देख पसन्द कर चली गईं, परन्तु प्रोफेसर साहब ने मुझको केश-धारी न होने से अस्वीकार कर दिया है। उनका एक पत्र आया था, जिसमें उन्होंने लिखा था, 'मुझको विदित हुआ है कि आपने एक हिन्दू लड़की से विवाह करने के लिए केश शहीद करवा दिए हैं। उस लड़की ने विवाह कहीं अन्यत्र कर लिया है। अब आप केश रखवा लें, जिससे आपका विवाह पन्थ के भीतर हो सके।'

"मैंने लिख दिया है, 'यह ठीक है कि मैंने केश एक हिन्दू लड़की के कहने पर कटवाये हैं। उसने कहा था कि ये जहालत के चिह्न हैं। जब एक बार कटवा लिये तो जो आनन्द अनुभव करता हूँ, वह केश पुन रखने के लिए स्वीकृति नहीं देता। उस लड़की ने विवाह तो किसी अन्य से कर लिया है। इसमें कारण यह है कि वह लड़की विवाह के अर्थ

एक परिवार को छोड़कर किसी दूसरे परिवार मे सम्मिलित होना समझती है। उसके विचार मे मेरे परिवार में अभी भी जहालत विद्यमान है और उसने ऐसे परिवार में आना स्वीकार नहीं किया।'

"इस पत्र का उत्तर आया है। उसमें लिखा है कि उनकी लड़की केश-धारी से ही विवाह करना चाहती है।

"इस उत्तर का परिणाम यह हुआ है कि माता-पिता और भी अधिक रुष्ट हो गये हैं। वे इस सम्बन्ध से पचास हजार की आशा लगाये हुए थे।"

"तो इसमे हँसी की क्या बात है? आपको सिख-समुदाय में विवाह की आशा ही नहीं करनी चाहिए।"

"मैंने न तो आशा की थी, न इच्छा। वे स्वय तो देखने आये और स्वय ही ऐसा भाव बनाने लगे, जैसे मेरी प्रार्थना को उन्होने रद्द कर दिया है। परन्तु एक और मजेदार बात हुई है। मुझको दिल्ली से एक लडकी का पत्र आया है। वह मुझसे विवाह करना चाहती है। लड़की का नाम वही है, जो प्रोफेसर निरजन सिह की लडकी का है।"

"उसने अपना पता लिखा है क्या?"

"हाँ, परन्तु यह उसका अपना पता प्रतीत नहीं होता। ऐसा मालूम होता है कि उसने अपनी एक सहेली की मार्फत उत्तर मँगवाया है।"

"तो एक बात करिये। उसको अपना एक चित्र भेजने के लिए लिखिये।"

"यह तो मैंने लिख दिया है। साथ ही यह लिखा है कि एक सिख-परिवार में पैदा होकर हरभजन सिंह नाम रखते हुए भी मैं सिख नहीं हूँ।"

"कब तक उत्तर आने की आशा है?"

"देखे।"

"तो ठीक है, अभी तो इसको मज़ाक समझने की आवश्यकता नहीं।"

"मजाक तो यह है कि हिन्दू मुझसे विवाह करना नही चाहते। वे

मुझ पर सन्देह करते हैं कि मैं विवाह के पश्चात् पुनः केश, दाढ़ी रख लूँगा और सिख मुझको पतित हो गया समझते हैं।"

"कौन हिन्दू ऐसा समझते हैं?"

"पूछकर क्या करेंगी आप?"

"जानने में हानि है क्या?"

"आप भी तो यही समझती थीं।"

"नहीं, मुझको आपकी सत्यता पर सन्देह नहीं था, मुझको प्रबोध जी अधिक प्रिय हैं।"

"तो आप मुझको यह बात कह कि सिख रूढिवादी हैं, मुझको सिख-धर्म छोडने के लिए क्यों कह रही थीं?"

"यह कहा था मानवता के नाते। इसका विवाह के साथ कोई सम्बन्ध नहीं था।"

"पर कम्युनिज्म एक प्रकार का पक्षपातपूर्ण मत नहीं है क्या?"

"है। परन्तु प्रबोध जी ने वचन दिया है कि वे बुद्धि से इसको ठीक समझते हैं लेकिन मुझको अपनी स्वतन्त्रता रखने की स्वीकृति देते हैं। साथ ही उनके माता-पिता, जिनके साथ मेरा सम्बन्ध बन गया है, उदार हिन्दू विचार रखते हैं।"

"हाँ, यदि प्रबोध अपनी बात का पालन कर सके तो।"

"क्यों नहीं करेंगे?"

"इसलिए कि वह कम्युनिस्ट है। उसके विचारों में कार्य-सिद्धि मुख्य और साधन गौण होते हैं।"

"प्रबोध जी ऐसे नहीं हैं।"

३

अगले दिन नीला ने दो सौ रुपया हरभजन सिंह के पास जमा करा दिया और फर्नीचर फिट करवाना आरम्भ कर दिया। पन्द्रह दिन में नीला का चिकित्सालय हरभजन सिंह के चिकित्सालय के साथ खुल गया।

नीला के पास औरतें और बच्चे चिकित्सा के लिए आने लगे। वह ऑपरेशन के केस हरभजन सिंह को देने लगी। इस प्रकार दिन व्यतीत होने लगे। नीला का काम चलने लगा और हरभजन सिंह के काम में भी उन्नति होने लगी।

सुशील कुमार की बलरामपुर हस्पताल में हाउस-सर्जन के रूप में नौकरी लग गई। वह नित्य इनसे मिलने दूकान पर आया करता था। वहाँ प्रायः अमृत से उसकी भेंट हो जाया करती थी। अमृत अभी भी कॉलेज मे पढती थी। दोनों जिम हाव-भाव में रहते थे, उससे यह प्रायः निश्चय ही प्रतीत होता था कि दोनों का विवाह होगा। अमृत अपने बालिग होने की प्रतीक्षा कर रही थी।

इस मेल-मिलाप को कई मास हो चुके थे। इस समय यह समाचार विख्यात होने लगा कि नीलरत्न भट्टाचार्य के लडके सुशील कुमार, हाउस-सर्जन बलरामपुर हस्पताल, का विवाह मनमोहन सरकार की लड्की से होने वाला है। नीला सरकार बाबू की स्त्री की चिकित्सा करती थी। उससे ही उसको यह बात पता चली थी। उसने, जो अमृत और सुशील के परस्पर व्यवहार को जानती थी, यह समाचार हरभजन सिह को बता दिया। बात अमृत से की गई तो उसने कह दिया कि सुशील बाबू समय टालने के लिए इस भ्रम को दूर नहीं कर रहे। यद्यपि इस बात से सन्तोष नहीं हुआ तो भी हरभजन सिह ने अमृत के बालिग हो जाने तक इस चर्चा को आगे नहीं चलाया।

इस समय एक घटना घटी। अमृत के माता-पिता ने अमृत का विवाह रचा दिया। गुरुद्वारा कमेटी के मन्त्री सरदार कर्तार सिह के सुपुत्र सरदार प्रीतम सिह से सगाई स्वीकार कर ली। प्रीतम सिह ने एम० ए० पास कर पंजाब के शिक्षा-विभाग में नौकरी स्वीकार कर ली थी। वह जालन्धर मे डिस्ट्रिक्ट इन्स्पैक्टर नियुक्त हुआ था।

सरदार बढियाम सिह ने दोपहर के समय सरदार कर्तार सिह के घर सगाई का शकुन भेजा तो कर्तार सिंह के घर की स्त्रियाँ अमृत को देखने

और उसको भूषण, कपडे इत्यादि देने के लिए उसी सायकाल आई। यह सब-कुछ इतना चुपचाप किया गया कि अमृत को इसका उस समय ही पता चला, जब उसकी बनने वाली ससुराल की स्त्रिया उसको घेर कर खड़ी हो गई। अमृत कॉलेज से आकर कमरे में बैठी ही थी।

अमृत की माँ उन स्त्रियों के साथ थी। एक स्त्री भूषणों का डिब्बा और कपडों का जोड़ा उठाये हुए साथ थी। यह स्त्री अमृत के सामने आई और उसके सिर पर प्यार देने लगी। अमृत इस समय कुर्सी पर बैठी हुई थी, अन्य स्त्रिया समीप रखी कुर्सियों पर बैठ गई थीं। इस समय अमृत की माँ ने कहा, "अमृत बेटी! इनके चरण-स्पर्श करो। ये तुम्हारी सास हैं।"

अमृत का मुख विवर्ण हो गया। वह काठ की पुतली की भाँति बैठी की बैठी रह गई। उस स्त्री ने भूषणों का डिब्बा खोला और उसमें से एक कण्ठी निकाल कर अमृत के गले में डालने के लिए हाथ बढाया। अब अमृत को समझ आया कि क्या हो रहा है। उसने कण्ठी दोनों हाथ बढाकर पकड ली और अपने सामने रख ली। अमृत की माँ ने कहा, "बेचारी को लज्जा लग रही है।"

"सब ठीक हो जायेगा," दूसरी स्त्री ने कहा और अमृत का माथा चूम लिया। इसके पश्चात् वह सब सामान, जो वे स्त्रिया लाई थीं, अमृत के सामने रखकर, बधाइयाँ देकर कमरे के बाहर चली गई।

उनके चले जाने के पश्चात् अमृतकौर कमरे से निकली और सीधी अपने भाई की दूकान पर जा पहुँची। वहाँ हरभजन सिंह को रोगी देखने के कमरे में ले जाकर रो-रोकर पूर्ण घटना बताने लगी।

हरभजन सिह यह समाचार सुन बहुत चिन्तित हुआ। इस विषय में उसने नीला से राय करनी उचित समझी। वह अमृत को वहीं छोड़ नीला के चिकित्सालय में चला गया। जब नीला रोगियों को देखकर खाली हुई तो हरभजन सिंह उसको अपनी दूकान में ले आया और रोती हुई अमृत को दिखाकर कहने लगा, "उस आदमी के लड़के से अमृत का

विवाह किया जा रहा है, जिसके सामने हम बाल कटवाने के पश्चात् जा भी नहीं सकते थे।"

"तो इसको आपकी विजय समझूँ अथवा पराजय?"

"इन लोगों की धूर्तता। जहाँ तक मै समझा हूँ, विवाह के पश्चात् ये लोग अमृत को विवश करेंगे कि वह उनकी भाँति ही रहे।"

"तो इसका अभिप्राय यह हुआ कि जीवन-संघर्ष आरम्भ हो गया है। यदि और कोई बात न हो तो अमृत अपने ससुराल मे जाकर स्वतन्त्रता की अलख जगा दे।"

"नीला देवी! यह नहीं। मेरा तो यह कहना है कि मै वहाँ विवाह पसन्द नहीं करती।"

"क्यों? जब तुम्हारे माता-पिता यहाँ विवाह पसन्द करते है, तो तुम कैसे इन्कार कर सकती हो? तुम अभी नाबालिग हो।"

"मै तीन-चार मास में बालिग होने वाली हूँ। मै तब तक के लिए ठहरना चाहती हूँ, जिससे मैं स्वतन्त्रतापूर्वक विचार कर सकूँ।"

"यह विवाह कब हो रहा है?"

"यह मालूम नहीं है।"

"तो पहले यह पता करना चाहिए।"

इस पर हरभजन सिंह ने इस बात का पता करने को कहा।

अमृतकौर ने कहा, "भैया! मैं इस लड़के से विवाह नहीं करूँगी। मैंने इसको देखा है। वह मुझे पसन्द नहीं है।"

"यदि वह तुमको अपनी निज की बातो मे स्वतन्त्रता दे दे, तब भी क्या तुम पसन्द नहीं करोगी?"

"नीला देवी! मैंने सुशील जी से विवाह का वचन दिया हुआ है। इस कारण मैं अन्य किसी से विवाह नहीं कर सकती।"

"कब वचन दिया है? हमारा तो विचार है कि उसका विवाह मन-मोहन सरकार की लड़की से हो रहा है।"

"मैं जानती हूँ। साथ ही मैं आपको बताना चाहती हूँ कि समय

निकालने के लिए यह सब, एक प्रकार से अभिनय किया जा रहा है।"

इस पर हरभजन सिह ने कह दिया, "बहुत ही विचित्र बात है। मैं सुशील बाबू को चिरकाल से जानता हूँ। उसके कहने पर कोई भी विश्वास नही करता। वह भावुक आदमी है और भावनाएँ तरल पदार्थ की भाँति परिस्थितियो के बर्तन मे पड़, उसी के रूप की हो जाती हैं।"

"परन्तु मै सुशील बाबू से प्रेम करती हूँ।"

"प्रेम क्या होता है? क्या यह पसन्द का दूसरा नाम नही? पसन्द तो बदल भी सकती है। यदि सुशील के विषय मे अधिक जानकारी प्राप्त करने पर विचार बदल जाये, तो पसन्द क्यो नही बदल सकती?"

"प्रेम पसन्द से भिन्न वस्तु है। पसन्द का सम्बन्ध केवल शरीर से होता है। प्रेम मन का विषय है। यह एक प्रकार का सम्मोहन है।"

"नही अमृत!" हरभजन सिह ने कुछ डॉटकर कहा, "यह ठीक है कि तुम प्रीतम सिह को पसन्द नही करती और हमे तुमको उससे विवाह करने पर विवश नही करना चाहिए, परन्तु इसका अर्थ यह नही हो सकता कि हम तुमको एक ऐसे व्यक्ति के सम्मोहन मे फँसने दे, जिसका भरोसा ही नहीं किया जा सकता। देखो! पसन्द केवल शरीर के रूप-रग की ही नही होती। पसन्द किसी के विचारो की, किसी के सस्कारो की अथवा किसी के स्वभाव की भी हो सकती है। प्रत्येक विषय मे पसन्द जैसा मैने बताया है, समय पाकर और ज्ञान-वृद्धि से बदल सकती है।"

अमृत इस प्रकार की युक्तियो का कुछ भी उत्तर नही रखती थी। इस पर भी वह अपने मन मे यह इच्छा रखती थी कि हरभजन के सब अनुमान असत्य हो।

इस समय नीला ने अमृत से कहा, "अमृत! क्यो न तुम्हारे भैया सरदार कर्तार सिंह से मिलकर उसके विचारो का परिचय प्राप्त करे और यदि तुम मुझ पर विश्वास रखती हो तो मै क्यो न सुशील से मिलकर उसके विचारो का पता करूँ?"

अमृत चुप थी। वह समझ नही रही थी कि उसको क्या करना

चाहिए। उसके चुप रहने का यह अर्थ लिया गया कि वह स्वीकार करती है कि उसका भाई और नीला उन दोनों परिवारों का ज्ञान प्राप्त करे, जिनके युवक उससे विवाह के इच्छुक हैं।

बात यहाँ ही समाप्त हो गई और नीला अपने चिकित्सालय मे चली गई। उसके चले जाने के पश्चात् हरभजन ने अमृत को कहा, "मै प्रेम एक निरर्थक वस्तु मानने लगा हूँ। मैं पहले नीला से प्रेम करता था। मैं समझता था कि यदि उसने मेरे अतिरिक्त किसी अन्य से विवाह किया तो मेरा 'हार्ट फेल' हो जायेगा। नीला का विवाह हो गया और मैं अभी भी जीवित-जाग्रत हूँ।

"अब मैं दो अन्य लडकियों से विवाह की बातचीत कर रहा हूँ। मैंने अब प्रेम को एक ओर रख दिया है और दोनो के गुण-अवगुणों का अध्ययन कर रहा हूँ। मै समझता हूँ कि मन के इस भाव मे मै गलती नहीं करूँगा।"

"वे कौन हैं भैया।"

"एक है नीला की सहेली, माधुरी और दूसरी है प्रोफेसर नरिजन-सिह की लडकी लीलावती।"

"प्रोफेसर नरिजन सिह से तो बातचीत टूट चुकी थी।"

"हाँ, परन्तु उसकी लड़की से अभी भी बात चल रही है। वह इस विषय में अपने माता-पिता से विद्रोह करना चाहती है। वह लखनऊ आकर मुझसे मिल चुकी है और उसकी चिट्ठी-पत्री आती रहती है।"

"और यह माधुरी कैसी लगी है?"

"अच्छी है। सभ्य, सुशील और शान्त स्वभाव की है, परन्तु कुछ काली है।"

"और लीलावती गौर वर्ण की होकर भी काले मन की निकली तो?"

"यही तो इतने दिनो से जानने का यत्न कर रहा हूँ।"

"भैया! तुम दोनो में से किसी से भी प्रेम नहीं करते, तो फिर उनको उत्तर क्यो नहीं दे देते?"

"मैं प्रेम नाम की वस्तु को नहीं जानता। मैं पसन्द को ही सब-कुछ समझता हूँ। यदि बाहर का रूप लावण्य देखना होता तो अब तक विवाह प्रोफेसर साहब की लड़की से हो चुका होता। मैं उनके मन की अवस्था को जानने का यत्न कर रहा हूँ।"

"तो फिर मैं क्या करूँ?"

"तुम घर जाओ। मैं प्रोफेसर साहब से मिलकर आता हूँ।"

४

अमृत भीगी बिल्ली की भाँति दूकान से निकल गई। रात के आठ बजे रोगियों से छुट्टी पा हरभजन सिंह सरदार कर्तार सिंह के घर जा पहुँचा। सरदार कर्तार सिंह भोजन कर रहा था। हरभजन सिंह के आने की सूचना पा, भोजन छोड़ बाहर चला आया और हरभजन सिंह को बाहर बैठक में ले जा तथा बिठाकर पूछने लगा, "सुनाइये डॉक्टर साहब! कैसे आना हुआ?"

"मैं प्रीतम सिंह से मिलने आया था।"

"क्या काम है?"

"आज उसकी अमृत से सगाई हुई है न?"

"वह तो जालन्धर में है। उसकी नियुक्ति पंजाब शिक्षा-विभाग में हो गई है।"

"सच? किस पदवी पर?"

"वह वहाँ इन्स्पेक्टर ऑफ़ स्कूल्स लग गया है।"

"यह तो बहुत ही प्रसन्नता की बात है। ऐसा मालूम होता है कि यह सगाई की बातचीत सब आपके द्वारा ही हुई है।"

"हाँ।"

"पर आप तो मेरे और अमृत के सख्त खिलाफ थे। अब यह सगाई और उसके लिए सब प्रयत्न एक विस्मयजनक बात प्रतीत होती है।"

"हरभजन बेटा ! ससार में बहुत-सी बातें हैं, जो समझ का विषय नहीं। उनको समझने की आवश्यकता भी नहीं। परिस्थितियाँ और आवश्यकताएँ मनुष्य के कार्यों के सचालन में, बुद्धि से अधिक प्रभाव रखती हैं।"

"ताया जी ! उन परिस्थितियो का ज्ञान प्राप्त करने ही आया हूँ। मेरा विचार था कि प्रीतम सिंह इस सम्बन्ध मे प्रमुख व्यक्ति है। इसी कारण उनसे मिलना चाहता था। यदि आपका इसमें हाथ है, तो आप इस बात पर प्रकाश डाल सकेंगे।"

"तुम्हारा अनुमान कि प्रीतम सिह इसमें प्रमुख व्यक्ति है, ठीक ही है। मैं तो केवल उसके एजेन्ट के रूप में ही काम करता रहा हूँ। अमृत गुरुद्वारे में आया करती थी और प्रीतम सिंह ने उसको देखा था। अब नौकरी मिलने पर उसने लिखा कि उसके विवाह का प्रबन्ध अमृत से किया जाये। इस पर मैंने उसको लिखा भी कि लड़की सिख धर्म से विचलित हो चुकी है। उसने केश कटवा दिये हैं और वह बहुत ही हठी लड़की है।

"इस पर उसने लिखा कि वह इस बात को जानता है। वह उससे ही विवाह करेगा। वह चचल घोडे की सवारी को सदैव पसन्द करता रहा है।

"मैंने उसको फिर लिखा कि मै और उसकी माता पन्थ से विद्रोह करने वाली लड़की अपनी पतोहू नहीं बना सकते।

"उसका उत्तर था कि वह तो उसको अपनी बीवी बनाना चाहता है, चाहे हमारी पतोहू बने अथवा न बने।

"मेरे यह लिखने पर कि वह उसको भी केश कत्ल करने की राय देगी, तो उसने लिखा कि यदि वह ऐसा कहेगी तो वह केश कटवा देगा। इस पर भी उसको आशा थी कि जब वह उसको प्रत्येक प्रकार की धार्मिक स्वतन्त्रता देने के लिए तैयार है, तो वह उसको ऐसी कोई बात नहीं कहेगी, जो उसकी स्वतन्त्रता में बाधक हो। उसने यह भी लिखा कि

यदि हमने इस विषय में यत्न नहीं किया तो वह स्वयं लखनऊ आकर लड़की से बातचीत कर लेगा।

"मैंने ये सब बातें तुम्हारे पिता सरदार बढियाम सिंह जी को बता दी हैं और वे राजी हो गए हैं।"

हरभजन सिंह इस सब कथन को सुनकर भौचक्का रह गया। कर्तार सिंह ने उसको चुप देख यह समझा कि कदाचित् वह उसके कथन पर विश्वास नहीं कर रहा है। इस कारण उसने भीतर जाकर चिट्ठियों का एक बंडल लाकर हरभजन सिंह के सामने रख दिया। हरभजन सिंह ने बंडल खोल चिट्ठियाँ निकाल बीच बीच में से पढीं। जब उसको उनमें कर्तार सिंह का समर्थन मिला तो उसने कहा, "मेरे मन का संशय निवारण हो गया है। मैं एक प्रार्थना आपसे करना चाहता हूँ कि यदि अमृत इन पत्रों को पढना चाहे तो क्या इनको आप एक दिन के लिए दे सकेंगे?"

"क्यों नहीं? मैं समझता हूँ कि वह इनको पढकर प्रसन्न होगी। इनके पढने से उनके भावी जीवन पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा।"

हरभजन सिंह अमृत को इस परिस्थिति से अवगत करने के लिए मन में योजना बनाता हुआ अपने घर लौट आया। जब से उसका अपने माता-पिता से केशों के विषय में झगड़ा हुआ था, वह केवल आवश्यक कार्य पड़ने पर ही उनसे मिलता था। भोजन अपने कमरे में ही करता था। अतएव वह सीधा अमृत के कमरे में गया। वहाँ कमरे में उसके माता-पिता चिन्ता-ग्रस्त खड़े थे। उसने उनको इस प्रकार खड़े देख पूछा, "क्या बात है पिता जी? अमृत कहाँ है?"

"तो तुम्हारे साथ नहीं थी क्या?"

"दूकान पर गई थी और वहाँ से दो घण्टे हुए हैं, घर लौट आई थी।"

"यहाँ से वह पाँच बजे की गई हुई है। अब नौ बज रहे हैं।"

हरभजन सिंह को भी चिन्ता लग गई। उसका विचार था कि वह

अपनी सखी मनोरमा के घर गई होगी। उसने जब अपना सन्देह बताया तो माँ ने कहा, "हमने उनके घर पर टेलीफोन किया था। वह वहाँ पर नहीं है।"

"तो माधुरी के घर से पता करना था।"

"तो यह तुम करो। उनके घर में भी तो टेलीफोन है।"

हरभजन ने अपने पिता के कार्यालय मे से टेलीफोन से बैरिस्टर प्रभु-दयाल को टेलीफोन कर माधुरी को बुलाकर पूछा, "अमृत आपके यहाँ तो नहीं आई?"

"क्यों, क्या बात है?"

"दूकान से वह घर की ओर आई थी। दो घण्टे से ऊपर हो चुका है और अभी तक नहीं पहुँची।"

माधुरी ने बताया कि वह वहाँ नही गई। इसके पश्चात् हरभजन सिंह सुशील के घर जाने के लिए पुनः मोटर पर सवार हो चल पड़ा। आजकल सुशील गोमती के पास अपने हस्पताल के साथ बने बंगलों में से एक में रहता था। वहाँ उसकी कोठी मे टेलीफोन नहीं था। सुशील अपनी कोठी में नहीं था। वहाँ से हरभजन सिंह सुशील के पिता के घर गया। वह वहाँ पर भी नहीं था। अब उसको मामा की याद आई और वह वहाँ जा पहुँचा। अमृत वहाँ भी नहीं थी। हरभजन सिंह शीघ्र घर लौट आया। वह समझता था कि कदाचित् वह घर लौट आई हो। वह अभी नहीं आई थी। वह पुन. मोटर पर उसका ढूँढने चल पड़ा। वह नीला के घर जा पहुँचा। प्रबोध ने अपनी कोठी राय-बरेली रोड पर ले रखी थी। वहाँ भी टेलीफोन नहीं था।

प्रबोध बैठा सिगार पी रहा था और नीला एक मैडिकल जर्नल पढ रही थी। दोनो हरभजन सिंह को इस समय आता देख आश्चर्य मे उसका मुख देखने लगे। प्रबोध ने विस्मय मे पूछा, "हरभजन जी! इतनी रात गए इधर कहाँ घूम रहे हैं?"

"नीला देवी से एक काम था। इस कारण छः मील मोटर भगानी

पड़ी है ।"

नीला उठकर बरामदे में आ गई । हरभजन सिंह ने अमृत के विषय में बताया । नीला कुछ समझ नहीं सकी । उसने एक बात बताई, "मैं चिकित्सालय से हज़रत गज में एक रोगी को देखने गई थी । जब वहाँ से निकली तो सुशील नरही की ओर से पैदल चला आ रहा था । मैंने नमस्कार कर पूछा कि किधर से आ रहे हैं, तो उसने कहा कि वह एक मित्र के घर गया हुआ था और वहाँ से अपने घर को जा रहा है । इस पर मैंने उसके विवाह की बात चला दी । उसका कहना था, 'माता-पिता रेणु से विवाह करने का हठ कर रहे हैं । मैं समझता हूँ कि उनको नाराज करना ठीक नहीं । यद्यपि मै रेणु को बिलकुल पसन्द नहीं करता, तो भी माता-पिता से सम्बन्ध-विच्छेद नहीं कर सकता ।'

"मैंने पूछा, 'क्या अमृत को आपने विवाह का वचन दिया हुआ है ?'

'नहीं । मैंने उसको कोई वचन नहीं दिया । हाँ, वह मुझसे विवाह करने के लिए उत्सुक प्रतीत होती है । मैंने उसके विषय में बहुत विचार किया है । अमृत से मेरे विवाह के लिए न तो मेरे माता-पिता राज़ी हैं, न ही अमृत के । ऐसे विवाह से किसी का भी कल्याण मुझको समझ नहीं आता ।'

"इसके पश्चात् इधर-उधर की बातें होती रहीं । जब हम म्यूटिनी-मेमोरियल के पास पहुँचे तो उसने टैक्सी बुलाई और मुझको यह कह कि उसने हस्पताल में एक अत्यावश्यक केस देखने जाना है, टैक्सी में सवार हो हस्पताल की ओर चला गया ।

"मैं समझती हूँ कि सुशील से अमृत का विवाह नहीं होगा ।"

"पर वह गई कहाँ है ?"

इसका उत्तर नीला के पास नहीं था । निराश हरभजन सिंह घर लौट आया । वहाँ उसकी माँ और पिता अभी भी अमृत की प्रतीक्षा कर रहे थे । वे हरभजन को अकेला आते देख बहुत दु ख अनुभव करने लगे ।

वे रात-भर उसके लौट आने की प्रतीक्षा करते रहे, परन्तु वह नहीं आई ।

प्रातःकाल हरभजन सिंह अपने पिता के पास जाकर कहने लगा, "आप उसकी सगाई करने से पहले मुझसे तो पूछ लेते। न मुझसे राय की, न अमृत से।"

"हमको क्या मालूम था कि वह अब बिलकुल बागी हो गई है। मेरी सगाई मेरे पिता ने की थी और मेरे पिता की मेरे बाबा ने। प्रीतम सिंह की सगाई करने उसके पिता आये थे। कुछ हमारे ही घर में हो गया है कि बड़ों का बच्चों पर अधिकार ही नहीं रहा।"

"यह बात नहीं भापा जी! आप वे बातें करते हैं, जो सन् १६२० और १६०१ की थीं। रही कर्तार सिंह की बात, वह अपने लड़के की इच्छा से विवाह का प्रस्ताव लेकर आया था। मैं प्रीतम सिंह की अपने पिता के नाम चिट्ठियाँ पढ़कर आया हूँ। एक बात और बताता हूँ। रात सरदार कर्तार सिंह से मेरी बातचीत हुई थी। उसने कहा था कि अक्ल से अधिक परिस्थितियाँ और आवश्यकताएँ मनुष्य के कामों को प्रेरणा देती हैं।"

"यह तो उसने मुझको भी कहा था।"

"परन्तु आपने उसके कहने का लाभ नहीं उठाया। आपने अपने घर की परिस्थिति और अमृत की आवश्यकता की ओर ध्यान नहीं दिया। साथ ही आज स्वराज्य हो गया है और इस समय प्रत्येक व्यक्ति अपने प्रत्येक क्षेत्र मे स्वतन्त्रता चाहता है।"

"मैंने इसको साधारण-सी बात समझी थी। क्या लिखा था उसने अपनी चिट्ठियों मे?"

"उन चिट्ठियो में प्रीतम सिंह ने लिखा है कि अमृत के विषय मे वह सब-कुछ जानता है और वह, यदि अमृत चाहे तो, अपने बाल भी कटवाने को राजी है। यदि आप सगाई से पूर्व ये चिट्ठियाँ अमृत को दिखा देते तो इनका प्रभाव उस पर अच्छा ही होता।"

"अच्छा बाबा! तुम अब उसको ढूँढकर लाओ। जो-कुछ वह कहेगी हम मान जायेंगे।"

"देखिये यत्न कर रहा हूँ। रात को तो सफलता नहीं मिली।"

सरदार वढियाम सिंह और उसकी पत्नी का यह विचार था कि हरभजन सिंह अमृत के विषय में जानता है, परन्तु बताना नहीं चाहता। इस कारण वे उसकी खुशामद करने लगे। वढियाम सिंह ने कहा, "देखो हरभजन! मैं अब बूढा हो गया हूँ। मेरा सब-कुछ तुम्हारा ही है। अब तो मैंने अपनी आत्मा भी तुम लोगों के पास बेच दी है। अमृत को ढूँढ लाओ और जो कुछ वह कहेगी मानूँगा।"

५

अमृत का पता नहीं चला। दिन-पर-दिन व्यतीत होते गए और अमृत के माता-पिता तथा अन्य परिचितों को उसके लौटने में निराशा हो गई। हरभजन सिंह ने समाचार पत्रों में विज्ञापन छपवा दिया। उनमें उसने लिखवाया कि अमृत के माता पिता उसकी प्रत्येक बात मानने को तैयार हैं, उसको घर आ जाना चाहिए।

इन विज्ञापनों से सरदार कर्तार सिंह और सरदार प्रीतम सिंह को अमृत के घर से भाग जाने का समाचार मिल गया और सगाई टूट गई।

इन दिनों हरभजन सिंह अमृत का पता लगाने में सलग्न रहा। वह दूकान पर कम से-कम आवश्यक समय ही देता था और नीला से उसकी भेंट बहुत कम होती थी। माधुरी से मिले भी बहुत काल हो गया था। अमृत को घर से गए तीन मास के लगभग हो गए थे और लाख यत्न करने पर भी उसका पता नहीं चला था।

माधुरी कई बार हरभजन सिंह से मिलने आई थी, परन्तु वह दूकान पर नहीं मिलता था। एक दिन वह नीला के पास बैठी हरभजन और अमृत के विषय में बातचीत कर रही थी कि एक लड़की हरभजन सिंह को पूछती हुई वहाँ आई। वह नीला से पूछने लगी, "डॉक्टर हरभजन सिंह के चपरासी ने बताया है कि आप बता सकती हैं कि डॉक्टर साहब कब आयेंगे?"

"डॉक्टर साहब बताकर नहीं गये, इसलिए कह नहीं सकती। इस पर भी वे प्रायः बारह बजे से पहले आ जाया करते है।"

"मुझको आज ही पजाब मेल से जाना है। इस कारण मेरा तुरन्त मिलना अत्यावश्यक है।"

"कोई ऐसा काम हो, जिसमें मैं आपकी सहायता कर सकती हूँ, तो आज्ञा करिये। मैं यथा शक्ति सहायता करूँगी।"

"आप मुझको एक बजे से पहले उनसे मिला दीजिये। यही मेरी सहायता है।"

"आप कहाँ से आई है?"

लड़की की आँखें झुक गई। उसने धीरे से कहा, "यदि मैं आपके प्रश्न का उत्तर न दूँ तो आप क्षमा नहीं करेंगी क्या?"

नीला इस प्रकार का उत्तर सुन चकित रह गई। यह उत्तर हृदय की शुद्धता का सूचक ही कहा जा सकता था। नीला को सन्देह तो था कि वह दिल्ली से आई है और प्रोफेसर निरंजन सिह की लड़की है। इस पर भी वह विचार कर रही थी कि उससे अपना सन्देह निवारण करे अथवा न। साथ ही उसको हरभजन सिह के माधुरी से विवाह की चर्चा का भी ज्ञान था। इस कारण उसने बात आगे नहीं चलाई। उसने कहा, "कुछ हानि नहीं। आपका पता जानने से मुझको कुछ काम भी नहीं। आप यहाँ बैठिये। मैं टेलीफोन से उनके घर और मित्रों से पता करने का यत्न करती हूँ।"

हरभजन सिह प्रबोध की फैक्टरी मे मिल गया। जब नीला ने उसको बताया कि कोई लड़की उससे पजाब मेल के समय से पहले मिलने आई है, तो उसने कहा, "मैं दस मिनट में आता हूँ। वह दिल्ली से आई मालूम होती है।"

"मेरा भी यही विचार है, पर मैंने उससे पूछा नहीं। माधुरी भी यहाँ बैठी आप की प्रतीक्षा कर रही है।"

"नीला!" हरभजन सिह ने घबराकर टेलीफोन में कहा, "पर-

मात्मा के लिए माधुरी को वहाँ से टाल दो। मैं उन दोनों को परस्पर बातचीत करने का अवसर देना नहीं चाहता। अभी बात खोल देने का समय नहीं आया।

"अच्छा देखो, तुम माधुरी को यहाँ भेज दो। उससे मिलकर मैं आधे घण्टे मे दूकान पर आ जाऊँगा। उस लड़की को वहाँ ही मेरी प्रतीक्षा करने दो।"

"वहाँ प्रबोध जी नहीं हैं क्या ?"

"हैं तो, परन्तु एक विकट झगड़े में फँसे हैं।"

"क्या झगड़ा है ?"

हरभजन सिंह को समझ आ गई कि उसने एक भारी भूल कर दी है। उसको प्रबोध के विषय में कुछ नहीं कहना चाहिए था। परन्तु बात मुख से निकल गई। उसने और अधिक बात न कहने के लिए टेलीफोन बन्द कर दिया। नीला विस्मय में टेलीफोन के समीप खड़ी रही।

कुछ विचार कर वह अपनी दूकान में आई तो माधुरी से बोली, "प्रबोध जी के कारखाने में कुछ झगड़ा है। डॉक्टर साहब ने तुम्हे वहाँ बुलाया है।"

माधुरी बिना एक भी शब्द कहे उठ खड़ी हुई और टैक्सी लेकर अपने भाई के कारखाने को चली गई।

उसके चले जाने के बाद उसने दूसरी लड़की से कहा, "डॉक्टर साहब आधे घण्टे में यहाँ आ जावेंगे। आप बैठें।"

नीला अपने कार्य में व्यस्त हो गई। वह केवल बच्चों और औरतों की चिकित्सा करती थी। भारतीय समाज में सबसे अधिक रोगी इन्हीं दो वर्गों में मिलते हैं। परिणाम यह हो रहा था कि नीला का काम दिन-दुगुनी रात चौगुनी उन्नति कर रहा था।

हरभजन सिंह का काम बहुत कम था। कभी मास में एक-आध बड़ा ऑपरेशन आ जाता, तो सौ-दो सौ रुपया मिल जाता। दिन में छ-सात मरहम-पट्टी के केस आ जाते थे। इस प्रकार वह केवल अपनी

दुकान का खर्चा ही निकाल सकता था।

हरभजन और नीला ने अपना एक सयुक्त दवाईखाना खोला हुआ था, जिसमे उनके दिये नुस्खे बनते थे। दवाईखाने का ठेका हरभजन सिंह के मामा के लड़के को मिला हुआ था। इससे भी हरभजन सिंह को कुछ विशेष आय नहीं होती थी। उसके अपने रोगी बहुत कम होते थे और इस कारण नुस्खे भी कम होते थे। एक-दो मास से हरभजन सिह एक इन्श्योरैन्स कम्पनी का मैडिकल ऑफिसर नियुक्त हो गया था। इससे उसको डेढ-दो सौ मासिक की आय होने लगी थी।

जहाँ नीला को हरभजन सिंह से अधिक आय होती थी, वहाँ उसका खर्चा भी अधिक था। उसने अपनी एक छोटी-सी मोटर गाडी रखी हुई थी, जो वह स्वयं चलाती थी। इस पर भी गाडी का खर्चा डेढ-दो सौ रुपया महीना पड जाता था। कोठी का किराया दो सौ रुपया महीना देना पडता था। नौकर का खर्चा, क्लिनिक का खर्चा और साथ ही घर की रोटी-पानी का खर्चा भी वही दे रही थी।

प्रबोध ने पचास हजार की मशीनरी लगाई थी। यह रुपया उसने अपने पिता जी से उधार लिया था। कारखाने का किराया था और नौकरों का वेतन। यह वह निकालता था। प्रबोध का अपना भी खर्चा था। कारखाना खुले एक वर्ष मे ऊपर हो चुका था और अभी तक उसने घर के खर्चे के लिए कारखाने में से कुछ नहीं निकाला था।

जब-जब नीला कारखाने के विषय में प्रबोध से पूछती थी, वह कह देता था कि नया काम है, अभी उसमे से कुछ निकालने की गुंजाइश नही। परिणाम यह हो रहा था कि घर-गृहस्थी का पूर्ण खर्चा नीला को करना पड़ रहा था। उसका काम दिन-प्रतिदिन उन्नति कर रहा था, इस कारण वह इस बोझे की चिन्ता नहीं करती थी।

: ६ :

आज हरभजन सिह ने टेलीफोन में यह बताया था कि प्रबोध एक

झगड़े में फँसा हुआ है। यह उसकी चिन्ता का कारण बन गया। वह एक बजे अपने औषधालय से अवकाश पा, सीधी कोठी को चली जाया करती थी और प्रबोध वहाँ पहले ही पहुँचा होता था। आज वह अपने चिकित्सालय से साढे बारह बजे ही निकल पडी और घर जाने के स्थान कारखाने को चल पडी। उसने देखा कि कारखाने के बाहर कर्मचारी धरना दे रहे हैं। वह भीतर गई तो प्रबोध को अपने कार्यालय में बैठे हुए कर्मचारियों के नेता से बातचीत करते देखकर दरवाज़े में खड़ी रह गई।

प्रबोध नीला को वहाँ देख बहुत झेंपा और उसने पूछा, "आज भोजन नहीं करना क्या ?"

"आपके साथ ही तो करना है। चलिये।"

"मेरे पास मेरी अपनी कार है। मैं आ जाऊँगा।"

"नहीं, इकट्ठे चलेंगे।" यह कह, वह एक कुर्सी पर बैठ गई।

"नीला! तुम चलो। मैं इनसे एक आवश्यक बात कर रहा हूँ। बस पाँच मिनट में आता हूँ।"

"तो मैं पाँच मिनट यहाँ ही प्रतीक्षा नहीं कर सकती क्या ?"

"इन कारखाने की बातों में तुमको रुचि तो है नहीं। व्यर्थ में दिमाग खराब होगा।"

"आज इसका भी मज़ा लेना चाहती हूँ।"

कर्मचारियों के नेता ने समझा कि बात आगे नहीं चल सकेगी। इस कारण वह उठ खड़ा हुआ और कहने लगा, "प्रबोध बाबू! शेष बात कल करेंगे। हड़ताल अब कल भी चलेगी।"

"नहीं, मैं आज ही इसका फैसला कर देना चाहता हूँ। आप अढाई बजे आ जाइयेगा। शेष बातों पर उस समय बात कर लेंगे।"

"मुझको सायंकाल काम है, मैं आ नहीं सकूँगा।"

"इनका क्या परिचय है ?" नीला ने प्रबोध की ओर देखकर पूछा।

"ये ऑटोमोबाइल वर्कर्ज़ यूनियन के प्रधान हैं। इनका नाम

श्री शिशिर कुमार बैनर्जी है।"

"आप किस कम्पनी मे काम करते है?"

"ये काम नहीं करते। ये यूनियन के प्रधान है।"

"आप काम क्या करते है?"

उत्तर शिशिर कुमार ने दिया, "कर्मचारी वर्ग की सेवा मेरा काम है।"

"ओह समझ गई। आप 'ऐजिटेटरों' के दल में हैं।"

इस शब्द में एक व्यग भरा हुआ है। "वास्तव मे मैं ऐजिटेटर तो हूँ, परन्तु व्यर्थ की ऐजिटेशन करना मेरा काम नहीं।"

"यह तो इस हडताल का इतिहास जानने पर पता चलेगा। चलिए प्रबोध जी! इनसे बातचीत कल कर ली जायेगी।"

"नीला! तुमको यह पता होना चाहिए कि लगभग तीन सौ रुपया प्रतिदिन के हिसाब से हानि हो रही है। एक-एक दिन कठिनाई का व्यतीत हो रहा है।"

"कितने दिन से यह हडताल चल रही है?"

"एक मास से ऊपर हो गया है।"

"तो जहाँ इतनी हानि हो चुकी है, वहाँ तीन सौ रुपया और सही। चलिए, बहुत भूख लगी है।"

विवश प्रबोध भी उठा और तीनो कारखाने से बाहर आ गये। आज प्रबोध नीला की मोटर में ही घर को चल पड़ा। मार्ग मे नीला ने कहा, "मै हरभजन सिह को ढूँढ रही थी। सब स्थानों पर, जहाँ उसके मिल जाने की आशा थी, टेलीफोन किया और वे मिले आपके कारखाने मे। उन्होने बताया कि आप एक झगडे में फँसे हुए हैं। इस कारण मैंने उचित समझा कि देखूँ कि कौन ऐसा झगडा है, जिसका मुझको ज्ञान नहीं और हरभजन सिह को ज्ञान है।

"क्या मै जान सकती हूँ कि हरभजन सिह का इस कारखाने मे क्या अधिकार है, जो मुझसे अधिक यहाँ का उसको ज्ञान रहता है?

"उसका इन बातो को जानने का अधिकार कितना अधिक है, यह

तो एक बात है, मैं समझती हूँ कि आपके किसी झगड़े में फँस जाने पर सबसे प्रथम मुझको पता चलना चाहिये था, यह दूसरी बात है।"

"नीला! मैंने इस कारखाने के झगडे में तुमको घसीटने का यत्न नहीं किया। इसको व्यर्थ समझ, अपने आप ही इसकी समस्याओं को सुलझाने का यत्न करता रहा हूँ।"

"व्यर्थ क्यों है? क्या इसकी उन्नति अथवा इसकी हानि से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं? और फिर हरभजन सिंह का क्या सम्बन्ध है?"

"बात यह है कि पिता जी से इसके लिए पचास हज़ार लिया था और पीछे और रुपये की आवश्यकता पड़ी तो बैंक से लिया और जब बैंक से और नहीं मिल सका तो हरभजन सिंह के मामा से उधार लिया था। इस समय उनका दस हज़ार रुपया कारखाने में लगा हुआ है।"

"तो यह रुपया आपने सरमाया बढाने के लिए लिया था अथवा चालू खर्चा के लिये?"

"एक ही बात है। पिता जी से लिया रुपया तथा बैंक से लिया हुआ रुपया खर्च हो जाने पर ही उनसे लेने की आवश्यकता पड़ी थी।"

"पिता जी को भी तो हडताल की सूचना होगी?"

"नहीं, उनको बताने की आवश्यकता नहीं समझी। इसी प्रकार बैंक को यह बताना ठीक नहीं था।"

"मैं समझती हूँ कि यह ठीक नहीं हुआ। जिनका दस हज़ार लगा हुआ है, उनको तो आपने कारखाने की स्थिति से परिचित रखा है और जिनका पचास हज़ार लगा है, उनको आपने बताया ही नहीं।"

"बात यह है कि मैंने कारखाने के कर्मचारियों को वेतन-भत्ते और अन्य सुविधायें दूसरे कारखाने वालों से अधिक दे रखी हैं। इस वर्ष का हिसाब बनाने पर पता चला कि लाभ नाम मात्र का ही हुआ है। मैंने हरभजन सिंह से राय की तो उसने मुझको राय दी कि वेतन और भत्ते में कमी की जाये। अतएव मैंने बीस प्रतिशत भत्ते और वेतन में कमी कर दी और कारखाने के काम करने के घण्टों को बढा दिया। इस पर

कर्मचारियों ने पहिले तो नोटिस दिया और पीछे हड़ताल कर दी। मैंने नोटिस के समय और अब हड़ताल के समय भी एक-एक कर्मचारी को बुलाकर समझाया कि इस कमी करने पर भी उनका वेतन किसी भी दूसरे ऐसे कारखाने के कर्मचारियों से कम नहीं है। परन्तु ये नहीं माने और हड़ताल कर दी है।"

"यह बात तो आपकी समझ आती है, परन्तु यह समझ नहीं आता कि हरभजन सिंह की राय आपने ली और मान ली, परन्तु आपने पिता जी से इस विषय पर बात भी नहीं की, उनकी राय मानना तो दूर रहा।"

"वे वकील हैं और बुर्जिआ मनोवृत्ति रखते हैं। उनसे बात करने पर तो बात सुलझने के स्थान बिगड़ने की अधिक सम्भावना थी।"

"तो अब बात सुलझ गई है क्या?"

"वास्तव मे कुछ भी नहीं सुलझी। असली बात, जिसके लिए एक मास से हड़ताल हो रही है, वह है वेतन में कटौती। इस पर शिशिर कुमार चट्टान की भाँति डटा हुआ है।"

"तो किस बात पर समझौता हो गया है?"

"काम करने के घण्टों पर।"

"काम करने के घण्टे तो क़ानून से नियत हैं न?"

"हाँ, परन्तु मैंने कुछ रियायत कर रखी थी।"

"कितना लाभ हुआ था पिछले वर्ष मे?"

"केवल पाँच सौ पचपन रुपये।"

"आपने अपना वेतन कितना निकाला है?"

"वेतन कुछ नहीं। कारण यह कि मालिक लाभ का हकदार होता है, वेतन का नहीं।"

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि पिछले वर्ष कारखाने में हानि हुई है?"

"हाँ, असल बात तो यही है।"

"तो अब बात क्या थी, जो निश्चय नहीं हो रही थी?"

"बताया तो है कि वेतन और भत्ते की बात वे नहीं मानते। साथ ही काम करने के घण्टे बढ़ाने के प्रतिकार में पिछले वर्ष पर बोनस माँगते हैं।"

"बोनस ? जब लाभ नहीं हुआ तो बोनस कैसा ?"

"वे लाभ में बोनस नहीं चाहते। वे तो काम अधिक करने के लिए प्रोत्साहन चाहते हैं।"

"मैं समझती हूँ कि पिता जी को पूर्ण परिस्थिति से अवगत कर देना चाहिये।"

"वे मेरे मन की बात को समझ नहीं सकेंगे।"

"कुछ भी हो। जब उनसे दिया धन कारखाने में लगा हुआ है, तो उनको कारखाने की हालत से परिचित करना ही चाहिये।"

७

सायकाल प्रबोध कारखाने में नहीं गया। वह पिता जी को कारखाने की अवस्था बताने के लिए उनसे मिलने चला गया। प्रभु दयाल कारखाने की अवस्था सुन कहने लगा, "मैं तो इसमें तुम्हारा बैलेन्स-शीट देखे बिना राय नहीं दे सकता। तुम्हारे कारखाने में हो रहा काम देखकर मैं समझता था कि तुमको कम-से-कम बीस हज़ार रुपये का लाभ होगा। मुझको आश्चर्य है कि लाभ के स्थान हानि हुई है।"

बैलेन्स-शीट कारखाने में पड़ा था। इस कारण पिता-पुत्र दोनों कारखाने में चले आये। कारखाने के बाहर कर्मचारी धरना दे रहे थे। प्रभु दयाल उनको वहाँ बैठा देख पूछने लगा, "ये कौन हैं ?"

"ये कारखाने के कर्मचारियों में से हैं।"

"यहाँ क्या कर रहे हैं ?"

"धरना दे रहे हैं कि कोई काम पर न आ जाये।"

"तो कोई आने का यत्न कर रहा है क्या ?"

"मैं नहीं जानता।"

"जरूर कर रहा है।" इस प्रकार प्रभु दयाल ने एक आदमी को सम्बोधन कर पूछा, "यहाँ बैठे क्या कर रहे हो ?"

"किसी काम पर जाने वाले को रोकने के लिए यहाँ बैठे हैं।"

"पर कारखाना तो बन्द है, कौन काम पर आयेगा ?"

"क्या जाने कोई आ जाये।"

प्रभु दयाल कारखाने के भीतर चला गया और कार्यालय में पहुँच उसने कहा, "प्रबोध ! मैं तो समझता था कि तुम बहुत ही समझदार आदमी हो। तुम यह हड़ताल तोड़ सकते थे। इनके धरना देने से यह बात सिद्ध होती है कि कुछ कर्मचारी ऐसे हैं, जो काम पर आना चाहते है। यदि तुममें कुछ भी बुद्धि होती तो अभी तक यह हड़ताल टूटी हुई होती। कब से ये लोग धरना दे रहे हैं।"

"हडताल के आरम्भ होने के तीन-चार दिन पीछे ही ये धरना आरम्भ हो गया था।"

"इससे यह पता चलता है कि आरम्भ से ही ये कर्मचारी एक मत नहीं थे। इनमें कुछ तो ऐसे हैं ही, जो हडताल को न्यायसगत नहीं समझते।"

प्रभुदयाल ने कारखाने का बैलेन्स-शीट देखा। कर्मचारियो की काम की किताब देखी और पश्चात् लेजर में खर्च का खाता देखा। इसके पश्चात् उसने कागज पर कुछ बातें नोट कर लीं।

कारखाने से वह प्रबोध को साथ लेकर नीला के चिकित्सालय मे जा पहुँचा। इस समय शाम के सात बज रहे थे। वहाँ रोगियो की भीड लगी थी। इस कारण वे हरभजन सिंह की ओर चले गए। वहाँ हरभजन सिंह ने पूछा, "क्या हुआ है, मिस्टर प्रबोध ?"

"अभी कुछ नहीं हुआ।"

इस पर हरभजन सिह ने कहा, "मेरी तो अब भी यही राय है कि कारखाना बन्द कर देना चाहिए। इस ढग से यह चल नहीं सकता।"

"क्या दोष देखा है आपने ?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"इस कारखाने में प्रबोध बाबू ने एक 'ऐडवायजरी-कौंसिल' बना रखी है। उसमें कर्मचारियों के प्रतिनिधि सम्मिलित हैं। उस कौंसिल को अधिकार दे रखा है कि किसी कर्मचारी को निकालना अथवा रखना, किसी के वेतन में वृद्धि अथवा कमी करना अथवा किसी की छुट्टी मजूर करना, बहुमत से करे। यह कौंसिल जड़ है इस कारखाने की असफलता की।"

"मैं प्रत्येक काम का ढग बताता था।" प्रबोध ने कहा।

"कारखाने में मैनेजर कौन था?" प्रभुदयाल ने पूछा।

"यही कौंसिल।"

"मैंने रुपया कौंसिल को नहीं दिया था। तुमने मेरे रुपये को मुझसे पूछे बिना इस कौंसिल के हवाले क्यों कर दिया?"

"आपका रुपया तो मशीनरी में लगा हुआ है। उसमें किसी प्रकार की हानि नहीं हुई।"

"मैं हानि की बात नहीं पूछ रहा। मैं पूछता हूँ कि यह कौंसिल मेरे रुपये से खिलवाड करने का क्या अधिकार रखती है?"

"मैं समझता हूँ कि जब कर्मचारी स्वय अपना प्रबन्ध करें तो अधिक योग्यता से कर सकेंगे?"

"क्या अब भी तुम्हारा यही विचार है?"

"पिछले वर्ष तो जो-कुछ हुआ है, वह अनुभवहीनता के कारण हुआ है। इस वर्ष हानि की सम्भावना नहीं।"

"देखो प्रबोध! जब अनुभव रखने वाले लोग ससार में विद्यमान हैं तो अनुभवहीनों के हाथ मे काम देना एक अपराध है। अधिकार अनुभव के आधार पर मिलते हैं।

"मैं इस कारखाने की अवस्था देखकर इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि यहाँ आरम्भ से अन्त तक सब-कुछ गलत होता रहा है। इस कारण कल से यह कारखाना बन्द होगा। यह कारखाना किसी अधिकारी के हाथ में देने के पश्चात् खोला जावेगा। इस कारण कारखाना अभी बन्द करने

का नोटिस दे दिया जायेगा।"

"इससे भारी पेचीदगियाँ उत्पन्न हो जावेंगी।"

"मैं उनकी सब बातें कानून से आज रात देख लूँगा। इस पर भी यह तो निश्चय करना होगा कि कारखाना इस रूप मे चल नहीं सकता। जो कुछ भी देना पड़े, हम देगे, परन्तु इस प्रबन्ध को बदलना ही पडेगा।"

नीला अपने रोगियों से अवकाश पाकर वहीं आ गई। प्रभुदयाल ने बताया, "मैंने कारखाने का हिसाब देखा है और मुझको यह समझ आया है कि उसकी आर्थिक अवस्था बहुत ही बिगड चुकी है। कारखाने को देना है सत्तर हजार और इसकी सम्पत्ति है उन्हत्तर हजार रुपया। अर्थात् इसमे एक हजार रुपये की हानि हुई है।"

"आप ने वह डेढ हजार नहीं गिना, जो मैं अपने जेब खर्चे के लिए ले चुका हूँ।"

"पर इसमे तुमने उस रुपये का सूद नहीं लगाया, जो मैंने तुमको दिया हुआ है।"

"मालिक के रुपये का सूद नहीं लग सकता।"

"इस पर भी पाँच सौ रुपया लाभ तो कुछ लाभ नहीं कहा जा सकता।"

इस पर नीला ने कहा, "पिता जी! यह बात तो स्पष्ट ही है कि कारखाने की हालत अच्छी नहीं है। प्रश्न तो यह है कि इसका कारण ढूँढा जाये और उस कारण को हटाने का यत्न किया जाये।"

"मैंने कारण ढूँढ लिया है और उसका उपाय भी विचार कर लिया है। कारण यह है कि प्रबोध व्यवसाय करना नहीं जानता और इसका उपाय है कि कारखाना कल से किसी व्यवसाय की ऊँच-नीच जानने वाले के हाथ बेच दिया जायगा और प्रबोध वहाँ नौकर होगा।"

इस बात को सुन नीला और हरभजन सिह मुख देखते रह गए। उनको चुप देख प्रभुदयाल ने आगे कहा, "मैं जानता हूँ कि प्रबोध मन

में क्या विचार कर रहा है। यह समझता है कि मैं एक बुर्ज़िआ मनोवृत्ति का आदमी हूँ और मेरे लिए मानवता की धन के सम्मुख कोई कीमत नहीं है। क्यों प्रबोध ! मैंने ठीक जाना है न ?"

प्रबोध ने साहस कर कहा, "ठीक-ठीक ऐसा तो नहीं। हाँ यह तो बात स्पष्ट ही है कि आपने रुपये बचाने का प्रबन्ध तो कर लिया, परन्तु उन मनुष्यों का, जो इस कारखाने में काम काम कर रहे हैं और उनके बाल-बच्चों का कुछ भी विचार नहीं किया।"

"पहले तो मैंने तुम्हारा विचार किया है। यह बताओ कि तुमने सत्तर-अस्सी हज़ार रुपये को खतरे में डाला हुआ है अथवा नहीं ? तुम इस काम के अयोग्य हो अथवा नहीं ? देखो यह मेरा विश्वास है कि वे लोग, जो सागर में तैरना नहीं जानते, सागर में तैरने वालो को गालियाँ देते रहते हैं। जो स्वतन्त्र कार्य करना नहीं जानते, वे नौकरी पाने के लिए यत्नशील रहते हैं। जिनको व्यक्ति अर्थात् मनुष्य की श्रेष्ठता पर विश्वास नहीं होता, वे समाजवाद का आश्रय लेकर व्यक्ति की स्वतन्त्रता का ही नाश कर देना चाहते हैं। इस सब का परिणाम यह हो जावेगा कि समुद्र तो सूखेगा नहीं, परन्तु सागर में न तैरने वाले रत्नों से वंचित रह जायँगे। स्वतन्त्र कार्य तो चलेंगे, परन्तु नौकरी पाने की इच्छा वालों को दासता मिल जायेगी। इसी प्रकार मानवता डूबेगी नहीं परन्तु समाजवाद का आश्रय लेने वाले स्वय पतित हो जावेंगे।"

८

अगले दिन कारखाने के बाहर एक विज्ञापन लगा हुआ मिला। कर्मचारी, जो वहाँ धरना देने आये थे, उस विज्ञापन को पढकर चकित रह गये। विज्ञापन में लिखा था, "यह कारखाना हानि पर जा रहा था। इस कारण यह बेचा जा रहा है। सब कर्मचारियों को यह सूचित किया जाता है कि वे कारखाने के मालिक श्री प्रबोध चन्द्र से मिलकर अपना-अपना हिसाब कर लें।"

सूचना यूनियन के प्रधान के पास भेजी गई और वह भागा हुआ वहाँ चला आया। प्रबोध वहाँ पर नहीं था। कारखाने को ताला लगा था। यूनियन के प्रधान ने सब कर्मचारियो को वहीं कारखाने के बाहर एकत्रित कर मीटिंग कर ली। प्रभुदयाल इस प्रकार की किसी कार्यवाई की आशा करता था और वह प्रातःकाल से ही डिप्टी कमिश्नर से मिलकर कारखाने की रक्षा के लिए पुलिस की नियुक्ति के लिए यत्न कर रहा था। जब कर्मचारी कारखाने के बाहर मीटिंग कर रहे थे, एक दस्ता पुलिस के आदमियो का वहाँ आकर खडा हो गया। पहले तो कर्मचारी घबराये और भयभीत हो भागने के लिए तैयार हो गये, परन्तु पुलिस वालो से पूछने पर उनको कुछ सन्तोष हुआ। पुलिस वालो में बन्दूकची भी थे। उनका खर्चा प्रभुदयाल को देना पडा था।

आज प्रबोध को कोई काम नहीं था। वह कुछ काल के लिए पिता जी की बैठक पर रहा, पश्चात् वह नीला के चिकित्सालय में आ गया। प्रभुदयाल भी पुलिस को कारखाने पर बैटा कर, वहीं आ गया। नीला ने अपने नौकर को भेजकर पता किया कि कारखाने के बाहर क्या हो रहा है। वह आया और उसने बताया कि मीटिंग मे प्रबोध बाबू और नीलादेवी जी को गालियाँ दी जा रही हैं।

प्रभुदयाल ने एक नोटिस कर्मचारियों के नाम लिखाया और प्रबोध को उसकी बहुत-सी कापियाँ छपवाने के लिए कहकर बताया कि उन पर हस्ताक्षर कर सब कर्मचारियो को भेज दे।

नोटिस इस प्रकार था, "मैंने कारखाने को एक कौन्सिल के अधीन कर रखा था। उस कौन्सिल ने प्रबन्ध इतना खराब किया है कि कारखाने मे लाभ तो दूर रहा, भारी हानि हुई है। इस कारण कारखाना बन्द करना पडा है। मेरे बार-बार समझाने पर भी आपने हडताल जारी रखी थी। इस हड़ताल के कारण तो यह कारखाना और भी बोझे के नीचे दब गया है। इस कारण मैं आपको यह बताते हुए दुःख अनुभव करता हूँ कि कारखाना अब आगे नहीं चल सकता और आपके अब

पुन. इस कारखाने में काम पाने की मै कोई आशा नहीं दिला सकता। आप कल के बाद किसी भी दिन दोपहर के बारह बजे से लेकर तीन बजे तक और सायकाल आठ बजे से दस बजे तक नीला देवी के चिकित्सालय में आकर अपना वेतन ले जावें। यदि आपको, जो वहाँ से दिया जायेगा, ठीक प्रतीत न हो, तो आप कानूनी-चाराजोई कर सकते है।"

ये नोटिस छपवा कर बाँट दिये गए और कर्मचारियों के पतों पर रजिस्ट्री कराकर भेज दिये गए। नोटिस मिलने पर तो कर्मचारियों में भारी गड़बड़ मची और यूनियन के कार्यालय में कारखाने को आग लगा देने का षड्यन्त्र होने लगा।

इसके अगले दिन शिशिर कुमार ने पुन कर्मचारियों की एक बैठक कारखाने के बाहर बुलाई और वहाँ उसने नारे लगवा-लगवाकर उनमें इतना जोश भर दिया कि वे पुलिस का घेरा तोड़कर कारखाने में घुस गए। उन्होंने कारखाने का ताला तोड़ दिया और सामान की तोड़ फोड़ आरम्भ कर दी। इस समय पुलिस ने गोली चला दी, जिससे तीन तो वहीं मौत के घाट उतर गए और एक दर्जन के लगभग घायल हो गए। पाँच कर्मचारी पुलिस ने पकड़ लिए और शेष भाग गए।

जब कारखाने के बाहर गोली चल रही थी, प्रबोध, नीला और प्रभुदयाल भविष्य की योजना बना रहे थे। यह निश्चय हो गया था कि कारखाना प्रभुदयाल के एक सम्बन्धी, जो दिल्ली में एक मोटर का कारखाना रखते थे, खरीद लेंगे और वे अपने यहाँ से एक मैनेजर भेजकर इसका प्रबन्ध ठीक रूप में करा देंगे। वास्तव में खरीददार तो नाम-मात्र का ही था और नया प्रबन्ध का बहाना-मात्र था। यह योजना बन जाने के पश्चात् उस सम्बन्धी को तार द्वारा लखनऊ बुला लिया गया।

इस समय कारखाने के बाहर गोली चलने और तीन कर्मचारियों के मर जाने का समाचार मिला। इस समाचार का प्रभाव प्रभुदयाल पर तो कुछ नहीं हुआ, नीला इससे गम्भीर हो गई, परन्तु प्रबोध ने कह दिया, "यह तो बहुत बुरी बात हुई है। मैं समझता हूँ कि अब भी कोई

समझौता हो जाये तो ठीक है।"

"अब लौटने को कोई स्थान नहीं रहा।" प्रभुदयाल ने कह दिया।

नीला कुछ और ही विचार कर रही थी। उसने कहा, "यह तो ठीक है कि गोली चलनी ठीक नहीं हुई। हमको इसका भारी शोक होना ही चाहिए। परन्तु जो वास्तविक अपराधी हैं, वे तो बच गए हैं। यूनियन का प्रधान सबसे बड़ा अपराधी है और वह बच गया है।"

प्रभुदयाल वहाँ से कचहरी चला गया। उसको एक मुकद्दमे में हाजिर होना था। नीला अपने चिकित्सालय में काम समाप्त कर घर जाने वाली थी कि सुशील और शिशिर कुमार आ गये। नीला इन दोनों को आते देख चकित रह गई। उसने सुशील को कभी भी पहले कम्युनिस्टों के पक्ष में कहते नहीं सुना था। आज वह उसको देखकर बहुत ही हैरान हुई। उसने पूछा, "सुनाइये सुशील बाबू! कैसे आना हुआ है?"

"ये मेरे मित्र हैं।" उसने शिशिर कुमार की ओर संकेत कर कहा, "जब प्रबोध के कारखाने के बाहर बहुत लोग घायल हो गए तो यह मुझको मरहम पट्टी करने के लिए ले गए। इनके कार्यालय में जाकर पता चला कि वे कहाँ और क्यों घायल हुए हैं? इस पर मैंने इनसे कहा कि प्रबोध और आपसे मेरी जान-पहचान है और मैं इसमें आपकी सुलह करवा सकता हूँ।"

"मुझको भारी खेद है कि आप बहुत देरी से आये हैं। हमने कारखाना बेचने का निश्चय कर लिया है। एक ग्राहक भी मिल गया है। मेरा विचार है कि एक दो दिन में लिखा-पढ़ी हो जावेगी। अब हम कुछ नहीं कर सकते।"

सुशील ने कहा, "शिशिर बाबू का विचार है कि यह बिक्री दिखावे की ही है। वास्तव में यह कारखाने के कर्मचारियों को नौकरी से पृथक् करने के लिए बहाना-मात्र है।"

"मैं इस विषय में कुछ कहना नहीं चाहती। इस पर भी यह माना जा सकता है कि शिशिर बाबू बिलकुल गलत नहीं हैं। जब कर्मचारियों की

प्रवन्ध-कौंसिल ने अनुचित ढग से कारखाने को लूटना आरम्भ कर दिया था, तो उनको भी, जिनका रुपया इसमें लगा हुआ है, अपने रुपये की रक्षा के लिए प्रत्येक उपाय प्रयोग मे लाने का अधिकार होना चाहिए।"

शिशिर कुमार ने अपने अनुमान की पुष्टि पाकर उत्साहित हो पूछा, "प्रवन्धकारिणी कौंसिल ने कौन अनुचित वात की है ? क्या आप उसका कोई उदाहरण दे सकती हैं ?"

"एक नहीं बीसियों हैं। मैं पिछली रात ही आपकी इस कौंसिल की कार्यवाई पढ रही थी। बीसियों स्थानों पर प्रवोध जी ने किसी कर्मचारी के विना छुट्टी के चले जाने अथवा काम समय पर समाप्त न करने और अन्य इसी प्रकार की शिकायतें की हैं और कौंसिल ने उनको क्षमा कर दिया है। कई स्थानों पर तो उनको बिना सूचना देने के छुट्टी करने का वेतन भी दिया है।

"पिताजी ने कारखाने की 'वर्क बुक' और कौन्सिल की कार्यवाई की रिपोर्ट एक ऑडिटर को दे दी है। वे कौन्सिल की अनियमित बातों की सूची बनवाना चाहते हैं, जिससे उन कर्मचारियों की अनियमित बातों को वह कोर्ट में उपस्थित कर सकें, यदि वे मुकद्दमा करने का साहस करें।"

सुशील विस्मय में पूछने लगा, "तो प्रबोध जी ने इस कौन्सिल को तोड़ क्यों नहीं दिया ?"

"इसका ठीक-ठीक उत्तर तो वे ही दे सकते हैं। मेरा अनुमान है कि वे सहचारिता के भाव (Idea of Cooperation) के सम्मोहन में थे और मोहित व्यक्ति की भाँति वे उचित अनुचित, वर्तमान भविष्य, और अधिकारी-अनाधिकारी में भेद-भाव नहीं कर सके।"

"मैंने स्त्रियों को पुरुषों पर और पुरुषों को स्त्रियों पर मोहित होते तो सुना है, परन्तु विचारधाराओं के सम्मोहन की बात तो आपसे ही सुन रहा हूँ।" सुशील ने मुस्कराते हुए कहा।

"इसका कारण यह है कि आप मेडिकल कॉलेज में पढते हुए बाहरी ससार से आँखें मूँदे हुए जीवन व्यतीत करते रहे हैं। आपने इतिहास

और समाज विज्ञान की ओर कभी ध्यान नहीं दिया। तभी तो आपको विचारों के सम्मोहन के विषय में ज्ञान नहीं है।

"देखिये, मैं आपको बताती हूँ, संसार में जितने भी इज्म हैं, वे और इनका चलना केवल-मात्र भाव तथा भावनाओं के सम्मोहन के उदाहरण ही हैं। एक बंगाली किसी बंगाली की अनुचित रूप में सहायता करता है, एक मुसलमान किसी बुरे-से-बुरे मुसलमान को अच्छे-से-अच्छे हिन्दू से श्रेष्ठ मानता है, एक मजदूर मजदूर की हिमायत करता है और एक पैसे वाला पैसे वाले की। यह सब क्या है? एक प्रकार से विचारों का सम्मोहन ही तो है।

"जैसे किसी स्त्री के सम्मोहन में फँसा हुआ व्यक्ति उस स्त्री के दुर्गुणों को सुगमता से समझ नहीं सकता, उसी प्रकार एक कम्युनिस्ट विचारों के सम्मोहन में फँसा व्यक्ति इस विचार-धारा के न्याय-अन्याय को समझ नहीं सकता।

"मुझको तो यही अवस्था प्रबोध जी की प्रतीत हुई है।"

सुशील कुमार को नीला के कहने में युक्ति और प्रभाव का अनुभव पहले भी कई बार हो चुका था। वह जानता था कि वह अनर्गल बात कभी भी नहीं करती। इस कारण इस अवस्था का विश्लेषण सुन चुप हो गया। उसको प्रबोध के कारखाने में असफलता का कारण ठीक ही प्रतीत हुआ।

शिशिर कुमार ने आज पहली बार नीला की युक्ति को सुना था और वह उससे अत्यन्त प्रभावित हुआ था। वह प्रबोध के कारखाने में हड़ताल के पूर्ण इतिहास को मन में विचार करने लगा और उसको कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि वह स्वयं भी एक सुन्दरी के सम्मोहन में फँस जाने की भाँति अपने को कम्यूनिस्ट विचार-धारा में फँसा हुआ पाता था। इस सम्मोहन मे वह इस हड़ताल के औचित्य-अनौचित्य का ध्यान किये बिना, इसमें फँसा हुआ था।

६

हरभजन सिह से लीलावती अन्तिम निर्णय करने आई थी। परन्तु हरभजन सिंह अभी भी किसी निर्णय पर नहीं पहुँचा था। लीलावती स्वय तो सब प्रकार से विवाहने योग्य ही प्रतीत होती थी, परन्तु वह नीला की बात को स्मरण कर रुक जाता था। नीला का कहना था कि विवाह से केवल लड़के और लड़की का ही सम्बन्ध नहीं होता, प्रत्युत एक परिवार का दूसरे परिवार से भी सम्बन्ध बन जाता है। वह यह विचार करता था कि लीलावती के माता-पिता उसके केश कटवाने से रुष्ट होकर चले गए थे। इससे उनके विचारों का सकुचित-पन प्रकट होता था। उसको भय था कि कहीं उनके परिवार से सम्बन्ध के कारण उसका जीवन दुःखमय न हो जाये।

परिणाम यह हुआ था कि लीलावती को उस दिन भी बिना अन्तिम बात जाने लखनऊ से जाना पड़ा। माधुरी भी उसी दिन हरभजन सिंह से मिली थी। तदनन्तर वह नीला के सम्मुख उससे फिर मिल सकी। जब वह अपने विवाह की बात करने लगी तो नीला उनको, परस्पर कुछ निर्णय पर पहुँचने का अवसर देने के लिए अकेला छोड़ रोगी देखने चली गई।

इससे माधुरी झेंप गई। उसने हरभजन सिह से कहा भी, "मैं आज अपने विषय में बात नीला भाभी के सम्मुख करने आई थी, परन्तु वह तो भाग गई हैं।"

"मैं समझता हूँ कि उसने ठीक ही किया है। विवाह के विषय में उससे अधिक हमारी अपनी अनुमति होनी चाहिए।"

"देखिये, एक समय आपने स्वय मुझसे इस विषय में कुछ कहा था। आपको स्मरण है क्या ?"

"हाँ, है। जहाँ तक मुझको स्मरण है मैंने कहा था कि मैं आपसे विवाह करने के विषय में विचार कर रहा हूँ। मैं चाहता था कि तुम भी इस विषय पर विचार कर लो, जिससे हम दोनों समय आने पर ठीक

प्रकार निर्णय कर सकें।"

"मैं समझती हूँ कि हमको इस विषय पर एक निर्णय पर पहुँच जाना चाहिए।"

"बहुत जल्दी है क्या?"

"इस जीवन का क्या भरोसा हो सकता है? विचार बदलते रहते हैं। यह नौका किधर जा लगे, कौन कह सकता है?"

"किसके जीवन का भरोसा नहीं? किसके विचार बदल रहे हैं और किसकी नौका किधर लगने की सम्भावना है?"

"मेरी, आपकी और किसी की भी। मनुष्य स्थिरता चाहता है। जब तक इसको एक आधार न मिल जाये यह पारे की बून्द की भांति किसी ओर भी फिसल सकता है।"

"तो इसका अभिप्राय यह कि तुमको अब विवाह कर लेना चाहिए।"

"इसी प्रकार समझ लीजिये। पर मैं तो आज आपके विषय मे जानने आई हूँ।"

"यदि मैं यह कह दूँ कि मेरा विवाह अभी नहीं होगा तो क्या करोगी?"

"संसार की अनेकों लडकियों की भांति, जो चाँद पकड़ने के लिए लालायित रहती हैं और पकड़ नहीं पातीं, मैं भी हो जाऊँगी।"

"वे लडकियाँ, जो चाँद पकड़ने में असफल हो जाती हैं, फिर क्या करती हैं?"

"यह मैं तब उनसे पता करूँगी। अभी तक तो मुझको आशा बनी हुई है।"

हरभजन सिंह कुछ काल तक विचार करता रहा। इसके पश्चात् कुछ रोगी मरहम-पट्टी करवाने वाले आए और वह काम में व्यस्त रहा। पाँच-छः रुपये कमाकर वह माधुरी के पास आकर बैठा तो तीन बीमा करने के केस आ गये। वह उनकी परीक्षा में लग गया। जब वह उनसे भी निपट चुका तो माधुरी, जो इस सब समय वहाँ बैठी रही थी, अपनी बात का

उत्तर पाने के लिए पुन. कहने लगी, "मैं अब अपना भावी प्रोग्राम बनाना चाहती हूँ। भैया ने कारखाने में प्रबन्ध न कर सकने से पिता जी को भारी हानि पहुँचाई है। यदि मैं भी उसी प्रकार बिना विचार किए उड़ते तारों को पकड़ने में उनकी सञ्चित सम्पत्ति को व्यर्थ गँवानी आरम्भ कर दूँ तो भारी पाप हो जावेगा। यदि मेरा विवाह अभी नहीं होना तो मैं ऑक्सफोर्ड जाना चाहती हूँ और वहाँ पी० एच० डी० की तैयारी में लग जाना चाहती हूँ।"

"पर तुम अभी कुछ काल तक प्रतीक्षा नहीं कर सकतीं?"

"प्रतीक्षा तो कर सकती हूँ, परन्तु वह प्रतीक्षा कार्य करने में होगी न कि कार्य का निर्णय करने में। अनिश्चित् बुद्धि वाले व्यक्तियों का परिणाम वही होता है, जो प्रबोध भैया का हुआ है।"

"क्या किया है प्रबोध भैया ने?"

"हड़ताल एक मास से चल रही थी और वे किसी निर्णय पर पहुँच नहीं सके थे। परसों नीला भाभी ने कारखाने की दुर्व्यवस्था देखी और उसके सुधारने का निश्चय एक ही दिन में कर अपनी योजना भी बना डाली है। मैं आपको बताती हूँ कि कारखाने के कर्मचारी अभी से होश सम्भालने लगे हैं।"

"तो इससे क्या सिद्ध हुआ?"

"इससे यह सिद्ध हुआ है कि मैं आपसे विवाह करना चाहती हूँ, परन्तु आप कुछ निर्णय करते ही नहीं। इस विषय पर बातचीत करते हुए एक वर्ष हो चला है। यदि आप किसी निर्णय पर पहुँचने में इतना समय लगा सकते हैं, तो फिर जीवन-कार्य कैसे चलायेंगे? इस छोटे से जीवन को इस अनिश्चितपन में ही व्यतीत कर देना कुछ अच्छी बात प्रतीत नहीं होती।"

"देखो माधुरी! मेरे अनिश्चितपन में कारण है और वह मैं तुमको बता देना चाहता हूँ। तुम, तीन दिन हुए, मध्याह्न पूर्व यहाँ बैठी थीं, तो एक लड़की मुझसे मिलने आई थी, जो उसी दिन पंजाब मेल से

चली गई थ। वह भी मुझसे विवाह करना चाहती है। वह भी उस दिन निर्णयात्मक बात करने आई थी।

"अभी तक मैं तुम दोनों मे तुलना कर रहा था और किसी निर्णय तक पहुँचने की कठिनाई अनुभव कर रहा था। मैंने तुम दोनों के गुण-अवगुण जानने में ही इतना समय लगाया है।

"मुझको तुम सर्वथा शीतल, सुहृदय, गम्भीर, दृढ-संकल्प, माता-पिता की आज्ञाकारिणी और बुद्धिशील दिखाई दी हो। इसके विपरीत वह लड़की हँसोड मुख, बच्चों की भाति खेलती-कूदती, कुसुम की भाँति प्रफुल्ल वदन, मन के आवेश मे आकर काम करने वाली और माता-पिता से बागी प्रतीत हुई है। मैं मन से चाहता था कि ये दोनो प्रकार के गुण एक में आ जावे। मैं पढा-लिखा होने से गम्भीर और बुद्धिशील पत्नी पसन्द करता हूँ, परन्तु इस धरती पर चलता हुआ फूलों से खेलना भी पसन्द करता हूँ। मेरे सामने कठिनाई है कि मैं कोई ऐसी लड़की नहीं पा सका, जिसमें दोनो प्रकार के गुण विद्यमान हो।"

"तो फिर उसको क्या कहा है आपने ?"

"उसके हँसी के फव्वारों को सुन मैं कहने ही वाला था कि मैं उससे विवाह करूँगा, परन्तु ठीक उसी समय वह बोल उठी, 'मुझको बिना माता-पिता की अनुमति के विवाह करने पर बडा मजा आयेगा।'

"मैं हा कहता-कहता रुक गया। मेरे मन में आया कि कभी मेरी आज्ञा भग करने मे भी उसको मजा आ सकता है। तब मेरी क्या अवस्था होगी।

"इस विचार के आते ही मैंने उसको कह दिया, 'लीला ! मैं तुमको दो-तीन दिन में पत्र लिखूँगा और समझता हूँ कि अब तुमको इस कार्य के लिए लखनऊ आना नहीं पडेगा।'

"इतना कह मे उसको गाड़ी पर चढाकर विदा कर आया।"

इस पर माधुरी ने कहा, "यदि आप नाराज न हो तो एक बात कहूँ ?"

"कहो ।"

"आप उससे—क्या नाम है उसका ? उससे विवाह कर लीजिये । किसी लडकी को इस प्रकार वर्षों तक टाल मटोल करते रहना ठीक नहीं ।"

"वह तो मैं तुमसे भी कर रहा हूँ । तो तुमसे ही विवाह क्यों न कर लूँ ?"

"पर मैं कदाचित् इस प्रकार टाली नहीं जा सकूँगी, जिस प्रकार आप उसको टाल रहे हैं । मैं टाल-मटोल में कल्याण नहीं पाती ।"

हरभजन सिंह चुप कर गम्भीर हो गया । उसने कहा, "अच्छा माधुरी ! मैं कल बताऊँगा ।"

"अच्छी बात है । मैं समझती हूँ कि अब आपसे इस विषय पर और बातचीत करने नहीं आऊँगी ।"

इतना कह माधुरी उठकर नीला के चिकित्सालय में चली गई ।

१०

हरभजन सिंह को भी समझ आ रही थी कि वह दो लडकियों के जीवन से खिलवाड कर रहा है । उसने यह विचार किया कि वह आज अपने पिता से कह कर कुछ न-कुछ निर्णय कर लेगा । अमृत के घर से भाग जाने के पश्चात् वह अपने माता पिता को और दुःखी करना नहीं चाहता था ।

वह विचार करता था कि यदि वह नीला के सकेत पर सिर के बाल न कटवाता तो माधुरी उसको पसन्द नहीं करती । लीलावती तो तब भी पसन्द कर लेती । इस समय उसके मन में सशय उत्पन्न हो गया । लीला ने उसको उसके वर्तमान रूप में ही देखा था । दाढ़ी-मूँछ वाला तथा केश धारी हरभजन सिंह उसने नहीं देखा था । उसको देख वह पसन्द करती अथवा न, कहा नहीं जा सकता था ।

इससे अनिश्चित मन वह अपने पिता से इस विषय पर राय करने

का विचार कर रात होने पर घर गया। घर पर कर्तार सिंह गुरुद्वारे के विषय में बातचीत करने आया था। हरभजन सिंह उनको बातें करते देख, बाहर से ही अपने कमरे को चला गया। वह वहाँ पहुँचा ही था कि सोहनू उसके पीछे-पीछे वहाँ आकर बोला, "भैया, आज अमृत बीबी की चिट्ठी आई है।"

"कैसे जानते हो?" हरभजन सिंह ने चौंककर पूछा।

"डाकिया चिट्ठियाँ दे गया था। मैंने उसके हाथ का लिखा पता एक लिफाफे पर देखा है। मैं उसकी लिखावट पहचानता हूँ।"

सोहन सिंह बचपन से उनके यहाँ नौकरी करता था और वह अमृत के साथ खेलता रहा था। पहले जब वह बहुत छोटा था, उसकी माँ इनके यहाँ नौकरी करती थी। उस समय सोहन सिंह सोहन लाल था। उसकी माँ का देहान्त इनकी नौकरी मे ही हुआ था। माँ के मरने के बाद सोहन लाल को ले जाने वाला कोई नहीं आया और वह नौकर बना लिया गया। तब से वह उनके घर में था। पीछे उसने भी केश रखने ठीक समझ लिये और वह सोहन सिंह हो गया और सोहनू के नाम से बुलाया जाने लगा। इस कारण उसका कहना कि वह अमृत की लिखा-वट पहचानता है, विश्वास योग्य ही था।

जब सोहनू खाना लेने गया तो हरभजन पुनः ड्राइंग रूम की ओर चल पड़ा। वह ड्राइंग रूम के पिछले कमरे से वहाँ जाना चाहता था, परन्तु जब दोनों कमरों के भीतर के द्वार का पर्दा वह हटाने लगा तो उसको कर्तार सिंह यह कहते सुनाई दिया—

"यह सैक्युलर विचार तो कांग्रेस का एक भारी ढोंग है। इस विचार के आधार मे कांग्रेस के वे लोग, जो धर्म तथा मत-मतान्तरों के विषय मे कुछ नहीं जानते, इनकी निन्दा कर अपना प्रभुत्व स्थिर रखना चाहते हैं। यह इसी प्रकार है, जैसे किसी जटिल विषय को न समझने की योग्यता रखने वाला विद्यार्थी उस विषय को पाप कहकर सबको उसके पढ़ने से रोकना चाहे।"

वढियाम सिंह हँस पड़ा। उसने कहा, "बाबू कर्तार सिंह, तुम ठीक ही कहते हो, भला इसका क्या प्रमाण है?"

"ये असम्प्रदायवादी कांग्रेसी लोग जीवन-भर कांग्रेस के प्रभुत्व को स्थिर रखने के लिए मुसलमानों की पीठ ठोकते रहे। हमारे वर्तमान नेता-गण तो मुसलमानों को विधान से अभी भी विशेष अधिकार देने के लिए तैयार थे। अब भी तो ये लोग सिखों से प्रत्येक कीमत पर समझौता करने को तैयार हो गए हैं। यह शिक्षा इन्होंने अंग्रेजों से ली थी। ये समझते हैं कि हिन्दुओं में तो सदा एक दल ऐसा रहेगा, जो उनको सहायता देगा। एक स्वतन्त्र विचार के समाज में से एक भाग अपने पक्ष मे कर लेना सहज ही है। इस कारण अपना बहुमत रखने के लिए हिन्दू-विरोधी दल को कुछ ले-देकर अपनी ओर रखने से अपना बहुमत रह सकेगा। यही कारण था कि ये लोग हिन्दू हितों का बलिदान कर मुसलमानों को प्रसन्न करने का यत्न करते रहे थे। सबसे पहले इस नीति की सफलता का अनुभव महात्मा गांधी ने कलकत्ता के विशेष अधिवेशन में, जो सन् १६२० में हुआ था, किया था। महात्मा जी खिलाफत को कांग्रेस के प्रस्ताव में एक विषय रखने के लिए हठ कर रहे थे। देश के प्रायः नेता इस विषय को एक राजनीतिक संस्था के प्रस्ताव में लाना नहीं चाहते थे। महात्माजी ने मुसलमान डेलिगेटों की सहायता से देश के तमाम नेताओं को परास्त कर दिया था। अपनी अनेक अयुक्तिसंगत बातों को महात्मा जी मुसलमानों की सहायता से सफल बनाते रहे और हिन्दुओं के एक प्रबल समूह को नतमस्तक करते रहे। इसी नीति को चलाते हुए कांग्रेस को देश-विभाजन स्वीकार करना पड़ा।

"महात्मा जी की यह नीति कि हिन्दुओं में विरोधी पक्ष को अपने अधीन रखने के लिए किसी अल्पमत वालों को कुछ ले देकर अपने साथ मिला अपना प्रभुत्व स्थिर रखना, अभी तक जारी है।

"ऐसी परिस्थिति में यदि सिख कांग्रेस की इस दुर्बलता से लाभ न उठायें तो महामूर्ख माने जावेंगे।

"पंजाब में हिन्दू बहुमत में है। हिन्दुओं का एक प्रबल विभाग कांग्रेस के पक्ष मे है। हमारा काम तो तब ही चल सकता है, जब हम सत्ताधारी दल के साथ समझौता कर लें। यह हमारा सौभाग्य है कि कांग्रेस अभी तक महात्मा गांधी जी की इस दुर्बल नीति का अनुकरण कर रही है। हमको इससे लाभ उठाना चाहिए।"

"हमको इससे क्या लाभ होगा?"

इस समय हरभजन सिंह अपने को दरवाजे पर खड़ा नहीं रख सका। वह भीतर चला आया और दोनों वृद्धजनों को सत श्री अकाल बुलाकर उनके सामने बैठ गया। उसने अपने पिता जी से पूछा, "क्या वाद-विवाद चल रहा है?"

वढियाम सिंह ने बताया, "ये कहते थे कि कल गुरुद्वारा फण्ड में से पाँच हजार रुपया अकाली दल की सहायता के लिए पास कर दिया जाये। मेरा कहना था कि गुरुद्वारे का रुपया किसी राजनीतिक कार्य के लिए नहीं देना चाहिए। इस पर आपने कहा है कि राजनीति और धर्म दो पृथक्-पृथक् बातें नहीं है। मैने कहा कि भारत में राज्य धर्म-निरपेक्ष (Secular) है। इस पर आपने कहा कि यह बात ढोंग है। यह सैक्युलर-वाद कांग्रेस के लोगों ने सरल चित्त हिन्दुओं को धोखे में रखने के लिए एक पर्दा बनाया हुआ है। वास्तव में यह कांग्रेस केवल अपने प्रभुत्व को स्थापित रखने के लिए प्रबल मत-मतान्तरो से सदैव समझौता करने को उद्यत रहती है।"

"यह तो मैंने सुन लिया है। तो आप कल रुपया देने के पक्ष मे अपनी सम्मति देने जा रहे हैं क्या?"

"मैंने अभी निर्णय नहीं किया। मैं विचार करता हूँ कि यदि यह सत्य है कि कांग्रेस और उससे बनी यह सरकार अल्पमत वालों को कुछ दे-लेकर अपने पक्ष में करने का स्वभाव रखती है, तो क्यो न सिख इससे लाभ उठावें?"

"इस कारण पिता जी! कि यह पाप है। जहाँ सरल-चित्त लोगों को

धोखा देने वाली कांग्रेस दोषी है, वहाँ इस कार्य म कांग्रेस को सहायता देने वाली सस्थाएँ भी दोषी हैं। क्या कांग्रेस सिखों का बहुमत इस कारण बनाने जा रही है कि वह अपना प्रभुत्व स्थिर रख सके? यह तो देश के साथ द्रोह होगा। किसी एक मतवालों का, राज्यों को काट छाँटकर, अन्याय से बहुमत बनाना किसी प्रकार भी क्षम्य नहीं।"

"तो क्या करें?" सरदार कर्तार सिह ने पूछा, "गुरुद्वारे का धन फिर किस काम आवेगा?"

"गुरु महाराज के धर्म-प्रचार के लिए।"

"उसी के करने के लिए तो सिख बहुमत वाला राज्य बनाने का यत्न किया जा रहा है।"

"अर्थात् आप बहुमत प्राप्त कर सत्ता को हथिया कर सिख धर्म का प्रचार करेंगे?"

"क्या हानि है इसमें? आज भारत में बौद्ध सम्प्रदाय और महाराज अशोक-वर्धन की भूरि-भूरि प्रशसा की जा रही है। क्या अशोक ने राजनीति के बल पर बौद्ध-सम्प्रदाय का प्रचार नहीं किया था? हम करेंगे तो कौन पाप करेंगे?"

"परन्तु जानते हैं कि महाराज अशोक की इस नीति का क्या परिणाम हुआ था? महाराज अशोक के जीवन-काल में ही देश में विघटन आरम्भ हो गया था और उसकी मृत्यु के कुछ ही समय पश्चात् विदेशों से आक्रमणकारी यहाँ आने आरम्भ हो गये थे और उनके आक्रमण सफल होने लगे थे।"

"वह जो होगा सो देख लेंगे। अब तो समस्या यह है कि कांग्रेस सिखों को पजाब में बहुमत दे रही है। वह बहुमत प्राप्त कर क्या हम लाभ न उठायें?

"धर्म क्या है, एक प्रकार के विचारों का समूह ही तो है। आज ससार भर मे राज्य सत्ता को, विचार-प्रचार का साधन बनाया जा रहा है। वे विचार कहीं कुछ हैं और कहीं कुछ। वास्तविक बात तो यह है

कि विचार-विस्तार के लिए राज्य-सत्ता सब स्थान पर प्रयोग की जा रही है। रूस क्या कर रहा है और क्या अमेरिका इससे अछूता है ?

"हमारी सरकार एक प्रकार की आर्थिक विचार-धारा को राजनीतिक सत्ता प्राप्त कर आगे चला रही है। 'सोशियलिस्टिक पैटर्न ऑफ सोसायटी' पिछले निर्वाचनों मे हमारे सामने नहीं था। जब राज्य-सत्ता वर्तमान नेताओं के हाथ मे आ गई तो इन्होने यह नया पद गढ कर अपने विचारों को चलाने का यत्न किया है। अब फिर निर्वाचन होने वाले हैं और पुन. पचवर्षीय योजना का बहाना लेकर निर्वाचन लडे जायेंगे और सफल होने पर सोशियलाइजेशन आगे चलाया जायेगा।

"उद्देश्य पच-वर्षीय योजना नहीं। इसको तो जो भी दल राज्य बनायेगा, चलायेगा। परन्तु असल बात है सोशियलाइजेशन की। वह गौन रखकर निर्वाचन लडे जायेंगे। यदि काग्रेस अपने आर्थिक प्रपञ्च को चलाने के लिए राज्य-सत्ता का प्रयोग कर सकती है, तो हम अपने धार्मिक विचारों के प्रचार के लिए राजनीति को क्यों प्रयोग मे नहीं ला सकते ?"

वढियाम सिह ने वाद-विवाद को बन्द करने के विचार से कह दिया, "मैं अभी अपने मन मे विचार करना चाहता हूँ कि गुरुद्वारे का धन एक राजनीतिक सस्था को दूँ अथवा न। जैसा मन चाहेगा, वैसा ही मत कल दूँगा।"

इस पर कर्तार सिंह ने कहा, "सरदार वढ़ियाम सिह ! रुपया तो मजूर हो जावेगा। बात केवल यह है कि आप बदनाम होना चाहते हैं या नहीं। यदि आप रुपया देने के पक्ष में राय देंगे तो सब शोभा आपको ही मिलने वाली है।"

यह कह कर्तार सिह विदा माग चला गया।

· ११ ·

जब कर्तार सिह चला गया तो हरभजन ने पिता से पूछा, "भापा जी!

अमृत की चिट्ठी आई है क्या ?"

"किसने कहा है तुमको ?"

"तो आई है न ?"

"हाँ, पर मैंने तो किसी को बताया नहीं। तुम्हारी माँ को भी नहीं। तुमको किसने कहा है कि उसने पत्र लिखा है।"

"सोहनू ने कहा है कि उसने एक लिफाफे पर अमृत की लिखावट में पता लिखा देखा है।"

"सोहनू ने ? यह बहुत ही चालाक हो गया है। मैं तो खत पहचान नहीं सका था।"

"उसको अमृत के खत की पहचान होगी।"

बढियाराम सिंह ने जेब में से खत निकाल कर हरभजन को दिखा दिया। उसने उसमें लिखा था, "पूज्य भापा जी ! मैं आज बालिग हो गई हूँ और अब मैं अपना विवाह अपनी इच्छा से कर सकती हूँ।

"आज से तीन मास पहिले जब आप मेरा एक 'इन्सपैक्टर ऑफ स्कूल्स' से विवाह करने वाले थे, मैं बालिग नहीं थी। उस समय मैं कानून से बे-अक्ल थी और अपने विषय में किसी प्रकार की सम्मति रखने के अयोग्य थी। इन तीन महीनों मे मेरे में अक्ल आ गई है।

"अतएव अब मैं अपनी बुद्धि से विचार की हुई बात करती हूँ। मैं कलकत्ता में एक मित्र की माता के साथ रहती हूँ। इतने दिनों तक छुप कर रहने का कारण तो आप समझ ही गये होंगे। अब मैं कहती हूँ कि जिस किसी को विवाह करना हो, उसको मेरे से बात कर निर्णय करना चाहिये। इस स्वतन्त्रता के युग में मैं अपनी स्वतन्त्रता का प्रयोग करना चाहती हूँ।

'मेरे इस विचार को जानकर यदि आप मेरा घर से चले जाने का अपराध क्षमा कर दें और मुझको स्वतन्त्रता के उपभोग की स्वीकृति दें तो मुझको घर लौट आने में अति प्रसन्नता होगी।

"मैं पता नहीं लिख रही। यदि आपको मेरा आपके घर लौट आना

रुचिकर हो तो मैं पता कर आ जाऊँगी। इस अवस्था मे आप मेरे पत्र को चोरी न रखकर अपने मित्रो और सम्बन्धियों को दिखा दे। मुझको उनमें से किसी के द्वारा पता चल जायेगा और मै लौट आऊँगी।

आपकी स्नेह-पात्री अमृत।"

हरभजन सिंह ने पत्र पढा और वापस लौटा दिया। बढियाम सिंह ने हरभजन सिंह की ओर देखते हुए पूछा, "कौन हो सकता है, जिसने हमारी अमृत को छुपा रखा है?"

"आपको किस पर सन्देह है?"

"मुझको तो तुम पर सन्देह है।"

"मैं उसका पता नहीं जानता। मुझको सन्देह था कि वह मेरे मित्र सुशील कुमार की जानकारी में छुपी हुई है। एक समय सुशील उससे विवाह करना चाहता था, परन्तु अमृत के घर जाने के पूर्व ही उसका विचार बदल चुका था। अब सुशील की सगाई बाबू मनमोहन सरकार की लड़की से निश्चित हो चुकी है। घर मे विवाह की तैयारी भी आरम्भ हो चुकी है। सुशील को तो अमृत के विषय मे विचार करने का अवसर भी नहीं। मैंने कई मित्रो द्वारा उससे पता करने का यत्न किया है और सबका यही विश्वास है कि वह सुशील की जानकारी में नहीं है।"

"तुमसे उतर कर मुझको सन्देह है तुम्हारे मामा पर। उसका साला कलकत्ता मे रहता है।"

"हो सकता है। तब तो बात सरल है। उसको बुलाकर अपने विचार बता दीजिये। यदि आपने अमृत को क्षमा कर दिया है तो उसको पता चल जायेगा।"

"तो तुम्हारा विचार है कि यह धूर्तता विष्णु की ही है?"

"मैं कुछ नहीं कह सकता। यह भी अभी नहीं कह सकता कि यह धूर्तता है अथवा सज्जनता?"

"कब कह सकोगे?"

"जब अमृत आ जायेगी और पता चल जायगा कि वह तीन मास मे

छुप कर कहाँ रही है और अब वह विवाह के विषय में क्या विचार रखती है।"

"मुझको डर है कि वह जहाँ गई है, वहाँ विवाह के विचार से गई थी, परन्तु वहाँ से निराश हो और धोखा खाकर लौट रही है। विष्णु के साला का लड़का कलकत्ते में किसी अच्छे काम पर लगा हुआ है। वहाँ उसकी पटी नहीं। इस कारण अब लौटने का बहाना ढूँढने लगी है।"

"तब भी आपको अपनी लड़की को आश्रय देकर उभारने में लाभ ही है। उसको वापस आने दीजिये और उसके विवाह का कहीं न-कहीं प्रबन्ध हो जावेगा।"

वढियाम सिंह ने कुछ काल तक विचार कर कहा, "तो तुम जाओ और अपने मामा से कहो कि अमृत को बुला दे। हम उसकी इच्छा का आदर करेंगे।"

हरभजन सिंह ने भोजन किया और मोटर पर सवार हो अपने मामा के घर चला गया। विष्णु सहाय इतनी रात गए हरभजन सिंह को आया देख, विस्मय में पड़ गया। हरभजन ने अमृत की चिट्ठी, जो वह अपने साथ ले आया था, मामा को दिखाई। उसने चिट्ठी पढकर हरभजन सिंह को वापिस कर दी और उसके मुख पर देखता रहा।

हरभजन ने कहा, "पिता जी ने कहा कि यदि आपको उसका पता है, तो आप उसको कह दीजिये कि वह आ जाये और उसकी इच्छा का आदर किया जायेगा।"

"तुम्हारे पिता का यह निश्चय यद्यपि देरी से हुआ है, तो भी बहुत ठीक है। इस पर भी मैं तुमको विश्वास दिलाता हूँ कि वह मेरी जानकारी में नहीं है। मेरा साला परमानन्द वहाँ रहता है जरूर, परन्तु मैं उसको वहाँ रखने के स्थान अपने पास रखना अधिक ठीक समझता। वढियाम सिंह मेरे घर से उसको ज़बरदस्ती ले जा नहीं सकता था।"

"अमृत ने लिखा है कि हम अपने मित्रों और सम्बन्धियो को अपनी मन की बात कह दे और उसको पता चल जायेगा।"

"इस पर भी मेरा कहना है कि मेरे पास आती तो मैं उसको यहाँ रखकर उसकी रक्षा कर सकता था। उसको दूर भेजने की आवश्यकता नहीं थी। मेरे विचार मे उसको घर से भागना ही नहीं चाहिए था।"

निराश हरभजन सिंह वहाँ से लौट आया। वढ़ियाम सिंह उसकी प्रतीक्षा कर रहा था और जब पुत्र ने मामा की बात बताई तो उसने कहा, "तुम दोनों के अतिरिक्त और किसी पर सन्देह नहीं जाता।"

"तो फिर और किसी से अमृत के पत्र की बात बताने की आवश्यकता नहीं?"

"यह तुम ही बताओ, मैं कैसे बता सकता हूँ?"

"मेरी सम्मत्ति तो यह है कि आप कलकत्ता के समाचारपत्रों में विज्ञापन निकलवा दीजिये। वह पढ़ेगी तो आ जायेगी।"

"पहले अपने सब परिचितो को बता दो कि हमने उसको क्षमा कर दिया है। इसके एक सप्ताह तक वह न लौटी तो फिर विज्ञापन देने के विषय में विचार कर लेंगे।"

१२

हरभजन सिंह ने अमृत की चिट्ठी नीला को दिखाई और पश्चात् उन सब लोगों को इस विषय में कहा, जिन-जिन से अमृत के परिचय होने की बात उसको विदित थी। वढ़ियाम सिंह ने भी अपने परिचितों और मित्रों से अपने अमृत को क्षमा कर देने की बात कह दी। उसका कहना था, "अब वह बालिग हो गई है और उसकी इच्छा के बिना विवाह नहीं हो सकता।"

सिख समाज मे अमृत के कलकत्ता में मिल जाने से किसी प्रकार की भी प्रसन्नता नहीं हुई। इसके साथ ही स्त्री समाज में अमृत की निन्दा और भी जोरो से होने लगी। वढियाम सिंह का अनुमान कि वह जिसके

साथ भागकर गई है, उससे लड़ कर लौटने वाली है, स्त्रियों को ठीक प्रतीत हुआ ।

प्राय. स्त्रिया हँस हँस कर कहती थीं, "हाँ, हरभजन की माँ । लड़की है, अब घर में तुम नहीं रखोगी तो और कौन रखेगा ? बेचारी जायगी कहाँ ?"

सरदार कर्तार सिंह से भी वढियाम सिंह ने अमृत के कलकत्ता में मिल जाने की बात बताई। इस पर उसने पूछा, "किसके साथ भागी थी ?"

"यह तो उसने नहीं बताया । हाँ, यह लिखा है कि यदि उसको विवाह करने में स्वतन्त्रता दी जायेगी तो वह लौट आयेगी ।"

"तो वहीं उससे विवाह क्यों नहीं कर लेती, जिसके साथ भाग गई थी, यहाँ आकर हमारा मुख बिरादरी में काला करने से क्या लाभ है ?"

"पर यह कैसे कह सकते हैं कि उसने मुख काला किया ही है ? वह तो कहती है कि उसकी राय से विवाह होना चाहिए ।"

"यही तो मैं कह रहा हूँ कि अपनी इच्छा से विवाह करना है तो यहाँ आकर करने से क्या लाभ होगा ? देखिये सरदार साहब । मैं तो पहले ही कहता था कि बाल कटवाये हैं तो मुख काला भी करेगी। आखिर वह होकर ही रहा ।"

सरदार वढियाम सिंह और उसकी पत्नी जब अपने मित्रों से इस प्रकार की बातें सुनते थे तो उनके सिर और आँखें लज्जा से झुक जाती थीं और मुख का रग विवर्ण हो जाता था ।

नीला अमृत के घर से चले जाने को पसन्द नहीं करती थी । इस पर भी अब उसके पत्र आ जाने से वह इच्छा करती थी कि वह शीघ्रातिशीघ्र घर लौट आवे । अतएव उसने सब मित्रों और परिचितों से अमृत की चिट्ठी और उसके पिता के आश्वासन की बात बता दी ।

नीला कारखाने को पुन खड़ा करने में लगी हुई थी । इस कारण

नित्य रात के समय वह, प्रबोध और प्रभुदयाल बैठ जाते थे और कारखाने की भिन्न-भिन्न समस्याओं पर विचार कर निर्णय किया करते थे। एक-एक निर्णय कारखाने की रूप-रेखा को बदलता जा रहा था और इसका ज्ञान कर्मचारियों और यूनियन के अधिकारियों को हो रहा था।

कारखाने के कर्मचारियों को जब पता चला कि कारखाना बिक रहा है, तो वे बहुत बेचैनी अनुभव करने लगे। उनमें एक रामदीन था। यह पहले रेल के कारखाने में फिटर का काम करता था और रेल का काम वह वेतन के लोभ मे छोड़कर आया था। यहाँ एक वर्ष तो काम मज़े में चलता रहा, परन्तु अब हड़ताल के दिनो मे उसको दिन के समय तारे दिखाई देने लगे थे।

रामदीन के आश्रय पलने वाले सात प्राणी थे और एक महीने की हड़ताल ने उसके लिए खाने के लाले उत्पन्न कर दिये थे। जब उसके मन में यह बात बैठी कि हड़ताल का परिणाम बेकारी होने वाला है, तो वह कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यालय में जाकर शिशिर कुमार से मिला। उसने उसको स्पष्ट रूप में कह दिया कि यदि उसको दो-तीन दिन तक काम न मिला तो उसके बच्चे भूख से बिलख-बिलखकर दम तोड़ने लगेंगे।

शिशिर कुमार ने उसको समझाने का यत्न किया कि त्याग और तपस्या से एक महान् कार्य में सफलता की आशा की जा सकती है। इस पर रामदीन ने पूछा, "शिशिर बाबू! कौन-सा महान् कार्य है, जिसके लिए आप मुझको अपने बच्चों की कुर्बानी देने को कह रहे हैं?"

"मजदूर समुदाय की हकूमत लाना और सरमायादारों का खात्मा करना।"

"पर आपने तो मजदूरों की हकूमत को बरबाद कर दिया है। 'न्यू इण्डिया ऑटो-मोबाइल वर्क्स' का प्रबन्ध तो कर्मचारियों की कौन्सिल करती थी। आपने वास्तव में हड़ताल उस कौन्सिल के प्रबन्ध को तोड़ने के लिए कराई प्रतीत होती है।"

"यह सब झूठ और फरेब था।"

शिशिर कुमार ने यह कह तो दिया, परन्तु तुरन्त उसको नीला देवी की बात स्मरण हो आई। नीला ने कहा था कि विचारधाराओं के सम्मोहन में लोग उचित-अनुचित तथा न्याय-अन्याय को भूल जाते हैं। उसको समझ आया कि वह भी इसी सम्मोहन में कार्य कर रहा है। इससे उसने अपने कथन का सशोधन कर दिया। उसने कहा, "रामदीन! एक काम करो। तुम नीला देवी के पास चले जाओ और उसको अपने परिवार की अवस्था बताकर पुनः नौकरी पाने के लिए यत्न कर लो।"

"परन्तु जब आप, जो मज़दूरों के रक्षक हैं, मेरी तथा अन्य कर्मचारियों की अवस्था पर तरस नहीं खा सकते तो एक सरमायादार क्यों हम पर दया दिखायेगा? हम तो उसको गालियाँ निकालते रहे हैं और उसको भारी आर्थिक हानि पहुँचा चुके हैं।"

"पर मैं कर ही क्या सकता हूँ?"

"आप एक बात कर सकते थे और मैं समझता हूँ कि अब भी कर सकते हैं। आप यूनियन के प्रधान हैं। इस कारण पूर्ण यूनियन की ओर से प्रबोध तथा नीला देवी के पास जाकर क्षमा माँग लें और उनको कहें कि हमको पुन. उचित वेतन पर नौकर रख लें।"

"मैं अपनी पार्टी से आदेश लिए बिना इस बात को नहीं कर सकता।"

"तो आप हमारी प्रेज़िडैण्टी भी क्या पार्टी के आदेश से ही करते थे?"

"हाँ।"

"तो आप यह हड़ताल भी पार्टी के आदेश से चलवा रहे थे?"

"हाँ।"

"तो पार्टी को हम लोगों की दशा पर दया नहीं आ रही?"

"पार्टी कोर्ट में उनके कारखाने के बेचने पर प्रतिबन्ध लगवाने का यत्न करेगी।"

"इससे हमको क्या मिलेगा ? कारखाना कई मास तक बन्द रहेगा और हम बेकार रहेंगे।"

"इसीलिए तो कहता हूँ कि तुम नीला से मिलकर अपने व्यक्तिगत समस्या का सुझाव ढूँढ लो।"

"और दूसरे कर्मचारियों की क्या बात होगी ?"

"वे भी जाकर अपने-अपने लिए यत्न कर सकते हैं।"

"परन्तु यदि आपने प्रतिबन्ध लगवा दिया तो नीला देवी हमको काम कहाँ से दे सकेगी ?"

"तो इसमें मैं क्या कर सकता हूँ ?"

रामदीन निराश लौट आया। उसने अपने साथियों से राय की तो उनमें से कई इस बात के लिए राजी हो गए और नीला देवी के चिकित्सालय में जा पहुँचे।

जब नीला देवी को उनके आने का कारण पता चला तो उसने कहा, "मैं आपकी कठिनाई को समझती हूँ और अपनी ओर से पूर्ण यत्न करूँगी कि आप फिर काम पर लग सकें। देखिये! कारखाना बिक गया है। उसका मैनेजर एक दिल्ली से आया हुआ व्यक्ति नियत हो चुका है। धन प्रबोध जी के पिता का लग रहा है। जब तक कारखाने को खरीदने वाले सारा रुपया दे नहीं देते, तब तक मैनेजर के साथ मैं भी काम करूँगी और उसके प्रबन्ध मे राय दे सकूँगी। मैं आप को वचन देती हूँ कि मेरा यह यत्न रहेगा कि अधिक-से-अधिक पुराने कर्मचारी पुन. नौकरी पा जावें।"

"कारखाना कब तक खुल सकेगा ?"

"यदि आपकी यूनियन की ओर से कोई मुकद्दमेबाजी न की गई तो एक सप्ताह मे ही काम चालू हो जावेगा। परन्तु मैंने सुना है कि यूनियन इस बिक्री पर प्रतिबन्ध लगवाने का यत्न करना चाहती है।"

"हम यत्न करेंगे कि ऐसा प्रतिबन्ध न लग सके।"

"हाँ, करिये और एक-दो दिन में नौकरी की नई शर्तें, जो छपने

गई हुई हैं, आकर ले जाइये और अपना-अपना प्रार्थना पत्र भर कर दे जाइये।"

१३

शिशिर कुमार गोली चलने और कारखाना बिक जाने के पश्चात् पार्टी का आदेश लेना चाहता था। इस कारण वह पार्टी की मीटिंग बुलाने का यत्न करने लगा। पार्टी एक अत्यावश्यक बैठक की बुलाई गई और उसमे शिशिर को आदेश मिल गया कि कर्मचारियो को तो नीला देवी से मिलकर काम पाने का यत्न करना चाहिए और शिशिर कुमार को कारखाने की बिक्री पर कोर्ट द्वारा इन्जेक्शन लगवाने का यत्न करना चाहिए।

शिशिर कुमार, जिस पर नीला देवी के कथन का प्रभाव हो चुका था, यत्न करता रहा कि मुकद्दमा नहीं करना चाहिए। उसका कहना था कि कर्मचारियो को नौकरी कैसे मिल सकेगी, यदि मुकद्दमा भी आरम्भ कर दिया जायेगा। कारखाना एक लम्बे काल के लिए बन्द हो जायेगा।

इस पर उसको आदेश मिला, "तुमको काम करना चाहिए। पार्टी का आदेश है कि मुकद्दमा चला दिया जाये। यह एक महान् नीति से सम्बन्ध रखने वाली बात है। इसमे तो तुमको आदेश का पालन करना चाहिए।"

शिशिर कुमार बहुत निराश हो गया। वह मन से समझता था कि पार्टी की यह आज्ञा व्यर्थ तथा कर्मचारियों पर अन्याय होगी। तो भी उसको आदेश के पालन के बिना कोई उपाय नहीं सूझ रहा था।

पार्टी की मीटिंग समाप्त हुई तो वह उदास मन किकर्तव्य विमूढ की भाँति वहाँ बैठा रह गया। इस समय एक आदमी ने उसको आकर कहा, "आपको बाहर डॉक्टर सुशील कुमार बुला रहे है।"

वह घबराकर उठा और पार्टी के कार्यालय से बाहर निकल गया। उसके चले जाने के पश्चात् पार्टी के कुछ सदस्य परस्पर अनौपचारिक

रूप में बातचीत करने लगे। एक सदस्य, जिसका नाम भृगुदत्त था, अपने एक साथी से कहने लगा, "मैं भी इस मुकद्दमे के हक मे नहीं था, परन्तु जब मैंने देखा कि शिशिर कुमार पार्टी के आदेश को अयुक्तिसंगत कहने लगा है तो मैंने मुकद्दमे के हक मे राय दे दी। युक्ति वही है, जो हम निश्चय करते हैं।"

भृगुदत्त का साथी हँस पडा। इस पर भृगुदत्त ने विस्मय में साथी की ओर देखकर पूछा, "क्यो जी, हँस क्यों रहे हैं?"

"इस कारण कि जब युक्ति वह है, जो पार्टी निश्चय करती है तो फिर हमको युक्ति के विषय में विचार करने की आवश्यकता ही क्या है?"

"इसलिए कि हमने अपने कामो की सफाई जो देनी है।"

"जैसे अयुक्तिसगत हमारे निर्णय है, वैसे ही अयुक्तिसंगत सफाई भी दे दी जायेगी।"

"तो तुम भी इस निर्णय को गलत समझते हो क्या?"

"हाँ।"

"तो तुमने अपना मत इसके पक्ष में क्यों दिया है?"

"इस कारण कि मैं पार्टी के वैतनिक कार्यकर्ताओ मे आने वाला हूँ।"

इस पर भृगुदत्त खिलखिलाकर हँस पडा। जब साथी ने प्रश्न-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा तो उसने कहा, "काम करने का यह ढंग दोषपूर्ण है। पार्टी, जो स्वय कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व नहीं करती, उनके विषय मे आदेश करने का अधिकार नहीं रखती।"

"तो फिर क्या होगा?"

"मै तो कर्मचारियों को कहने वाला हूँ कि अब मुकद्दमे के आश्रय बेकार न बैठे रहे। मेरे पडोस मे इस फैक्टरी के दो कर्मचारी रहते हैं। बेचारे बहुत बेहाल हैं। उनको तुरन्त अपने काम की खोज कर लेनी चाहिए।"

रामदीन भृगुदत्त के पडोसियो मे एक था। रात के समय उसको

बुलाकर जब भृगुदत्त ने पूर्ण परिस्थिति का वर्णन किया तो उसने भी नीला से हुई बातचीत बता दी।

"तो नीला ने तुम्हें पुनः रख लेने का आश्वासन दिया है क्या?"

"जी हाँ, उन्होंने कहा तो है, परन्तु यदि शिशिर बाबू ने कारखाने पर मुकद्दमा कर दिया तो फिर नौकरी मिलनी कैसे सम्भव है?"

"तो शिशिर बाबू से कहो कि मुकद्दमा न करें।"

"हम उनसे मिलने के लिए गए थे और पता चला है कि वे कहीं बाहर चले गए हैं।"

"बाहर कहाँ?"

"यह पता नहीं चला। पार्टी कार्यालय में कोई कह रहा था कि कलकत्ता गए प्रतीत होते हैं।"

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि अभी कुछ दिन मुकद्दमा दायर नहीं किया जायेगा। तब तक तुम नीला देवी से मिलकर नौकरी का प्रबन्ध कर लो।"

"यह तो हो जायगा, पण्डित जी! परन्तु यदि कारखाना चालू होने पर भी इन्जेक्शन मिल गया, तब भी तो कारखाना बन्द हो जावेगा और हमारी नौकरी बीच में ही लटकती रह जायेगी।"

"ऐसा करो कि शिशिर बाबू के आने की टोह लेते रहो। जब वह आ जाये तो उसको कहना कि मुकद्दमा करने से पहले मुझसे मिल ले।"

तीन

१

जिस दिन अमृतकौर की प्रीतम सिंह से सगाई हुई, उसी सायकाल अपने भाई की दूकान पर से उठते हुए उसने अपने भाई से पूछा था, "तो फिर क्या करू ?"

हरभजन सिंह ने कहा था, "तुम घर जाओ मैं सरदार कर्तार सिंह से मिलकर आता हूँ ।"

अमृत दूकान से निकली तो घर जाने के स्थान केसर बाग और हजरत गज की ओर चल पडी । वह घर पर जाने के लिए अपने मन को तैयार नही कर सकी । मार्ग पर चलते-चलते वह कई प्रकार की सम्भावनाओ का विचार कर रही थी । सरदार कर्तार सिह से मिलने में वह कोई प्रयोजन नहीं समझती थी । वह इस विषय मे हरभजन सिंह से सहमत नहीं थी । इस पर भी वह उसको वहाँ जाने से मना नही कर सकी । वह यह भी जानती थी कि यदि उसने अपने पिता से इस सगाई के विषय में अपनी राय बताई तो वह एक ओर तो पीटी जायेगी और दूसरी ओर तब तक कैद भी की जा सकती है, जब तक उसका विवाह न हो जाये ।

इस परिस्थिति में वह घर लौटने में कुछ भी लाभ नहीं समझती थी । परन्तु प्रश्न था कि घर न जाकर कहाँ जाये ? एक बार उसके मन

में आया कि अपने मामा के घर चली जाये, परन्तु उसको स्मरण था कि उसके पिता ने उसकी माँ को भी घर से निकाल देने की धमकी दी थी। इसके घोर परिणामों को विचार उसके पग न तो घर की ओर जाते थे और न ही अपने मामा के घर की ओर।

वह एक बात जानती थी कि उसके बालिग होने में तीन मास की अवधि है। यदि वह ये तीन मास तक कहीं छिपकर रह सके तो काम बन सकता है। रह-रहकर वह मामा के घर जाने का विचार करती थी, परन्तु इसकी प्रतिक्रिया अपनी माँ पर होने की सम्भावना का विचार कर वह उधर जाती-जाती लौट आती थी।

यह सब कुछ अमृत को अति दुस्तर प्रतीत होता था। वह नहीं जानती थी कि किधर जाये। सब-कुछ विचार करने पर भी वह घर जाने के लिए अपने मन को तैयार नहीं कर सकी। इस प्रकार के विचारों में वह हजरत गज पर चक्कर काट रही थी कि उसके सामने सुशील कुमार ने खड़े होकर मार्ग रोक लिया। उसको देख उसके मन में एक आशा की किरण जाग पड़ी। उसने मुस्कराते हुए पूछा, "आज यहाँ कैसे?"

"आज हस्पताल नहीं जाना था। इस कारण सिनेमा देखने चला आया था। तुम कहाँ जा रही हो? चाय पी ली है क्या?"

"नहीं। आइये, चाय पियें और एक अत्यावश्यक बात है। वह भी कर लेंगे।"

"क्यों? क्या बात है? चलो मैं स्टैण्डर्ड में चाय पीने जा रहा हूँ।"

सुशील ने यह पूछते हुए अमृत की ओर देखा था। यद्यपि सायंकाल हो गया था और कुछ-कुछ अँधेरा हो चला था, इस पर भी सुशील ने अमृत की तरल आँखें देख ली थीं, परन्तु उसने इस तरलता का कारण पूछे बिना स्टैण्डर्ड की ओर पग उठा लिए। अमृत उसके साथ-साथ चल पड़ी।

दोनों रेस्टोराँ में पहुँच एक कोने में जा बैठे। अमृत चुप थी। वह अपने आँसू रोकने में लगी हुई थी। सुशील ने उसको चुप देख पूछा, "बहुत दिन के पश्चात् मिले हैं अमृत। बहुत बातें तुमसे करनी हैं।"

"हूँ।" अमृत ने मुख खोले बिना कह दिया।

"मुझको हस्पताल की पक्की नौकरी मिल गई है। वहाँ पर वेतन तो केवल अढाई सौ रुपया ही है, परन्तु प्रैक्टिस से पर्याप्त आय हो जाती है। आजकल हस्पतालों मे बहुत अधिक रोगी आ रहे हैं। इस कारण जो रोगी डॉक्टरो से भेजे हुए आते हैं, उनको प्रवेश सुगमता से मिल जाता है। लोग यह समझते हैं कि यदि हाउस-सर्जन से हस्पताल में भेजे जायेंगे तो उनको निश्चित रूप मे प्रवेश मिल जायेगा। अतएव प्रायः रोगी पहले मुझको घर पर दिखाने आते है औरमेरी फीस देने में अपना भला समझते हैं। मै उनकी सिफारिश कर देता हूँ और फिर अगले दिन उनके लिए हस्पताल मे स्थान बना देता हूँ और ली हुई फीस सार्थक कर देता हूँ। इस प्रकार सौ-दो सौ के भीतर नित्य की आय हो रही है।"

अमृत चुपचाप बैठी थी। वह इस समय अपने मन को दृढ कर विचार कर रही थी कि किस प्रकार अपनी बात आरम्भ करे।

सुशील कह रहा था, "अभी तक तो अपनी कमाई अपनी कोठी की सजावट मे खर्च कर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि मेरे विवाह से पूर्व मेरा स्थान सभ्य मनुष्यों के रहने योग्य हो जावे। मै अपनी पत्नी को बहुत ही आराम और आनन्द में रखना चाहता हूँ।"

अमृत अभी भी चुप थी। सुशील कह रहा था, "अगले मास मै हिन्दुस्तान लैण्डमास्टर मोटर गाड़ी लेने का विचार रखता हूँ। तब ही विवाह का आनन्द रहेगा।"

इस समय तक अमृत अपने मन पर काबू पा चुकी थी। उसने अब अपनी बात बतानी उचित समझी। उसने पूछा, "पर विवाह कब होगा?"

"तुमने कहा था न कि तुम्हारे माता-पिता तुम्हारा मेरे साथ विवाह पसन्द नहीं करेंगे। अतएव तीन मास के उपरान्त। जब तुम बालिग़ हो हो जाओगी, तब ही विवाह कर सकोगी।"

"परन्तु, ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय से पूर्व ही बाज चिड़िया

को झपटकर ले जावेगा और आप मुख देखते रह जावेंगे।"

"क्या मतलब?"

"मेरे माता-पिता ने मेरी सगाई एक सरदार कर्तार सिंह के सुपुत्र सरदार प्रीतम सिंह से कर दी है।"

"तो इसका मतलब यह हुआ कि मैं पीछे रह गया हूँ और कोई अन्य दौड़कर मुझसे आगे निकलता जा रहा है?"

"हाँ, अब तो एक ही उपाय है कि मै ये तीन मास कहीं छिपकर निकाल दूँ।"

"ठीक तो है।"

"पर कहाँ छिपूँ?"

"तो तुमने कुछ विचार किया है?"

"मैं अपने किसी सम्बन्धी के घर जाना नहीं चाहती और मित्रों में आपसे अधिक कौन हो सकता है?"

सुशील गम्भीर विचार में डूब गया। बैरा चाय लगा गया। अमृत ने चाय बनानी आरम्भ कर दी। चाय लगाते हुए उसने कहा, "आप अपने को षड्यन्त्रकारी होने की शेखी मारते थे। अब समय है कि आप अपनी चतुराई का परिचय दें।"

इस समय तक सुशील का उर्वरा मस्तिष्क एक योजना बना चुका था। उसने प्याला उठा चाय का एक घूँट पीते हुए कहा, "अमृत! मुझ पर विश्वास करो तो एक योजना बताऊँ?"

"आपको तो मैंने आत्म-समर्पण कर रखा है। आप पर तो अविश्वास का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता।"

उसने प्याला सॉसर में रखकर अमृत की आँखों में देखते हुए कहा, "बर्दवान में मेरे एक मित्र शिशिर कुमार की मौसी रहती है। वह मुझको अपना पुत्र ही मानती है। कहो तो तुमको उसके पास भेज दूँ?"

"परन्तु यह कब तक हो सकेगा? मैं तो अब भी घर नहीं जा सकती। मुझको भय है कि मेरे वहाँ जाते ही मुझको मेरे विवाह तक कैदकर रखा

जायगा ।"

"क्यों ?"

"इस कारण कि मेरे पिता मेरी स्वतन्त्र प्रवृत्ति को जानते हैं और उनको यह भी विदित है कि मैं और भाई केशधारी सिखों को पसन्द नहीं करते। मेरे घर से भाग जाने की सम्भावना से बचने के लिए वे मुझको कोठी में कहीं बन्द कर देंगे और एक-दो दिन में मेरा विवाह कर देंगे।"

"इसका अर्थ यह निकला कि अभी प्रबन्ध करना चाहिए।"

"हाँ। मैं अपने मामा के घर जा रही थी, परन्तु जैसा कि मैंने अभी बताया है, मेरा वहाँ रहना उचित नहीं। यदि आपकी देख-रेख में रह सकूँ तो उचित ही होगा।"

चाय पी कर दोनों शिशिर कुमार को मिलने चले गए। वह पार्टी के कार्यालय मे था। जब उसने बात सुनी तो वह चिरकाल तक सोच-विचार में पड़ा रहा। सुशील और अमृत दोनों उत्सुकता से उसका मुख देखते रह गये। अन्त मे उसने कहा, "मौसी का घर है तो ठीक, परन्तु उसको यह बात बतायेंगे तो वे इनको घर पर नहीं रखेंगी।"

"क्यों ?"

"बात स्पष्ट है कि एक कँवारी लड़की को इसलिए छुपाना कि वह अपने माता-पिता से चुने हुए पति से विवाह करना नहीं चाहती, उनको सर्वथा अरुचिकर होगा। वे इनसे प्यार करने के स्थान इनसे घृणा करेंगी और घृणा में मनुष्य जो कुछ भी कर दे कम है।"

"तो क्या किया जाये ?"

"एक ही उपाय है। ये नकली रूप मे मेरी पत्नी बनकर वहाँ रह सकती हैं। मै कह दूँगा कि मुझको अभी लखनऊ में मकान नहीं मिला, इस कारण विवाह करते ही चला आया हूँ।"

सुशील इस प्रस्ताव को सुनकर हँस पड़ा और बोला, "यदि नकली रूप मे ही बीबी बनाकर रखो तब तो आपत्ति नहीं हो सकती,

परन्तु याद रखो शिशिर। कहीं मेरे खेत में मुख डाला तो ठीक नहीं होगा।"

"मै इस बात की चिन्ता नहीं करता। मै तो जानता हूँ कि तुम मित्र हो और ये तुम्हारी मगेतर हैं। मुझको भय इस बात का है कि इनको मेरी पत्नी होने का अभिनय करना होगा, जो ये कर सकेंगी क्या?"

'कर क्यों नहीं सकेगी? क्यों अमृत?"

यह एक प्रकार से अमृत के चरित्र और शिक्षा को चुनौती थी। इससे उसने बहादुरी बताते हुए कह दिया, "अभिनय-मात्र तो कर दूँगी।"

"बस और कुछ नहीं चाहिए। मौसी बहुत अच्छी है। मेरे माता-पिता नहीं और वे मुझको अपना पुत्र मानती हैं। इस कारण मेरा अपनी पत्नी को वहाँ ले जाना और उनके पास रखना स्वाभाविक ही है।"

बात तय हो गई। सुशील ने टैक्सी की और अमृत तथा शिशिर को अपने बँगले मे ले गया। वहाँ जा उसने अपना बिस्तर अमृत को दिया। साथ ही पाँच सौ रुपये के नोट देकर कहा, "रात को नौ बजे देहरादून हावड़ा-ऐक्सप्रेस जाती है। उसमें ही चले जाइए।"

"मौसी को एक तार दे दूँ?"

"हाँ, यह ठीक रहेगा?"

अतएव वे वहाँ से टैक्सी में बड़े तार-घर पहुँचे। वहाँ शिशिर ने अपनी मौसी को तार दे दिया।

तार में लिख दिया, "आंटी! ब्रिगिग वाइफ फॉर स्टे विद यू। रीचिंग टुमारो डी०-डी० ऐक्सप्रेस।"

जब तार दे चुके तो शिशिर ने कहा, "मौसी के कई पत्र आ चुके हैं कि मैं विवाह कर लूँ। अब इस तार के पहुँचते ही वे क्या करेंगी, अनुमान ही लगाया जा सकता है।"

इस पर तीनों हँसने लगे। वहाँ से वे स्टेशन पर पहुँचे। सुशील का स्टेशन मास्टर से परिचय था। वह भी एक बंगाली महाशय था। उससे

कहकर उसने एक फर्स्ट-क्लास 'कूपे' रिजर्व करवा लिया। गाड़ी के आने पर शिशिर और अमृत को उसमें सवार कर वह लौट पड़ा।

मार्ग में नीला देवी मिली। वह एक रोगी को देखकर लौट रही थी। नीला देवी के मस्तिष्क मे अमृत का कहना कि वह सुशील से वचन-बद्ध है, घूम रहा था। इससे उसने उस समय उसके वहाँ घूमने की बात पूछकर अपने मन की बात पूछ ली, "सुशील! तुम्हारा विवाह कब हो रहा है?"

"दो-तीन महीने में हो जायेगा।"

"क्या अमृत के विषय मे तुम्हारे माता-पिता राजी हो गए हैं?"

"नहीं, और मै समझता हूँ कि उनको नाराज करने मे कोई लाभ नहीं है।"

"मैंने सुना था कि आप अपने माता-पिता से विरोध कर अमृत से विवाह करेंगे?"

सुशील के मन में आया कि अमृत के विषय मे उससे बात कर दे, परन्तु फिर उसने सोचा कि उसका घर से भाग जाना उसका अपना रहस्य है और बिना उसकी अनुमति के यह किसी को नहीं बताना चाहिए। हरभजन सिंह को भी नहीं। इतना विचार कर उसने अपने मन को दृढ कर कह दिया, "अमृत तथा जिसने आपको बताया है, उसको भ्रम हो गया प्रतीत होता है। मैंने अमृत से कभी किसी प्रकार का वचन नहीं दिया। बात यह है, नीला देवी! कि जब से आपने मेरे प्रेम को ठुकरा दिया है, मै विवाह को एक दुनियादारी से अधिक महत्त्व नहीं दे रहा।

"मै समझता हूँ कि मेरी बीवी को मेरे परिवार में ही रहना है। इस कारण यह आवश्यक है कि उसकी उनसे पट सके। मै सरकार बाबू की लड़की के विवाह कर रहा हूँ।"

उस समय तक नीला को अमृत के घर से भाग जाने का ज्ञान नहीं था। रात को हरभजन सिंह उससे अमृत के विषय मे पूछने आया तो नीला ने वह सब बात ज्यूँ-की-त्यूँ बता दी। इससे हरभजन सिंह को

विश्वास हो गया कि सुशील कुमार से अमृत के विवाह की बात निश्चित नहीं है। साथ ही यह बात भी सिद्ध हो गई कि वह अमृत के विषय में नहीं जानता।

इसके पश्चात् जब-जब हरभजन सिंह सरकार बाबू से मिलता रहा तो उसको रेणु के विवाह की तैयारी के समाचार मिलते रहे।

२

अमृत ने कह तो दिया कि वह शिशिर कुमार की पत्नी बनने का अभिनय कर देगी, परन्तु यह कार्य उतना सुगम नहीं था, जितना वह समझती थी। शिशिर ने अपना परिचय देना उचित समझा, इस कारण जब गाड़ी लखनऊ से चली तो शिशिर ने कहा, "तुम मेरी पत्नी का नाटक खेलने जा रही हो। इस कारण तुमको मेरा पूर्ण परिचय तो रहना ही चाहिए, लो सुनो।

"मेरे नाना एक मध्यम श्रेणी के क्लर्क थे। उनका परिवार लम्बा-चौडा था। पाँच लड़कियाँ और छ: लड़के थे। इस कारण उन्होंने अपनी बड़ी लड़की प्रतिमा देवी का विवाह बर्दवान के एक ज़मींदार प्रफुल्ल बाबू से कर दिया। विवाह के समय प्रफुल्ल बाबू पचपन वर्ष की आयु के थे। इस समय उनकी पहली पत्नी का देहान्त हो गया था। प्रफुल्ल बाबू प्रतिमा देवी पर मोहित थे और उन्होंने जमींदारी छोड़कर अपनी पूर्ण सम्पत्ति, उसके नाम लिख दी। बर्दवान में कई मकान थे, झरिया में कोयले की खानों में हिस्से थे। इनके अतिरिक्त टाटा और अन्य कम्पनियों में भी हिस्से थे।

"प्रफुल्ल बाबू का दो वर्ष पश्चात् देहान्त हो गया। प्रतिमा देवी बिना सन्तान के विधवा हो गई और जमींदारी के अतिरिक्त अतुल धन-राशि की स्वामिनी बन गई।

"यही तो मेरे नाना चाहते थे। परिणाम यह हुआ कि मेरे नाना के परिवार को एक बहुत बड़ा आश्रय मिल गया। प्रतिमा देवी ने अपनी

चारों बहनों का विवाह किया और अपने भाइयों की शिक्षा का प्रबन्ध कर दिया।

"मेरी माँ मेरे नाना की दूसरी लड़की थीं। स्वाभाविक रूप से चन्द्रिका, यह मेरी माँ का नाम था, प्रतिमा देवी की परम प्रिय थीं। परन्तु उसका विवाह हुआ और मैं अभी उसके पेट में ही था कि मेरे पिता का देहान्त हो गया। मेरी माँ अपने ससुराल को छोड़ अपनी बहन प्रतिमा देवी के घर में जाकर रहने लगीं। मेरा जन्म हुआ और उसके कुछ ही पीछे माँ का भी देहान्त हो गया।

"मौसी ने मुझको पाल-पोसकर इतना बड़ा किया है। मुझको एम० ए० तक पढाया है। मेरे विचार सोशियलिज्म की ओर जाने लगे तो मै देश मे क्रान्ति लाने के उपायों पर विचार करने लगा। अब मै कम्युनिस्ट पार्टी का एक सदस्य हूँ और उनका वैतनिक कार्यकर्ता हूँ। मेरे इस काम के विषय में मौसी कुछ नहीं जानती। उसका विचार है कि मैं अपनी पी० एच० डी० की डिग्री के लिए 'थीसिस' लिख रहा हूँ।

"यद्यपि मुझको वे अपना पुत्र ही मानती हैं, इस पर भी उन्होंने यह न तो घोषित किया है और न ही सिवाय मेरे खर्चे के अतिरिक्त मुझे कुछ लिया-दिया है। मेरा विचार है कि वे मेरे विवाह की प्रतीक्षा कर रही हैं और तब ही वे मेरे विषय में विचार करेंगी।

"सुशील को मौसी जानती हैं। दो वर्ष हुए, सुशील एक मास के लिए बर्दवान मेरे साथ रह आया है। अब तुमको अपनी पत्नी के रूप में ले जाने से कई प्रकार की प्रतिक्रियाएँ होने की सम्भावना है। वे मेरी पत्नी को एक अबंगाली लड़की देख नाराज हो सकती हैं। वे तुमको सुन्दर देख तुमसे प्रसन्न भी हो सकती हैं। वे बिना उनके ज्ञान के मुझको विवाह करते सुन नाराज़ हो सकती हैं अथवा एक पढी-लिखी सुशील बहू को घर पर बिना किसी प्रकार का झंझट किये आता देख प्रसन्न भी हो सकती हैं। कह नहीं सकता क्या होगा? इस पर भी इतना तो मुझको विश्वास है कि वे तुमको घर से निकालेंगी नहीं।"

"यह है मेरा इतिहास और तुमको भी कुछ इतिहास बनाना पड़ेगा। तुम अपना वास्तविक इतिहास तो बताना नहीं चाहती न ?"

अमृत ने कहा, "मेरे विषय में आप कह सकते हैं कि मेरे पिता पजाब से आये हुए एक विस्थापित व्यक्ति थे। आपके पडोस में एक घर में रहते थे। उनका एकाएक देहान्त हो गया और मैं अकेली रह गई। आपने मुझसे विवाह कर लिया है और मेरी माँ पाकिस्तान में ही मर चुकी थीं।"

"बहुत खूब। अच्छी कहानी रहेगी।"

इस प्रकार एक कहानी बना वे सो रहे। प्रातःकाल जब नींद खुली तो गाड़ी सोन का पुल पार कर रही थी। अमृत खिलखिलाकर हँसी तो शिशिर, जो ऊपर के बर्थ पर सो रहा था, झाँककर नीचे देख पूछने लगा, "क्या बात है ? अमृत देवी।"

"कुछ नहीं, मैं रात-भर सोचती रही हूँ कि आपकी मौसी के सम्मुख मैं आपको क्या कहकर पुकारूँ ?"

"हमारे यहाँ रिवाज है कि पत्नी पति को, 'आप, भद्र, महाशय' इत्यादि शब्दों से सम्बोधन कर पुकारती है।"

"और आप मुझको कैसे पुकारेंगे ?"

"मैं, हाँ। अमृत डीयर, डार्लिंग, प्रिये, ओ, ए इत्यादि सम्बोधनों से।"

"आपकी मौसी हमको एक पृथक् कमरे में सुलायेगी।"

"वह तो आज रात भी हम सोये हैं।"

"रेल की बात दूसरी है। परन्तु वहाँ तो पत्नी मानकर मुझको आपके पलग पर बिठाया जायेगा।"

"वे, जो इच्छा है करें। हमने तो नाटक ठीक-ठीक खेलना है।"

अमृत को विश्वास था कि उस जैसी दृढ निश्चय वाली लड़की किसी भी परिस्थिति में अपने विचारों पर अटल रह सकती है। शिशिर ने उसको उचित ढग पर आश्वासन दिया था। इसी कारण वह इस अभिनय में भाग लेने के लिए तैयार हुई थी। इस पर भी इकट्ठे रहने की

पहली रात ही वह समझने लगी थी कि इस नाटक के खेलने में कितनी कठिनाई उत्पन्न हो सकती है ।

कठिनाई तो वर्दवान स्टेशन पर पहुँचते ही सामने आई । शिशिर की मौसी प्रतिमा देवी और उसके साथ नौकर-चाकर नव-वधू की अगवानी करने आये हुए थे । इतने लोगों को देख, अमृत का दिल बैठने लगा । शिशिर ने उसके कान में कहा, "अमृत ! मौसी के चरण-स्पर्श करना ।"

"बता तो दीजियेगा कि कौन मौसी हैं ?"

"हाँ, हाँ । मेरी ओर ध्यान रखना । मैं भी तो चरण-स्पर्श करूँगा ।"

"तब तो ठीक है ।"

गाड़ी के खड़े होते ही प्रतिमा देवी डिब्बे में चली आई और वहाँ ही दोनों ने उसके चरण-स्पर्श किये । उसने आशीर्वाद दी और बहू को उठाकर गले लगाया । एक क्षण के लिए तो वह एक गौरवर्णीय पंजाबी लड़की को बहू के रूप मे देख चकित रह गई । शीघ्र ही उसने अपने मन पर काबू पाकर कहा, "शिशिर ! यदि तुम्हारे पास बहू के योग्य कपड़े खरीदने को रुपया नहीं था, तो तुमने माँग क्यो नहीं लिया ?"

"मौसी ! यह सब-कुछ इतना जल्दी हुआ कि रुपया छोड़ तुमको भी न बुला सका । घर चलकर सब बताऊँगा । यह बताओ कि क्या यह सुन्दर नहीं है ?"

इस पर प्रतिमा देवी ने अमृत को ध्यानपूर्वक देखा तो अमृत की आँखे झुक गई । उसने ठुड्डी उठाकर उसको देखा और माथा चूमते हुए कहा, "बहुत सुन्दर है ।"

इस समय नौकर भीतर आ सामान उठाने लगे तो शिशिर उनको सामान दिखाकर, अमृत को लेकर गाड़ी से नीचे उतर आया । मौसी ने उससे कान मे पूछा, "बहू कुछ पढी-लिखी भी है ?"

"हाँ, मौसी ! बी० ए० पास किया हुआ है ।"

मौसी ने फूलों की माला शिशिर के गले में डाल, दोनों को एक ही चार बाहों में लेकर छाती से लगाते हुए कहा, "चिरजीव हो बेटा ! सुख-

पूर्वक रहो और बेटे-बेटियों से सौभाग्यशाली बनो।"

"माँ! अब चलो, स्टेशन पर तमाशा देखने वाले इकट्ठे हो रहे हैं।"

"हाँ चलो।"

प्रतिमा देवी ने अमृत कौर को अपने साथ लिया और स्टेशन से बाहर निकल आई। नौकर सामान लेकर चल पड़े। शिशिर सबसे आगे-आगे था। उसके साथ प्रतिमा देवी के देवर का लड़का विमलानन्द था। वह इस समय पैंतीस वर्ष का होगा। उसके चार बच्चे थे। बड़ी लड़की की शादी हो चुकी थी और छोटी लड़की शशि कुमारी के लिए उसकी दृष्टि शिशिर पर थी। इस कारण इस विवाह की सूचना से उसको बहुत शोक हुआ था। पिछली बार जब शिशिर बर्दवान मे था तो उसने प्रतिमा देवी से शशि के लिए कहलवाया था, परन्तु शिशिर ने न तो न की थी और न ही हाँ। इस पर भी वह आशा बाधे हुए था। इस लड़की को बहू के रूप मे देख, वह जल-भुन गया।

विमलानन्द ने शिशिर के साथ चलते हुए कहा, "शिशिर! यह कहाँ से पकड़ लाये हो?"

"लखनऊ से दादा!"

"अब शशि का क्या होगा? वह तुम्हारी कई वर्षों से प्रतीक्षा कर रही है।"

"सो तो ठीक है, परन्तु विवाह के विषय में भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। शशि के लिए भी कोई अच्छा प्रबन्ध हो जायेगा, दादा!"

"तुमने मुझको भारी धोखा दिया है। यह लड़की तो पजाबिन प्रतीत होती है।"

"हाँ!"

"सफेद चमड़ी देख बगाली सस्कृति को भूल गए हो न?"

"यह बहुत अच्छी है दादा!"

"यह गाती है क्या?"

"मुझको पता नहीं।"

"क्या यह नाच सकती है?"

"मैंने देखा नहीं।"

"यह चित्रकला जानती है क्या?"

"दादा!" वे स्टेशन से बाहर आ चुके थे, "शेष बात घर चलकर करेंगे।"

विमलानन्द चुप कर रहा। मोटर मे प्रतिमा देवी बहू को लेकर बैठ गई। शिशिर को वह बहू के दूसरी ओर बिठाना चाहती थी, परन्तु वह मौसी के दूसरी ओर बैठ गया और बोला, "मौसी मुझको लज्जा लगती है।"

विमलानन्द दूसरी मोटर में जा बैठा और जब शिशिर इत्यादि की मोटर चली तो वह भी अपनी मोटर ले पीछे-पीछे चल पड़ा। नौकर एक जीप मे सामान लादकर साथ-साथ हो लिए।

. ३ .

बर्दवान गाड़ी सायं पाँच बजे पहुँची थी। घर पहुँचते-पहुँचते छः बज गए थे। प्रतिमा देवी ने घर पर बैंड-बाजा मँगवाया हुआ था और मुहल्ले-टोले वालो को निमन्त्रण दिया हुआ था।

धनी विधवा, ज़मींदार की बीवी, सुहृदय, धर्मपरायण होने से प्रतिमा देवी का परिचय और घनिष्ठता लम्बी-चौडी थी। यह समाचार पाते ही कि प्रतिमा का गोद लिया पुत्र शिशिर कुमार विवाह कर बहू घर लाया है, तो सैकड़ो स्त्री-पुरुष वर-वधू को देखने तथा बधाई देने उमड पड़े।

प्रतिमा ने मोटर में ही शिशिर को डाँटना आरम्भ कर दिया था, "बेटा शिशिर! ये वस्त्र प्रतिमा की पतोहु के योग्य नहीं है। मुझको विदित होता तो मैं तुमको पटना में आ मिलती और वहाँ से ही बहू को कपडे, भूषण पहनाकर लाती। ऐसे कपडे पहनाती कि सारा बर्दवान चकाचौंध रह जाता।

"तुम एक ही तो मेरे बेटे हो और तुम्हारी ही बहू, विवाह के तुरन्त पीछे इस प्रकार के साधारण कपड़े पहनकर अपनी ससुराल में आवे, यह तो तुमने मेरे मुख पर कालिख पोत दी है ।"

"पर मौसी ! इसका सौन्दर्य देख तो इसके कपड़ों और भूषणों पर किसी का भी ध्यान नहीं जायेगा । मेरा तो अभी तक नहीं गया था ।

"फिर मौसी ! तुम कह देना कि लम्बी यात्रा से आ रही है । तनिक स्नान कर वस्त्र पहनेगी, यात्रा में भूषण गिर जाने का डर था ।"

"यही तो कठिनाई है । कोई पूछेगा ही क्यों ? और मैं बिना पूछे बता कैसे सकूँगी ? सब अपने-आप ही मन में विचार करने लगेंगे ।"

"तो ये विचार जब तुम इसको सोलह शृंगार कर सब में लाओगी, स्वयमेव मिट जायेंगे ।"

"सो तो ठीक कहते हो । पर यह हुआ कैसे कि तुमने इस बात की सूचना भी नहीं भेजी ?"

"मौसी ! समय ही नहीं था । तुम सारी कथा सुनोगी तो मान जाओगी कि इसके अतिरिक्त कुछ हो ही नहीं सकता था । मैं तो यह जानना चाहता हूँ कि तुमको भली लगी है अथवा नहीं ?"

"वह विमलानन्द का मुख देखा था ? इस समाचार से काला पड़ गया था ।"

"हाँ, मुझसे पूछता था कि अब शशि का क्या होगा ? मैंने कह दिया कि उसके लिए प्रबन्ध हो जायेगा । मौसी ! कोई पूर्णिमा के स्थान अमावस को पसन्द नहीं कर सकता ।"

प्रतिमादेवी मुस्कराई और बोली, "देखो शिशिर ! बंगाली लड़कियों की हँसी मत उड़ाओ । उनके अपने गुण हैं, दूसरों के अपने ।

"एक बात कहूँ शिशिर ! शशि बहुत लड़ाकी लड़की है । मैं मन-ही-मन नहीं चाहती थी कि तुम्हारा उससे विवाह हो । पर देखें, तुमने यह क्या पल्ले बाँध दिया है ?"

इतना कह प्रतिमा देवी ने अमृत की ओर देखा, वह मुस्करा रही थी ।

अमृत ने एकाएक शिशिर की मौसी को अपनी ओर देखते हुए देखा तो आँखें बन्द कर लीं। प्रतिमा ने उसकी ठुड्डी के नीचे उँगली रखकर मुख को तनिक ऊपर उठाया और कहा, "क्यों बहू? मुझसे झगड़ा करोगी? अभी बता दो।"

अमृत ने झुककर मौसी के चरण-स्पर्श कर हाथ अपने सिर को लगाये और मुस्करा-कर मौसी की ओर देखा। ऐसा वह सिनेमा-पट पर बंगाली औरतों को करते देख चुकी थी। प्रतिमा इससे गद्‌गद् प्रसन्न हो गई और उसने अमृत का मुख दोनों हाथों मे पकड़ कर उसकी दोनों गालों को चूम लिया।

जब ये घर पर पहुँचे तो उपस्थित लोगों की भीड़ पुष्पमालायें लिये आगे आई। इस पर प्रतिमा देवी ने कहा, "ठहरो, बहू को स्नान कर वस्त्र-भूषण पहन लेने दो। वह अभी दीवानखाने मे आती है, तभी आप लोग स्वागत करियेगा।

"शिशिर! शीघ्र करो। तुम भी स्नानादि कर लो।" पश्चात् उसने बहू के स्वागत के लिए आये हुए लोगो को कहा, "तब तक आप चाय-पानी पीजिये।"

अब उसने नौकरों को कहा, "ओ कचेरु, सबको मिठाई खिलाओ और चाय पिलाओ।"

उसने फिर लोगो से कहा, "आप सब दीवानखाने में बैठिये।"

अमृत शिशिर के साथ लज्जा और अहसान के नीचे दबी हुई मकान के भीतर चली गई। वह मन में विचार कर रही थी कि वह तो यह समझ रही थी कि शिशिर की मौसी शिशिर को उसके एक अबंगाली लड़की घर मे ले आने पर डाटेगी, उससे नाराज होगी और कदाचित् उसको घर से निकल जाने का आदेश देगी। उसको यदि यह आशा होती कि उसका इतना स्वागत किया जायेगा और उसको चूमा-चाटा जायेगा, तो वह कदापि यहाँ इस रूप मे आने का साहस न करती। परन्तु अब तो नाटक आरम्भ हो गया था। पर्दा उठ गया था और वह

अपने को मञ्च पर खड़ी पाती थी। अब भागकर जाने के लिए स्थान नहीं रहा था।

शिशिर अमृत को लेकर ऊपर की मंजिल पर अपने कमरे में गया। यह कमरा उसके लिए सदा ठीक किया रहता था। उसने अमृत का मुख विवर्ण देखा तो सब-कुछ समझ गया। उसने कहा, "अमृत! साहस से काम लो। रंगमञ्च पर आई हो तो असफल अभिनेत्री नहीं बनना। देखो, मैं समझता था कि भारी झगड़ा होगा। विमलानन्द मौसी को भड़का कर तैयार रखेगा और हमारे यहाँ पहुँचते ही गालियों की बौछार पड़नी आरम्भ हो जावेगी। मैं तुम्हारे लिए मौसी की मिन्नत करूँगा और उधर से मुझको लातें पड़ेंगी, परन्तु जो कुछ हो रहा है वह आशा के विपरीत है। मैं बंगाली-समुदाय की प्रवृत्ति को जानता हूँ। वे किसी अबंगाली लड़की को घर में देखकर प्रसन्न नहीं होते। अच्छा, देखें क्या होता है।"

"मुझको यदि मालूम होता कि आपकी मौसी इतनी प्रेममयी हैं तो कभी यहाँ न आती। जितनी इनको मेरे यहाँ आने से प्रसन्नता हुई है, उतना ही शोक और दुःख इनको तब होगा, जब इनको पता लगेगा कि यह सब नाटक खेला जा रहा था।"

"अब तो आ गई हो न। याद रखो कि यह तुम्हारे और मेरे मान-अपमान की बात नहीं, परन्तु मेरी माँ तुल्य इस सुहृदय देवी के दुःखी और सुखी करने की बात भी है।"

अमृत शिशिर का मुख देखने लगी। शिशिर ने फिर कहा, "पर एक बात का मै तुमको आश्वासन दिलाता हूँ कि इस परिस्थिति से तुमसे किसी प्रकार का अनुचित लाभ उठाने का यत्न नहीं किया जायेगा। सुशील को मैं अपना बड़ा भाई समझता हूँ। इससे तुम मेरी भाभी हुई।"

इस समय प्रतिमा देवी वहाँ आ पहुँची। उसने बहू को कहा, "चलो मेरे साथ। स्नान कर वस्त्र पहनने हैं और भूषण भी तो तुमने चुनने हे। नीचे लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं और उनको बहुत देर तक बैठाये रखना

उचित नहीं होगा।"

शिशिर भी स्नान करने चला गया। जब वह गुसलखाने से निकला तो उसके लिए रेशमी कपड़े पहनने को रखे थे। उसने कुर्ता-धोती पहना तो उसके जल-पान का प्रबन्ध कर दिया गया। उसने अभी मुख मे डालने के लिए ग्रास उठाया ही था कि मौसी अमृत को लेकर आ गई।

"चलो शिशिर! नीचे आये लोगों से भेंट कर लें। वे वहू को भेंट देने के लिए भूपणादि लाये हैं।"

शिशिर ने जलपान छोड़ा और खड़ा हो गया। मौसी के पीछे अमृत भूषणों से लदी खड़ी थी। वह उसकी सज-धज देखकर चकित रह गया। इन वस्त्र-आभूषणों में और बंगाली ढंग के पहिरावे में अमृत को देख शिशिर के मन में एक प्रकार की गुदगुदी होने लगी। इस समय पहली वार उसके मन में टीस उठी और वह विचार करने लगा कि यदि अमृत उसकी पत्नी होती तो?

कुछ अधिक विचार करने के लिए समय नहीं था। वह मौसी के साथ-साथ चल पड़ा। अमृत मौसी के दूसरी ओर थी।

शिशिर की मौसी का मकान बहुत बड़ा था। दो-मंजिले मकान में बीसियों कमरे थे। पाँच गुसलखाने थे और सब मकान अँग्रेज़ी ढग पर सजा हुआ था। मकान के बाहर एक बहुत बड़ा मैदान था, जिसमें फुलवाड़ी थी और मोटर के लिए सड़क और गैरेज बना हुआ था। मकान के भीतर एक बड़ा-सा सेहन भी था। मकान के पिछवाड़े मे और छोटे-छोटे मकान थे, जिनमे प्रतिमा देवी के सम्बन्धी तथा मुख्य नौकर-चाकर रहते थे। विमलानन्द, प्रतिमा देवी के देवर का लड़का, इन्हीं मकानों मे से एक मे रहता था। वह कुछ काम-धंधा नहीं करता था। जब जमींदारी थी, तब वह उसका प्रबन्ध करता था और अब वह प्रतिमा-देवी की चाकरी करता था। बाजार से सौदा-सुलफ ले आता था और खाने को तथा एक सौ रुपया महीना वेतन पाता था।

विमलानन्द की दो लड़कियाँ थीं। बड़ी लड़की सूर्य कुमारी का

विवाह हो चुका था। उसका पति पाकिस्तान बनने से पहले ढाका में रहता था। अब वह कलकत्ता में एक सरकारी कार्यालय में सुपरिन्टैन्डेन्ट था। वह अपनी गृहस्थी मज़े में चला रहा था।

विमलानन्द की दूसरी लड़की शशि कला पहली लड़की से पाँच वर्ष छोटी थी। वह अब पन्द्रह वर्ष की हो गई थी। कई वर्ष से विमलानन्द इस यत्न में था कि शशि की सगाई शिशिर कुमार से हो जाये। उसने इसमें प्रतिमा देवी को भी डालने का यत्न किया था। इस पर भी कुछ निश्चय नहीं हुआ था।

मकान की नीचे की भूमि पर एक बड़ा-सा कमरा था, जो दीवानखाने के नाम से विख्यात था। दीवानखाने में दरी, जाजम, कालीन, सोफा-सेट और कुर्सियाँ लगी हुई थीं।

दीवारों पर प्रफुल्ल बाबू और उनके पिता-पितामहों के चित्र लगे थे। अन्य सम्बन्धियों के भी चित्र थे। दीवानखाने की छत से एक बहुत बड़ा फानूस लटक रहा था, जिसमें पचास से ऊपर बिजली के बल्ब लगे थे। दीवारों के साथ-साथ भी बीसियों झाड़ इत्यादि लगे थे।

४

दीवानखाना वर-वधू के स्वागत के लिए लोगों से खचाखच भरा हुआ था। सब बहू को भेंट देने के लिए कुछ-न कुछ साथ लाये हुए थे और पहनाने को पुष्प-मालायें पकड़े थे। निकटस्थ सम्बन्धी भूषण और वस्त्र भी लाये थे।

शिशिर और अमृत को एक कौच पर बिठा दिया गया और बारी-बारी से सम्बन्धी तथा मित्रगण आते गये और इनके गलों में फूल तथा गोटे-किनारी की मालायें डालते गये।

अमृत यह सब-कुछ देख रही थी। उसके सम्मुख भेंट से मिल रही वस्तुओं का ढेर लग रहा था। मालाओं से उसका मुख फूलों के नीचे छुपा जा रहा था।

वह यह देख-देख अपने इस नाटक में सम्मिलित होने के लिए पश्चात्ताप करने लगी थी। वह विचार करती थी कि जब इन लोगों को पता चलेगा कि यह सब नाटक ही था तो ये कितने नाराज होंगे। वे सब प्रतिमा देवी को भी इस धोखा देने मे सम्मिलित समझेंगे।

बाहर से सब आये लोग विदा हो गए और केवल घर के लोग ही रह गए, तो परस्पर हँसी-ठट्ठा होने लगा। प्रतिमा देवी ने कहा, "यहीं भोजन कर लिया जाये। पश्चात् सब आराम करेंगे। ये लम्बी यात्रा से आये हैं?"

कचेरु मौसी का विश्वस्त नौकर था। उसने उसे आवाज दी, "ओ कचेरु! ये सब सामान उठाकर बहू के कमरे मे ले जाओ। देखो, भूषण गिरने न पायें और सब सामान वहाँ करीने से रखना। कोई वस्तु टूटे नहीं।"

कचेरु ने अन्य सेवकों को बुलाया और कहा, "यह सब सामान उठाकर बहू के कमरे में ले चलो।"

सामान इतना था कि तीन आदमी भी एकदम उठाकर नहीं ले जा सके। सब भूषण कचेरु ने स्वयं पकड़ लिए और अन्य भेंट का सामान उठवा-उठवाकर ले जाने लगा।

प्रतिमा ने शिशिर को सम्बोधन कर कहा, "आज तार वाला आया और जब बोला कि मेरा तार है तो मेरा हृदय धक-धक करने लगा। तार खोला तो अंग्रेज़ी में था। इस पर विमल को बुलाया और उसे इसको पढ़ने के लिए कहा। विमल ने जब बताया कि शिशिर बहू को लेकर आ रहा है तो बस मेरा मन प्रसन्नता से भर गया। उसी समय घर की सफाई, बहू के लिए कमरा, उसके लिए भूषण, कपड़े, मेहमानों के लिए जलपान की मिठाई और आमन्त्रित किये जाने वालों की सूची, तैयार होने लगी। यह समझो कि उस समय से मुझको एक क्षण का भी अवकाश नहीं मिला।"

शिशिर ने संकोच से कहा, "मौसी! बहुत कष्ट दिया है मैंने तुमको?"

"हट! तुम मेरे बेटे हो शिशिर। घर मे बहू आये और यह सब-कुछ

न हो, यह भला कैसे हो सकता था ? हाँ, एक बात का सन्देह था कि न जाने कैसी बहू ला रहे हो। पर बहू को देख मन प्रसन्नता से भर गया है।

"मैं आज समझी हूँ कि लड़के पढ जाने से मूर्ख नही बन जाते। तुम्हारा चुनाव मुझको बहुत पसन्द है। बहू सुन्दर स्वर्गीय देवी-सी प्रतीत होती है। क्यों विमल ! कैसी लगी है तुमको ?"

विमल सबसे पीछे खड़ा था और मन-ही-मन कुढ रहा था। उसकी लड़की शशि भी उसके पास खड़ी थी। प्रतिमा ने जब उनको देखा तो आश्चर्य प्रकट कर कहा, "ओ शशि ! तुम वहाँ क्यों खडी हो ? इधर आओ न। तुम्हारी तो चाची लगती है। आओ माँगो न चाची से कुछ।"

शशि आगे आ अमृत के पाव में बैठ गई। अमृत ने मोटर गाड़ी में आते हुए प्रतिमा देवी की बात सुनी थी और वह समझ गई कि यह वही लड़की है, जिसके साथ शिशिर का विवाह होने वाला था और कदाचित् अभी भी हो। वह कृष्ण वर्ण की थी और यूँ भी उसकी रूपरेखा कुछ भद्दी थी। अमृत ने समझा कि यदि यह लड़की जानती है कि शिशिर से उसका विवाह होने वाला था, तो इस समय कितना डाह हो रहा होगा इसको। इस कारण जब वह समीप आई तो उसने शशि को भूमि से उठाकर अपने समीप बिठा लिया और उसकी कमर में हाथ डालकर अपने साथ लगा लिया।

शशि की आँखे डबडबा रही थीं। इस पर अमृत ने अपनी उँगली से एक अँगूठी, जिसमें एक बड़ा-सा माणिक्य लगा था, उतारकर शशि की उँगली में पहिना दी और उसका मुख उठाकर, उसको प्यार देने लगी। विमलानन्द की बीवी प्रतिमा की बगल में बैठी थी। उसने बहू को पाँच सौ रुपये से ऊपर के दाम की अँगूठी देते देख कहा, "बहू बेचारी किसी निर्धन परिवार की लड़की प्रतीत होती है। वह भूषणों की कीमत नहीं जानती, अन्यथा इतने मोल की अँगूठी कभी न देती।"

विमलानन्द की बीवी ने तो यह बात अमृत की निन्दा के भाव से

कही थी, परन्तु प्रतिमा ने उसका भ्रम निवारण करने के लिए कह दिया, "नहीं, इससे यह तो प्रतीत नहीं होता। वह सब जानती और समझती है। इसका अर्थ उसके हृदय की उदारता ही माननी चाहिए। परीक्षा लेना चाहती हो? अच्छा लो देखो।

"बहू!" उसने अमृत की ओर देखकर पूछा, "इसको जानती हो बेटी? मेरे देवर की पोती है। इससे तुम्हारी लड़की-समान-ही हुई।"

"हाँ माँ जी! तभी तो इसको यह दे रही हूँ। मैं तो गले का हार देने वाली थी, परन्तु आपसे डरती थी।"

"क्यों डरने की कौन बात है इसमे?"

"यह अँगूठी तो छः सौ रुपये दाम की ही हो सकती है, परन्तु हार दो हजार रुपये से कम दाम का नहीं हो सकता। यदि आप कहें तो इसके गले में पहना दूँ?"

विमलानन्द और उसकी बहू अवाक् रह गए। प्रतिमा ने कह दिया, "बेटी! मैं बहुत प्रसन्न हूँ आज। तुम जिसको जो चाहो दे सकती हो। इस घर में आकर तुम्हारी पहली इच्छा तो पूरी होनी ही चाहिए। यह शशि तो अपनी ही लड़की है।"

अमृत ने अपने गले मे से एक हार उतार कर शशि के गले में डाल दिया और उसको गले लगाकर उसका मुख चूमते हुए कहा, "शशि बेटी! भगवान् करे तेरी मनोकामना पूरी हो।"

: ५ .

"मुझको यहाँ आने का भारी पश्चात्ताप और दुःख हो रहा है।" अमृत ने सोने के कमरे में पलंग पर बैठते हुए कहा। पलंग बहुत बड़ा था, परन्तु कमरे में एक ही था। शिशिर ने कमरे का दरवाजा भीतर से बन्द करते हुए कहा, "तुमने उस चुड़ैल को दो हजार रुपये का हार क्यो दे दिया है?"

जब शिशिर दरवाज़ा बन्द कर चुका तो अमृत पलंग से उठ खड़ी

हुई और शिशिर से बोली, "बैठिये, मैं अपना बिस्तर भूमि पर लगा लेती हूँ।"

"नहीं, भूमि पर तो मैं सोऊँगा। रानी जी के लिए पलग लगा है। सो रानी जी! सोइये।"

"शिशिर बाबू! मज़ाक बन्द। यह बैठिये-बैठिये की व्यर्थ की बात छोड़िये। अभिनय नहीं हो रहा। पर्दा गिर गया है। आप बैठिये तो भविष्य के विषय में रिहर्सल कर लें। यह अत्यावश्यक है। आपकी मौसी का व्यवहार सर्वथा अप्रत्याशित है। इतनी सुहृदयता, सहानुभूति और हृदय की आर्द्रता मैंने पहले कहीं नहीं देखी। मैं सुना करती थी कि बगाली स्त्रियाँ अति भावुक होती हैं। आज मैं इसका प्रत्यक्ष प्रमाण देख रही हूँ।"

"और बगाली युवकों के विषय में क्या सुन रखा है तुमने?" शिशिर ने मुस्कराते हुए पूछा।

"सुनेंगे आप?"

"हाँ, चाहो तो गाली भी दे सकती हो?"

"नहीं, गाली नहीं दे सकती। जहाँ इतनी सहानुभूति और प्रेम देखा है, वहाँ के लोगों को गाली देने में असमर्थ हूँ। इस पर भी सुन लीजिये। बगाली युवक षड्यन्त्रकारी, चचल, चपल और चतुर होते है।"

"यह तो बहुत प्रशसा बखान दी है, अमृत जी!"

"यह प्रशसा नहीं। न ही यह निन्दा है। ये तो साधन हैं, जिनको भले अथवा बुरे कामो में प्रयोग किया जा सकता है। षड्यन्त्र किसी भले काम के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है और कहीं डाका डालने के लिए भी। मैंने तो केवल विशेषण गिनाये हैं।"

"तब तो ठीक है। आओ षड्यन्त्र करें, अमृत जी की सहायता के लिए और मौसी को धोखा देने के लिए।"

"इसी बात का मुझको भारी दुःख है। यदि मालूम होता कि यहाँ आकर यह कुछ होने वाला है तो मैं कभी नहीं आती। मेरा हृदय उस

दिन की बात का अनुमान कर, जब आपकी मौसी को पता चलेगा कि हमने उनको धोखा दिया है, कॉप उठता है।"

"तो एक बात करो न।"

"क्या ?"

"हम वास्तव मे विवाह कर लें।"

"और आपके मित्र सुशील से दगा करें।"

"उसकी अनुमति ले लें।"

"नहीं, यह नहीं हो सकता। मै उनसे प्रेम करती हूँ।"

"वह क्या होता है ?"

"तो आप नही जानते ?"

"जानता हूँ। पसन्द की हुई वस्तु को प्राप्त करने की लालसा को प्रेम कहते हैं।"

"चलो ऐसा ही सही। मेरे भैया भी यही कहते थे। मैंने सुशील बाबू को पाने के लिए पसन्द किया है।"

"पसन्द तो परिस्थिति और ज्ञान-वृद्धि के साथ बदल जाती है। त सुशील बाबू की पसन्द भी बदल मकती है।"

अमृत खिल-खिलाकर हँस पड़ी। हँसने के पश्चात् वह कहने लगी, "अभी तक कोई ऐसी बात नहीं हुई, जिससे उनके स्थान आपको पसन्द करने लग जाऊँ। हाँ, यदि उनके स्थान आपकी मौसी को पसन्द करना होता और उनसे विवाह करने की बात हो मकती तो कदाचित् मान जाती। कठिनाई यह है कि विवाह का अभिनय आपके साथ खेल रही हूँ।"

शिशिर खिलखिलाकर हँस पड़ा। अभी तक दोनो खड़े थे। शिशिर ने हँसते हुए कहा, "तो क्या आज विवाद खडे-खडे ही चलेगा। तनिक बैठ जाइये और शान्त-चित्त से योजना बना लेते है। उसमे यह भी निश्चय कर लेंगे कि पलग पर कौन सोये।"

"तो बैठूँ कहाँ पर ?"

"पलग पर। जैसे रेल के डिब्बे मे एक ही सीट पर बैठे रहे है।"

"ठीक है।" दोनों पलग पर बैठ गए और बातचीत करने लगे, "देखो मेरी कथा तो वही है जो वास्तव मे है।" शिशिर ने कहा, "बात केवल तुम्हारे विषय में बनानी है। सो तुम्हारे कहने के अनुसार, तुम्हारे पिता सरदार वढियाम सिंह पजाब के विस्थापित व्यक्ति थे। मेरे रहने के स्थान के पड़ोस में रहते थे। तुम अपने पिता की अकेली सन्तान थीं, कॉलेज में पढती थीं। एकाएक तुम्हारे पिता का देहान्त हो गया और तुम निराश्रय रह गईं। मेरे से तुम्हारा परिचय कॉलेज का था। मैं पी०-एच० डी० की तैयारी के लिए कॉलेज में और पुस्तकालय में जाया करता था। तुमने मुझको वहाँ देखा था और मुझसे प्रेम करने लगी थीं। पिता जी के देहान्त के पश्चात् अकेला रहना कठिन था। इस कारण हमने तुरन्त विवाह करना उचित समझा। कोर्ट में विवाह कर लिया है। मैं अपनी पढाई में लीन हूँ, इस कारण तुमको अपनी माँ-तुल्य मौसी के पास छोड़ने आया हूँ। क्यों? ठीक नहीं है क्या?"

"हाँ, ठीक है।"

"मैंने मौसी से कहा है कि मुझको शीघ्र ही लौट जाना है। पाँच दिन तक यहाँ रहूँगा। महीने में एक दो दिन के लिए यहाँ आया करूँगा। यह तब तक चलेगा, जब तक मैं अपना 'थीसिस' यूनिवर्सिटी में भेज नहीं देता।"

"बहुत अच्छा है।"

"अब यह विचार करना है कि तीन महीने के पश्चात् कैसे यहाँ से भागना है?"

"यह तो समय आने पर विचार कर लेंगे। अभी यह बताइये कि एक ही कमरे में सोते हुए, भद्र पुरुषों की भाँति रह सकेंगे अथवा नहीं?"

"तुमने मुझको अभद्र कब से समझा है?"

"जब से आपने कहा है कि वास्तव में विवाह कर लें।"

"तो मैं अपना कहा वापस लेता हूँ, देवी जी।"

"हाँ, और क्षमा मागिये। यह कहना मात्र ही मित्र के साथ दगा

करना है।"

" ठीक ! अपराध हुआ । क्षमा-याचना करता हूँ ।"

इस पर दोनों हँस पड़े। अमृत ने कहा, "मैंने क्षमा किया, परन्तु एक शर्त पर। वह यह कि आप पलंग पर सोयेंगे और मैं भूमि पर सोऊँगी।"

"आपके कोमल शरीर को कष्ट होगा।"

"मैं रुई मे लपेटकर पाली नहीं गई। मै इस साधारण-सी बात को सहन कर सकती हूँ।"

"तो अच्छी बात है। सहन करो, परन्तु एक और बात है। यहाँ साँप बहुत है और भूमि पर सोना भय से रिक्त नहीं।"

"तो क्या यह पुरुषों के लिए नहीं?"

"साँप तो यह नहीं देखता कि पुरुष है अथवा स्त्री।"

"तो जब आप सोने की बात कर रहे थे, तब साँप कहाँ थे?"

"साँप तो थे और रात को निकलने की सम्भावना भी थी, परन्तु यह बात तो उसको ही कहनी चाहिए जो पलग पर सोने वाला है। जब यह निश्चय हो गया कि मैं ही पलग पर सोने वाला हूँ तो मैंने सचेत करना उचित समझा है।"

"यह तो एक विकट समस्या बताई है आपने। मुझको साँपो से अत्यन्त भय है।"

"तो बताओ कि अब शर्त का रूप क्या होगा?"

"मैं रात बिना सोये काट दूँगी।"

"नहीं अमृत! आधी रात तुम सो जाओ और आधी रात मै सो जाता हूँ।"

"हाँ, यह बात ठीक प्रतीत होती है।"

"अब कल की सुन लो। हम कई सम्बन्धियों के घर जायेंगे। वहाँ खाना-पीना, हँसी-मजाक होगा। एक-एक शब्द बहुत विचार कर कहना पड़ेगा।"

"यह मैं कर सकूँगी।"

"कुछ ऐसे भी सम्बन्धी और मित्र हैं, जो तुमको अबंगाली होने के कारण पसन्द नहीं करेंगे।"

"मैं उनको पसन्द नहीं करूँगी।"

"ऊ, हूँ! यह नहीं। वहाँ भी हमने नाटक खेलना है। तुमने उनके कटाक्षों की ओर ऐसे ध्यान नहीं देना, जैसे चलता हाथी कुत्तों के भौंकने की ओर अवहेलना से देखता है।"

"यह मैं कर लूँगी।"

"हाँ, तो यह बताओ। तुम कुछ गा भी सकती हो? हमारे समुदाय में लड़कियों का यह एक अत्यावश्यक गुण है।"

"कुछ गा-रो सकती हूँ। एक दिन आपकी मौसी जी को सुनाऊँगी।"

"नहीं। कल सायंकाल सब सम्बन्धियों की स्त्रियाँ आयेंगी। कदाचित् विमलानन्द की पत्नी इस बात को चलायेगी।"

"तो उसकी लड़की भी गा सकती है क्या?"

"हाँ, वह नृत्य भी करती है।"

"तो आपकी शशि से मेरा मुकाबिला होगा क्या?"

"हो सकता है।"

"यत्न करूँगी कि कुछ मुकाबिला कर सकूँ। परन्तु यदि मैं अच्छा गा और नाच न सकी तो घर से निकाल दी जाऊँगी क्या?"

"नहीं, यह नहीं। सब मुझको मूर्ख समझेंगे कि मैं एक ऐसी लड़की को पसन्द कर लाया हूँ, जो न गा सकती है, न नाच सकती है। बंगाली लड़कियों को कलामय होना ही चाहिए।"

"मैं बंगाली लड़की तो हूँ नहीं। इस कारण मेरे लिए रियायती अंक भी तो होने चाहिएँ।"

"वे मैं यत्न कर दिलवा दूँगा, परन्तु कुछ तो करना होगा। यदि बकरी की भाँति मैं-मैं ही करती रहीं तो फिर मैं क्या कर सकूँगा?"

"अच्छा तो अब सोना चाहिए। आप पहले सोयेंगे अथवा मैं?"

"नहीं तुम सो जाओ। मैं तुमको अढ़ाई बजे उठा दूँगा, तब तुम बैठना और मैं सो जाऊँगा।"

"अच्छी बात। शिशिर बाबू! स्मरण रखना। अभी रात के दस बजे हैं। ठीक अढाई बजे जगा देना। पश्चात् सात बजे तक आप सो सकेंगे। लैम्प जलता रहेगा और आप पलंग के पायँती बैठे रहेंगे।"

६

जब अमृत उठी तो दिन चढ चुका था और शिशिर कुमार उसके पाओं की ओर गाढी निद्रा में सो रहा था। वह समय पर न जाग सकने के कारण लज्जित हुई। वह उठी और पलंग से नीचे उतर गुसलख़ाने में स्नानादि के लिए चली गई।

प्रात. का अल्पाहार वहा ही, नौकरानी लेकर आई और शिशिर को पलग पर सोते देख सन्तोष अनुभव करने लगी। उसने बाबू को जगाया। शिशिर घबराया हुआ उठा, परन्तु अमृत को वहा न देख सन्तोष अनुभव करने लगा। उसने नौकरानी से पूछा, "यमुना! बहू कहा है?"

"स्नान कर रही है। मेरे आने से पूर्व ही वे स्नानादि के लिए चली गई थीं।"

"बहुत अबेरा हो गया है न?"

"नहीं बाबू! नई बहू है, सोने मे रात को देरी हो जानी स्वाभाविक ही है।" इतना कह यमुना ने कनखियो से शिशिर की ओर देखा। वह यमुना के कहने का अभिप्राय समझता था। इससे उसका मुख लाल हो गया। वह रात भर अपने सामने अमृत जैसी सुन्दर लडकी को निःसहाय पडा देख भाति-भाति के विचार करता रहा था।

अमृत थकी हुई थी और लेटते ही सो गई थी। वह कुछ काल तक तो उसके सुन्दर शान्त मुख को देख-देख प्रलोभन के सागर मे डुबकियाँ लेता रहा। पश्चात् वह विचार कर कि जब तक लैम्प जलता रहेगा, यह प्रलोभन उसकी आँखों के सम्मुख घूमता रहेगा, वह उठा और लैम्प का

स्विच ऑफ कर पलग पर अमृत के पाओं की ओर बैठकर विचार करने लगा, "शशि अमृत के सम्मुख अमावस की रात की भाति काली है। वह गाती अच्छा है, परन्तु गाने में ही पत्नी के सब गुण नहीं समा जाते।" वह विचार करता था कि अमृत से विवाह का यत्न करे अथवा नहीं। मन में सोचता था कि यह सुशील से दगा करना होगा। फिर विचार करता था कि पहले सुशील को नोटिस दे दे। पीछे अमृत से बात करें। परन्तु अमृत मानेगी क्या ? सुशील डाक्टर है, पाँच-दस हजार की आय करने वाला है। उसको छोड उस जैसे फक्कड़ को भला कैसे पसन्द करेगी वह ?

"यदि उसको बलपूर्वक अपने अधीन कर लूँ तो वह हल्ला कर देगी, जिससे न केवल वह बदनाम होगी, प्रत्युत् मौसी इतनी अपमानित होगी कि वह पुन मुझसे कोई सम्पर्क नहीं रखेगी।"

इसी प्रकार के विचारों में निमग्न उसको झपकी आने लगी। वह विचार-लोक से निकल स्वप्नलोक में जा पहुँचा।

पहाड़ों में नदी के किनारे फूलों की क्यारी में अमृत बैठी थी। वह उसके पास पहुँचा तो वह उठकर भाग खड़ी हुई। वह उसको पकड़ने के लिए उसके पीछे भागा परन्तु वह कमाल की भागने वाली निकली। वह पकड़ाई नहीं देती थी। वह उससे दूर चली जाती तो खड़ी हो जाती और उसकी ओर देखकर मुस्कराती। मानो उसको और आगे आने का आह्वान करती थी।

वह कभी नदी में स्नान करती दिखाई देती और कभी पहाड़ पर चढती हुई। वह उसके पीछे पागलों की भाति भागता फिरता था। जब वह थककर हताश हो जाता, तो वह खड़ी हो हाथ से अपनी ओर आने का सकेत करती। वह उत्साह से भर फिर उसकी ओर भाग खड़ा होता।

इस प्रकार के स्वप्नों में उसका पाँव फिसल गया और उसके पाँव को चोट आ गई। इस समय उसको यमुना जगा रही थी। जहाँ उसको चोट

आई थी, यमुना उसको उसी स्थान पर छूकर हिला रही थी।

शिशिर भी स्नानादि के लिए उठकर बाहर चला गया। अमृत स्नान कर लौटी तो जलपान के लिए मिठाई-दूध सामने रखा था और समीप यमुना खड़ी थी। अमृत ने पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा ?"

"सरकार, यमुना।"

"वे कहाँ गये है ?"

"स्नान करने।"

"तो जलपान उनके आने पर होगा। दूध ले जाओ, ठण्डा हो जायेगा। जब वे आयेंगे तो ले आना।"

यमुना गई तो मौसी आ गई। अमृत ने उठ मौसी के चरण-स्पर्श किये और मौसी ने जब शिशिर के विषय में पूछा तो अमृत ने बताया कि स्नान करने गए है।

"तो तुमको भूख लगी होगी ? तुम खाओ।"

"नहीं माँ !"

"माँ...!" प्रतिमा देवी ध्यान से अमृत का मुख देखती रह गई।

अमृत ने मौसी को इस प्रकार अपनी ओर देखते हुए पाया तो उसके चरणों की ओर देखने लगी। प्रतिमा ने उससे पूछा, "तो तुम मुझको माँ कहकर पुकारोगी ?"

"हाँ, यदि आप न नहीं करेगी तो।"

"मौसी क्यों नहीं ?"

"मौसी से माँ अधिक प्यार करती है और मै प्यार की भूखी हूँ।"

"सच ?" प्रतिमा देवी की आँखे तरल हो उठीं। उसने कहा, "तो फिर पुकारो। फिर पुकारो। मै 'माँ' शब्द सुनने की भूखी हूँ।" उसने अमृत को अपने समीप घसीटकर गले लगा लिया। उसने रोते हुए कहा, "बेटी अमृत !"

"हा मा !" अमृत भी इस स्नेहमयी के हृदय की हूक सुन आसू बहाने लगी थी।

इस समय शिशिर स्नान कर कपड़े पहन वहा आ गया और दोनों को इस प्रकार गले मिल आसू बहाते देख खिलखिलाकर हंस पड़ा। दोनों ने शिशिर को देखा तो एक-दूसरे को छोड़कर विस्मय में उसका मुख देखने लगीं। प्रतिमा ने कहा, "हँसे क्यों शिशिर? अपने विवाह के बाद आज पहली बार मैंने तुम्हारी बहू को माँ कहते सुन आत्म-तृप्ति अनुभव की है।"

"तो मौसी! इसको आशीर्वाद दो न। मा का यही तो कर्त्तव्य है।"

"हाँ।" प्रतिमादेवी ने अमृत के सिर पर हाथ रखकर कहा, "बैठो, सौभाग्यशालिनी हो। शिशिर के साथ तेरा जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध बना रहे।"

शिशिर फिर हँसा और कहने लगा, "मौसी! तथास्तु।"

"देखो शिशिर! तुम्हारी मैं मौसी हूँ और इसकी मा। समझे! यह होगी मेरी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी और तुमको मिलेगा केवल पाच सौ रुपया महीना।"

"तब तो मौसी मैंने इससे विवाह कर भूल की है न? मुझको जीवन-भर पश्चात्ताप लगता रहेगा।"

"मा जी!" अमृत ने बात बदल कर कहा, "मा जी! मुझको यहा आकर पता चला है कि आप इनका विवाह शशि से करने वाले थे। उस बेचारी को भारी निराशा हुई है। यदि आप अपनी सम्पत्ति में उसको मेरे जितना दे दें, तो मुझको बहुत प्रसन्नता होगी।"

"एक ही रात में उससे स्नेह जाग पड़ा है।"

"यह बात नहीं, मा जी! मैं समझती हूँ कि मैंने उसका सब-कुछ छीन लिया है और मैं हृदय से चाहती हूँ कि सब-कुछ उसके साथ बाट कर लूँ।"

"तो मुझको भी बाटना चाहती हो?" शिशिर ने मुस्कराते हुए कहा।

अमृत ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा। इस पर मौसी ने कह दिया,

"तब तो मुझको भारत सरकार का धन्यवाद करना चाहिए कि उन्होंने दो-दो विवाह रोक दिये हैं। पति तो बँट भी जायेंगे पर मै सास बँटना नहीं चाहती।"

इस पर तीनों हँसने लगे।

यमुना जल-पान का सामान ले आई तो तीनों जल-पान करने लगे। मिठाई खाते हुए प्रतिमा देवी ने कहा, "देखो बेटी अमृत! जो भगवान् करता है, हमारे कर्मानुसार ठीक ही करता है। मैं अपने भाग्य की सराहना करती हूँ कि शिशिर तुमको ले आया है और मुझको उस चुड़ैल को बहू बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। शशि को तो दुःख हुआ है अथवा नहीं, कह नहीं सकती। पर हा, विमलानन्द को भारी दुःख हुआ है। वह मेरी पूर्ण सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बनने वाला था और अब नहीं बन सकेगा।

"देखो शिशिर! तुम आज ही वेणी बाबू के पास चले जाओ। मैंने उनको अपनी वसीयत लिखने के विषय मे कहा हुआ है। उनको कहना कि वे आज शीघ्रातिशीघ्र मुझसे मिल ले, जिससे एक-दो दिन में वसीयत लिखकर रजिस्ट्री करा सकें।"

शिशिर अवाक् रह गया। अमृत प्रतिमा देवी का मुख बिटर-बिटर देखती रह गई। वह मन में विचार कर रही थी कि जब इस भली औरत को उनके धोखा देने का पता चलेगा तो इसको कितना दुःख होगा। वह चिन्ताग्रस्त चुप रही।

अब प्रतिमा ने अमृत को एक-दो बाते सायकाल के विषय मे बताईं। उसने कहा, "देखो बेटी! आज सायंकाल अपने सब सम्बन्धियो की स्त्रिया एकत्रित होगी। उनको भोजन दिया जायेगा और वे तुमको गाने को कहेंगी। हमारे यहा यह रिवाज है कि ऐसे समय बहू कुछ गाती है और पायल बाध नाचती है। इस पर सब सम्बन्धी-स्त्रिया बहू को शकुन देती है। सो बेटी! एक-आध पद किसी गीत का शिशिर से सीख लेना, तो भद्द नहीं होगी। नाचने की बात तो यह है कि पाव मे पायल बाध

कर तनिक खड़ी हो जाना, बस इतने में ही बात बन जायेगी।"

"पर मा ! आपके बेटा जी मुझको सिखायेंगे क्या ?"

"मैं कह दूँगी, 'गीत गोविन्द' में से एक-आध पद तुमको बता देगा।"

अमृत मुस्करा कर चुप कर रही।

इस पर प्रतिमा ने बात बदलकर कहा, "देखो शिशिर ! रात तुम लोगों के चले आने के पीछे विमलानन्द फिर आया था और कह रहा था कि जब तुमने एक पंजाबी लड़की को परिवार में लाने का दु:साहस किया है, तो मुझको अपनी सम्पत्ति अपने ससुराल के सम्बन्धियों में बाट देनी चाहिए। इसी कारण मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं वसीयत कर ही दूँ। इससे भी विमलानन्द को भारी निराशा होगी।"

"मौसी !" शिशिर ने कहा, "अब ज़माना बहुत जल्दी-जल्दी बदल रहा है। मैं समझता हूँ कि तुम्हारे देहान्त होने तक तो देश का कानून ऐसा हो जायेगा कि मृत व्यक्ति की सम्पत्ति की मालिक सरकार हो जाया करेगी।"

"क्यों ?"

"इस कारण कि जिसकी कमाई है, वही अधिकारी हो सकेगा। यदि तुम मेरे नाम वसीयत कर दोगी तो वह मुझको नहीं मिलेगी। उसके पैदा करने में मेरा हाथ नहीं और उसको मैं नहीं पा सकूँगा।"

"तो मेरी सम्पत्ति को पाने का कौन अधिकारी होगा ?"

"सरकार मालिक होगी।"

"सरकार ने इस सम्पत्ति के बनाने मे क्या किया है ?"

"सरकार ने देश में सुरक्षा का प्रबन्ध किया हुआ है। इस कारण वह सम्पत्ति के पाने की अधिकारी है।"

"उसके लिए मैं लगातार टैक्स दे रही हूँ।"

"वह काफी नहीं है।"

"तो और अधिक माग लिया जाता। किसने मना किया था सरकार को ?"

"सरकार को अब पता चल रहा है कि टैक्स काफी नहीं था। इस कारण तुम्हारे मरने पर, जो पहले नहीं लिया गया, तब ले लिया जायेगा।"

"देखो शिशिर! मैं बहुत पढी-लिखी स्त्री नही हूँ। इस पर भी तुमको बताना चाहती हूँ कि मैं इसको किस प्रकार समझती हूँ। जब मेरे पति ने जमींदारी अपने हाथ मे ली थी तो इन पर भारी कर्जा था। उन्होंने बहुत ही कजूसी से अपना निर्वाह कर जमीदारी का कर्जा उतारा और फिर विवाह कर लिया। विवाहित अवस्था में भी वे बहुत ही सादा जीवन व्यतीत करते थे और जो-कुछ वे इस प्रकार बचा पाते थे, कम्पनियों के हिस्से खरीद-खरीदकर मेरे हाथ में कई लाख की सम्पत्ति छोड गए। वह सम्पत्ति उन्होने मेरे नाम वसीयत कर दी। यदि तो उनकी कमाई पाप नहीं थी तो उनसे एकत्रित धन भी उनका अपना था और वे उसकी वसीयत करने का अधिकार रखते थे। जो-कुछ मुझको उस वसीयत से मिला है, वह मैने अपनी बुद्धि-बल से और भी अधिक कर लिया है। सब टैक्सादि देकर भी मैंने सम्पत्ति मे बढौती ही की है। अब जो वस्तु मैंने अपनी मेहनत और किफायतशारी से बनाई है, क्या उसको व्यय करने का मेरा अधिकार नहीं है? मैं उसको, जिसको चाहूँ, क्यो नहीं दे सकती?"

"मौसी!" शिशिर ने समझाने के लिए कहा, "उस धन को पैदा करने मे न तो तुमने कुछ किया है न ही मौसा जी ने कुछ किया है। वह तो मजदूरों की पैदा की हुई सम्पत्ति है। देखो टाटा कम्पनी के कितने के हिस्से हैं तुम्हारे?"

"दस लाख से ऊपर के होंगे।"

"ये दस लाख तब ही तो आमदन दे सकते हैं, जब मजदूर काम करें। इस कारण मजदूर ही उस आमदन के मालिक हो सकते हैं।"

"पर क्या तुम यह नहीं समझते कि मजदूर के हाथ मे जब औजार न हों तो वह कुछ भी पैदा नही कर सकता। उसके हाथ मे टाटा का स्टील

का कारखाना हम पैसा लगाने वालों ने दिया है। बिना कारखाने क्या पैदा कर सकते थे ?"

"फिर भी मजदूर को कम मिला है और पैसा लगाने वाले को अधिक। यह अन्याय हो गया है। इस अन्याय को सरकार सुध जा रही है।"

"पैसे वाले का सब कुछ छीनकर ?"

"जब तक वह जीता रहता है, वह खा-पी सकता है।"

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि किफायतशारी पाप हो गया। व्यर्थ शराब-मास में तथा मोटर, हवाई-जहाज में व्यय करना तो ठीक और टाटा जैसे कारखाने में लगाना, जिसमें सहस्रों मजदूर काम करते गलत हो गया। शिशिर ! यही पढाई कर रहे हो तुम ? क्या लाभ है पढाई करने का ?

"इस पर भी मैं एक बात कहती हूं कि जब तक तुम्हारी सर कानून नहीं बनाती, तब तक तो मुझे इसको ठीक हाथों में देने का प्र करना ही चाहिये। आज वेणी बाबू से मिलकर वसीयत का कर दो।"

शिशिर चुपचाप जलपान करने में लगा रहा। वह मौसी जैसी शिक्षित स्त्री को इस प्रकार युक्ति करते देख चकित था। मौसी के व ने उसकी विचार-शक्ति को उत्तेजित कर दिया था और अब वह वि करने लगा था कि क्या देश की सब सम्पत्ति सरकार के हाथ में दे ठीक होगा। यदि किसी भी व्यक्ति को धन एकत्रित करने की स्वी नहीं होगी तो लोग मेहनत करेंगे और फिर जितना कुछ पैदा उसको क्यों खा-पी नहीं जायेंगे ? यदि कहीं उनकी आवश्यकत अधिक उनके पास आया तो वे व्यर्थ की बातों में क्यों व्यय नहीं करें उसके कान मे, उसकी अनपढ मौसी का यह कहना रटक रहा थ क्या ऐश-आराम में धन व्यय करने से टाटा जैसी कम्पनियों मे लगा

उसको चुप देख प्रतिमा देवी ने कहा, "वेणी बाबू से कहना मेरी सम्पत्ति की सूची उनके पास है। उसमे से एक सहस्र रुपया मासिक तुमको और एक सहस्र रुपया अमृत को आज ही से मिला करेगा और मेरे मरने के पश्चात् आधी सम्पत्ति तुमको और आधी बहू को।"

इस पर अमृत ने कहा, "मा जी! सारी इनके नाम ही क्यो नहीं कर देते। मुझको तो ये जो मागूंगी, दे ही देंगे।"

इस पर प्रतिमा ने कहा, "ठीक है। मैं जानती हूँ कि तुमको भी जो कुछ दूँगी, आवश्यकता पड़ने पर शिशिर को दे ही दोगी। इस कारण मै तो तुम दोनो को ही दूँगी।"

. ७ .

शिशिर पाच दिन तक बर्दवान मे रहा। इन दिनों उसने मौसी की वसीयत लिख-लिखवा कर रजिस्ट्री करवा दी। इस काम में विमलानन्द को सम्मिलित नहीं किया गया। शिशिर ने कई बार कहा था कि कुछ तो विमलानन्द और उसके बच्चो के लिए भी लिख दिया जाय, परन्तु प्रतिमा देवी मानी नहीं। ज्यूँ-ज्यूँ विमलानन्द, शिशिर और अमृत की निन्दा करता था, वह उसके विरुद्ध होती जाती थी।

पहली ही सायकाल, जब परिवार की सब स्त्रियाँ एकत्रित हुई थीं और भोज हो चुका तो विमला नन्द की बीवी ने अमृत की हँसी उड़ाने का यत्न किया। उसने कहा, "हमारा परिवार बर्दवान में एक शिष्ट और सभ्य परिवार माना जाता है। शिशिर ने बाहर की कन्या को इसमे लाकर परिवार की प्रतिष्ठा पर मैल लगाने का यत्न किया है।"

विमलानन्द की पत्नी, प्रतिमा देवी से ओझल होकर, परन्तु उसको सुनाकर कह रही थी। दूसरी स्त्रियाँ कुछ खुशामद के भाव से और कुछ तमाशा देखने के विचार से कह रही थीं, "नहीं-नहीं, शिशिर इतना मूर्ख नहीं हो सकता।"

"यदि वह बहुत ही पढ़ी-लिखी और सभ्य है तो गाना तो जानती ही

होगी ?"

"हा-हा, जरूर जानती होगी।" सबने कह दिया और पश्चात् बहू से गाने का अग्राह करने लगीं।

अमृत ने एक दो बार कहा, "मुझको गाना-बजाना ठीक नहीं आता। आप सब क्षमा करें।"

इस पर तो विमलानन्द की स्त्री ने कह दिया, "बहू! यह तो हमारे यहा का रिवाज है। यह करना ही होगा। तुम बेसुरा गाओगी तो हम हँसेंगी और सबका चित्त प्रसन्न होगा और फिर हम सब तुमको आशीर्वाद देंगी।"

अमृत देख रही थी कि विमलानन्द की स्त्री का व्यग सुन प्रतिमा-देवी का मुख मलिन हो रहा है। प्रतिमादेवी ने कहा, "देखो शशि की मा! यदि बहू नहीं जानती तो उसकी हँसी उड़ाने की आवश्यकता नहीं। वह नहीं गायेगी।"

अमृत ने देखा कि यह कहते-कहते प्रतिमा देवी की आखों में आसू भर आये थे। यह देख अमृत ने कहा, "मा जी! आप व्यर्थ दुखी होती हैं। मैं गाती हूँ।"

"नहीं बेटी! तुम नहीं गाओगी।"

"मा जी! तनिक सुनिये। मैं कुछ तो गा सकूँगी। बहन!" उसने शशि की मा को कहा, "तो लाओ पायल मैं नाचूँगी। हा, तो मेरे नाचने के साथ मृदग कौन बजायेगा ?"

"तुम्हारे जेठ बजायेंगे।" शशि की मा का अभिप्राय विमलानन्द से था ?

इस पर प्रतिमा देवी ने कहा, "उसको लज्जा नहीं आयेगी, स्त्रियों में बैठ बजाते हुए ?"

"चाची! जेठ ही तो हैं। बहू बिना मृदग के नाच जो नहीं सकती।"

"हा, बुला लो जेठ जी को। मैं तो उनकी लड़की समान ही हूँ। वे

भी देख लेंगे तो क्या होगा ?

"मा जी। मैंने आज एक कमरे मे तानपूरा पड़ा देखा था। वह मँगवा दीजिये।"

"तो तुम तानपूरे पर गाओगी ?"

"क्या हानि है ?"

प्रतिमा अवाक् बैठी रह गई। विमलानन्द की स्त्री ने इसको केवल धमकी ही समझा। उसने शशि को कहा, "बेटी शशि! अपने पिता जी को बुला लाओ और उनको कहना कि अपनी मृदंग भी लेते आवें और तुम अपना तानपूरा उठा लाओ।"

शशि को भी तमाशा सूझने लगा था। वह भागी-भागी गई और अपने पिता को बुला लाई। विमलानन्द अपना मृदंग उठा लाया। शशि तानपूरा लिये हुए आ पहुँची। प्रतिमा ने यमुना को आवाज दे बुलाकर कहा, "यमुना जाना, शिशिर बाबू को कहना कि अपना हारमोनियम लेकर आ जाये।"

"हारमोनियम का क्या होगा, चाची! तानपूरे से गाने वाले हारमोनियम से नहीं गाते।" विमलानन्द ने कहा।

"वह तो तुम्हारी मृदग स्वर करने के लिए मँगवा रही हूँ।"

अमृत हँस पड़ी। वह हँसकर बोली, "जेठ जी। मन्द्र धैवत् पर स्वर कर लीजिये।"

"मन्द्र धैवत् ? यह कहा से लाऊँ।"

"तभी तो मा जी हारमोनियम मँगवाने लगी हैं। अनाडी लोगों के लिए ही तो हारमोनियम बनाया गया है।"

विमलानन्द का मुख क्रोध से लाल हो गया। इस पर अमृत ने कहा, "मैं तो आपकी बेटी हूँ, जेठ जी! लीजिये मै बताती हूँ।"

उसने तानपूरा लेकर मन्द्र धैवत पर स्वर कर दिया। विमला नन्द ने दो मिनट मे तानपूरा स्वर होते देख समझ लिया कि कोई अनाड़ी लड़की नहीं है। परन्तु उसकी स्त्री ने उसके मन के भावो को न समझ कह

दिया, "आप पजाबी लड़कियों की फूँक फाक नहीं जानते। आप मृदंग ठीक करिये।"

विमलानन्द चुपचाप मृदग ठीक करने लगा। इस समय शिशिर हारमोनियम लेकर वहा आ पहुँचा। हारमोनियम बजा तो मृदग स्वर हुई।

इस समय तक तो प्रतिमा देवी का भी साहस बँध गया था। वह समझ गई थी कि उसकी बहू कुछ तो गा ही देगी। उसने मुस्कराते हुए अमृत की ओर देखा तो अमृत ने प्रतिमा देवी के चरणो में सिर रखकर कहा, "मा जी! आशीर्वाद दीजिये।"

प्रतिमा ने उसके सिर पर हाथ फेरा तो उसने तानपूरा उठाकर स्वर भरना आरम्भ कर दिया।

'स-निरेस-नि रे गा रे ग प-म् ग रे ग प म् ग म्ग-स नि रे स।
इतना अलाप होने पर विमलानन्द ने कहा, "चाची! बस अब शकुन डालो। माना बहू गा सकती है।"

"जेठ जी! अब सुन लीजिये। कुछ आपसे मागूँगी नहीं।"

अमृत ने शुद्ध कल्याण में आलाप जारी रखा "नि रे स। नि रे ग। रे ग प ध नी स स नि ध प म् ग स म्ग स। नि रे स आ आ ।'

पन्द्रह-बीस मिनट के आलाप चलने के पश्चात् गीत आरम्भ हुआ। उसने गाया।

"रे मन मूर्ख जन्म गँवायो।
करि अभिमान विषय रस राच्यो
स्याम सरन नहीं आओ, रे मन मूर्ख जन्म गँवायो।
ये ससार फूल सेमर को
सुन्दर देख लुभायो।
चाखन लागयो उड़ि गयो रुई
हाथ कछु नहीं आयो। रे मन मूर्ख ।
का भयो अब का मन सोचे

पहले नहीं कमायो
सूरदास भगवंत भजन
बिन सिर धुनि पछतायो । रे मन मूर्ख.. ।

बंगला समाज में कुछ-न-कुछ ज्ञान संगीत का बहुतों को होता है। इससे जिस ब्यग से वार्तालाप आरम्भ हुई थी, वह तो आलाप आरम्भ होते ही समाप्त हो गई थी। पश्चात् ज्यों-ज्यों बोल, बोल-तान, तान और लय निखरने लगी, त्यों-त्यों सुनने वाली स्त्रियाँ मुग्ध हो सुनती गई। किसी की इच्छा नहीं होती थी कि बहू को बस करने को कहे। पौन घण्टे के पश्चात् सगीत समाप्त हुआ। विमलानन्द मृदग बजाता-बजाता थककर चूर हो गया था और जब अमृत ने पाओं पर पायल बाँधने आरम्भ किए तो वह बोला, "भाभी! अब और मृदग बजाना मेरे बस की बात नहीं।"

"जेठ जी! यह भी देख लीजिये। आपको घर की बहू को नचाने का बहुत शौक था न?"

प्रतिमा तो गीत सुन मुग्ध हो रही थी। वह इतनी गुणवती बहू को पा, फूली नहीं समाती थी। जब विमलानन्द उठकर भाग गया तो उसने अमृत से कहा, "बहू, अब बस करो। तुम्हारा नाच देखेंगे, परन्तु किसी और दिन, जब कोई योग्य मृदग और वायलिन बजाने वाला मिल जायेगा। मैं देख रही थी कि विमलानन्द पीछे छूटता जाता था।"

शेष दिन सरलता से व्यतीत हो गए। प्रतिमा देवी बहू पर बलिहारी हो रही थी। शिशिर कुमार अमृत-जैसी बहू का पति होने पर (यद्यपि अभिनय मात्र में ही) अभिमान अनुभव करता था। विमलानन्द के अतिरिक्त अन्य सब सम्बन्धी शिशिर को ऐसी बहू पाने पर भाग्यशाली मानते थे।

जाने से एक दिन पूर्व, रात के समय, शिशिर ने अमृत से कहा, "देखो अमृत! आज मौसी ने वसीयत रजिस्ट्री करवा दी है और उन्होंने तुमको अपनी आधी सम्पत्ति का उत्तराधिकारी माना है।"

"इसलिए ही न कि वे मुझको अपनी बहू मानती हैं। जब वे जान जायेंगी कि मैं उनको धोखा दे रही थी, तो वे मुझसे घृणा करने लगेंगी और वसीयत बदल डालेंगी।"

"मेरा तो यहाँ से पत्ता बिलकुल कट जायेगा। मैं मुख दिखाने लायक नहीं रहूँगा।"

"तो शिशिर बाबू! यह बात पहले विचार करनी थी।"

"मुझको क्या मालूम था कि तुम इतनी भली प्रकार नाटक खेल सकोगी। तुमने मौसी के आदर करने मे तो वास्तविकता को भी पीछे डाल दिया है। तुम उनके सामने इतनी सरल और भोली बन जाती हो कि मौसी तुम पर न्योछावर होने लगती हैं। इस पर मैं क्या जानता था कि तुम ऐसा सुन्दर भजन गाओगी कि मुहल्ले-भर की स्त्रियाँ तुम पर लट्टू हो जायेंगी। यदि यह जानता कि तुम इतने गुण रखती हो, तो सुशील से तुम पर डोरे न डालने का वचन न करता।

"मौसी कहती हैं कि जब तुम उनको माँ कहकर पुकारती हो तो उनके स्तन स्पन्दन करने लगते हैं। यदि तुम बच्ची होतीं तो तुमको वे दूध पिलातीं।"

"सत्य?" अमृत ने विस्मय से पूछा और खिलखिलाकर हँस पड़ी। शिशिर ने फिर कहा, "जानती हो आज मौसी ने मुझसे क्या कहा है? वे कहने लगीं, 'तुम इतनी सुन्दर, सुघड़, सुशील और प्यारी बहू को छोड़कर कैसे जा सकते हो? बहुत कठोर हो तुम।'

"मैंने बहुत कठिनाई से यह समझाया, 'मौसी! मैं उसके सुख के लिए ही यह पढाई कर रहा हूँ। मैं बहुत धन कमाऊँगा और अमृत के चरणों में लाकर रख दूँगा।'

"इस पर वे पूछने लगीं, 'क्या जो कुछ मैंने दिया है, वह पर्याप्त नहीं?'

'नहीं मौसी! वह इससे भी अधिक की अधिकारिणी है।'

"इससे मौसी को सन्तोष हुआ। पश्चात् उसने पूछा, 'अब तब

आओगे ?'

"मैंने कहा, 'एक मास के पश्चात् ।' "

यह सब सुनकर अमृत गम्भीर हो गई । वह आँखें नीची किये हुए बोली, "देखिये शिशिर बाबू ! मुझको आपकी असुविधा और दुःख का इतना विचार नहीं होता, जितना माँ जी के दुःख का । मैं समझती हूँ कि यदि मैं उनका हृदय से आदर न करती होती तो यह नाटक इतनी चतुराई से सम्पन्न न कर सकती । मैं वास्तव में उनका आदर करती हूँ । साथ ही इस बात का मुझको पता है कि मैं सुशील बाबू से प्रेम करती हूँ ।"

पाँच रातें, अमृत के पलंग पर उसके पाँवों की ओर पड़े-पड़े शिशिर ने अपने मन पर दृढ़ नियन्त्रण रख अपने मित्र की अमानत पर डाका डाले बिना व्यतीत कर दीं । अमृत यद्यपि अपने मन की दृढ़ता पर विश्वास रखती थी तो भी शिशिर का अपने मन पर काबू देख बहुत प्रभावित हुई थी । वह समझती थी कि शिशिर ने उसके साथ इस अभिनय में भाग लेकर उस पर असीम अहसान किया है ।

अगले दिन जब वह विदा हुआ तो अमृत और मौसी उसको स्टेशन पर छोड़ने गये । अमृत, मौसी के आग्रह कि वह बहू को भूल न जाये और जाते ही तार भेजे, तथा शीघ्र ही आने का यत्न करे, को सुन रो पड़ी ।

सब ने इन आँसुओं को वियोग के कारण समझा था, परन्तु वास्तविक बात तो अमृत भी नहीं समझी थी । वियोग तो यह था नहीं । मिलन ही नहीं था तो वियोग कैसा ?

स्टेशन से लौटते समय मार्ग-भर अमृत के आँसू निकलते रहे । प्रतिमा उसको ढाढस बँधाती रही । घर पहुँचकर वह उसको अपने कमरे में ले गई और गोदी में लेकर प्यार देती रही । इससे तो अमृत फूट-फूट कर रोने लगी । मौसी ने उसको शीतल जल पिलाया और उसके कमरे में ले जाकर पलंग पर सुला कर कहा, "अमृत बेटी ! सो जाओ । सोने

से चित्त को शान्ति मिलेगी।"

८

जब अमृत सोकर उठी तो उसको अपने पिछली रात के व्यवहार पर अचम्भा हुआ। वह सोचती थी कि वह क्यों रोई थी। यह स्मरण कर कि उस समय वह अपना रहस्य बताने ही वाली थी, काँप उठी।

इस पर भी वह अपनी विकट परिस्थिति पर विचार किये बिना नहीं रह सकी। उसने पूर्ण घटना को अपने मन में दुहराया और उस पर मनन करने लगी। वह अब पिछली बात पर पश्चात्ताप करना व्यर्थ मान वर्तमान विकट परिस्थिति से निकलने का उपाय सोचना चाहती थी।

एक मार्ग तो था ही। वह इस वर्तमान सुख और सुविधा के जीवन को तीन-चार महीने तक भोग कर चुपचाप यहाँ से भाग जाये, परन्तु वह विचार करती थी कि इसका परिणाम क्या हो सकता है। उसने पिछले पाँच दिन में प्रतिमा देवी के स्वभाव को समझा था। वह अति भावुक स्वभाव रखती थी। उसने देखा था कि केवल माँ का सम्बोधन सुन वह पसीज पडी थी। अपनी बहू पर सगीत-विद्या से अनभिज्ञता का लाछन सुन वह रो पडी थी और फिर उसको अच्छा गाते सुन वह गद्‌गद प्रसन्न हो उठी थी। ऐसी स्त्री के सब सुख-स्वप्न भग होंगे तो, उसको भय हो रहा था कि उसके हृदय की धडकन बन्द हो जायेगी। यदि कहीं ऐसा हुआ तो इस सब का पाप उसके सिर ही होगा।

सुख-आराम से जीवन व्यतीत कर रही इस भली स्त्री के जीवन में वह अकारण आ टपकी है। इससे उसको जो भी दुख और हानि होगी, उसका पूर्ण उत्तरदायित्व उस पर ही होगा।

तो फिर क्या करे? इस स्त्री को अपनी सास स्वीकार कर ले। यह हो सकता है शिशिर से विवाह स्वीकार करने पर। पहली रात तो उसको कुछ ऐसा प्रतीत हुआ था कि वह विवाह का इच्छुक है, परन्तु शेष चार रातें वह सर्वथा शान्त और धीर-चित्त प्रतीत होता रहा था।

यदि यह मान भी लिया जाये कि शिशिर विवाह पर राजी हो जावेगा तो क्या यह ठीक है ? प्रश्न तो यह था कि सुशील के साथ वचन का क्या हो ? क्या वह शिशिर के साथ प्रेम कर सकेगी।

इस समय वह शिशिर और सुशील में तुलना करने लगी थी। शिशिर एम० ए० इतिहास मे था और सुशील एम० बी० बी० एम० और एक हस्पताल मे नौकर, हजार-दो हज़ार रुपये मासिक की आय रखने वाला। दूसरी ओर शिशिर अब मौसी की वसीयत के पश्चात् एक धनी आदमी था। इस आय के भरोसे वह सुशील को नौकर रख सकता था। इस पर भी सुशील शिशिर से अधिक योग्य और आकर्षक था। सुशील डॉक्टर था और शिशिर कुछ भी नहीं।

यह सब ठीक होने पर भी शिशिर की मौसी सुशील की माँ से अधिक आकर्षक थी। यह ठीक था कि विवाह तो शिशिर अथवा सुशील से होना था, परन्तु विवाह के पश्चात् क्या पति के माता-पिता से कोई सम्पर्क नहीं रहना, एक के माता-पिता घृणा करेंगे और दूसरे की माता वात्सल्यता से ढाँप लेगी।

वह सोचती थी कि क्या विवाह के लिए किसी का डॉक्टर होना आवश्यक है ? वह अपने इस प्रश्न पर हँसने लगी। भला पति का डॉक्टर होना किस प्रकार उसके अच्छे पति होने में, किसी प्रकार से भी, कारण हो सकता है ?

शिशिर ने बताया था कि उसकी मौसी ने एक सहस्र रुपया उसको और एक सहस्र रुपया अमृत को मासिक देने की आज्ञा बैंक वालों को दे दी है। इसके अतिरिक्त मौसी के देहावसान पर वह शिशिर के साथ लाखों रुपयों की सम्पत्ति पायेगी। वह इससे अपने को पूर्ण रूप से पराभूत हो गई अनुभव करती थी।

सब लेखा-जोखा करने पर वह इस परिणाम पर पहुँची थी कि सुशील और उसके माता-पिता को एक पलड़े मे डाल दें और शिशिर और उसकी मौसी को दूसरे पलड़े मे, तो शिशिर वाला पलड़ा अधिक भारी

सिद्ध होगा ।

शिशिर की मौसी, उसकी धन-सम्पदा, उसका अपना चरित्र और उसका अपना व्यवहार ही इतने श्रेष्ठ थे कि सुशील के सब गुणों को ढाँप सकते थे। सुशील के अपने गुण उसके माता-पिता के अवगुणों से कुछ कम ही हुए थे।

यह सब कुछ होने पर भी वह विचार करती थी कि क्या वह सुशील के स्थान पर शिशिर से प्रेम कर सकती है? इस समय उसको हरभजन सिह और फिर शिशिर की प्रेम की व्याख्या स्मरण हो आई। उनका कहना था कि प्रेम पसन्द को कहते हैं और पसन्द समय, परिस्थिति, आवश्यकता और ज्ञान-वृद्धि के साथ-साथ बदलती रहती है। तो क्या उसकी परिस्थिति ऐसी बदली है कि उसकी पसन्द में अन्तर आ गया है? इस प्रश्न का उत्तर वह नहीं पा सकी।

जहाँ तक उसका जीवन था, वह सरलता के साथ चलने लगा। प्रात: उठकर वह प्रतिमा देवी से मिलने चली जाती। प्रतिमा देवी उससे बहुत पहले जाग जाया करती थी और जब अमृत आती तो वह स्नानादि से निवृत्त हो पूजा भी कर चुकी होती थी। अमृत पूजागृह के बाहर ही मौसी की प्रतीक्षा करती और जब वह पूजा से उठ बाहर निकलती तो उसके चरण-स्पर्श करती और आशीर्वाद लेती। पश्चात् वह अपनी दिन-चर्या आरम्भ कर देती। स्नान कर प्रात. का अल्पहार ले वह सगीत का अभ्यास करने लग जाती। उसने मौसी से कहकर एक मृदग बजाने वाले को बीस रुपया मासिक पर नियुक्त कर लिया था। वह नित्य एक घण्टा अमृत के अभ्यास के समय आता था और मृदग बजाकर उसका साथ देता था। पश्चात् वह कोई पुस्तक पढती। मध्याह्न का भोजन वह प्रतिमा देवी के साथ करती। भोजनोपरान्त वह प्रतिमा देवी के कमरे मे ही चली जाती और वहाँ पर इधर-उधर की बातें होती रहतीं।

मध्याह्नोत्तर दो बजे के लगभग वह और प्रतिमा देवी आराम करतीं। साय पाँच बजे चाय पी जाती और पश्चात् दोनो बाजार करने अथवा

घोड़ा-गाड़ी में घूमने निकल जाती। सायंकाल का खाना सबके साथ होता। अन्य सम्बन्धी भी, जो आना चाहते, आ सकते थे। इस समय परिवार-सम्बन्धी बातें होती रहतीं।

इस प्रकार दिन व्यतीत हो रहे थे। अमृत को वर्दवान आये एक मास हो गया था। एक रात भोजन के समय प्रतिमा देवी ने विमलानन्द को कहा, "विमल ! सुनो। मैं सुन रही हूँ कि तुम नौकरों और सम्बन्धियों में वहू की निन्दा कर रहे हो। मैं तुमको बताना चाहती हूँ कि शिशिर ने इससे विवाह किया है। धर्म की वेदी पर बैठकर इसको अर्धांगिनी बनाया है। अतएव अच्छी अथवा बुरी, यह अब मेरे परिवार का अंग है। इसकी निन्दा मेरी निन्दा है। जान गये हो?"

"मैंने वहू की निन्दा नहीं की चाची ! मैं एक बात पसन्द नहीं करता। वह है एक पंजाबी लड़की का बंगाली के घर में आना। विशेष रूप में जब बंगाली लड़कियाँ कॅवारी बैठी हैं। इसमें कौन बुरी बात कह रहा हूँ।"

"तो तुमको यह घर पसन्द नहीं रहा न? तो जाओ तुम, जहाँ तुमको पसन्द आये चले जाओ।"

"चाची ! यह तुम अपने साथ ही अन्याय नहीं कर रहीं, परन्तु अपने सम्बन्धियों के साथ और विशेष रूप में बंगाली-संस्कृति के साथ भी अन्याय कर रही हो।"

"मेरे साथ जो अन्याय हुआ है, उसकी तुमको चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। मैं सम्बन्धियों से भी यही कहती हूँ कि मैं उनको किसी प्रकार से हानि नहीं पहुँचा रही। इस पर भी यदि वे मेरे और वहू के कारण किसी प्रकार की हानि हो रही समझते हैं, तो वे यहाँ न आवें। मैं उनका मान करती हूँ, परन्तु मैं चाहती हूँ कि वे भी मेरा मान करना सीखें। रही संस्कृति की बात। वह मेरी समझ में नहीं आ रही। बंगाली संस्कृति में और इस लड़की की संस्कृति में क्या अन्तर है? मुझको तो कुछ भी अन्तर दिखाई नहीं पड़ रहा।"

"देखो चाची ! हमारी एक भाषा है, उसमें एक महान् साहित्य है। उस साहित्य के अनुरूप हमारा रहन-सहन है। हमको इसकी रक्षा करनी है। यदि हम अपने लड़के और लड़कियाँ पंजाब, काश्मीर और राजस्थान में बाँटने लगें, तो सब अपनी बातों का मलियामेट हो जावेगा। हमारी भाषा बिगड़ जावेगी। हमारा साहित्य पतन को प्राप्त होगा और हमारे रस्मो रिवाज, जिनसे हम बंगाली प्यार करते हैं, भ्रष्ट हो जावेंगे।"

"मैं ऐसा नहीं मानती। मैं तो यह समझती हूँ कि बंगला भाषा संस्कृत भाषा का अपभ्रंश है। एक अपभ्रंश से बिगाड़ होगा तो क्या हानि है! अपभ्रंश तो अपभ्रंश ही है। छः आने न सही, दस आने सही। इसी प्रकार साहित्य और रस्मो-रिवाज की बात समझ लेना। कुछ और बदल जायँगी तो कौन अनर्थ हो जावेगा।

"यह कुछ नहीं। देखो मैं शशि के विवाह का प्रबन्ध कर रही हूँ। यदि तुमने अपने परिवार की ही निन्दा आरम्भ की तो इससे तुम्हारी और तुम्हारी शशि की भी निन्दा हो जायेगी।"

"चाची! तुम तो व्यर्थ में रूठ रही हो। मैं निन्दा नहीं कर रहा। हमारे समाज का प्रत्येक सदस्य अपने समाज के सदस्यों की हिमायत करना चाहता है। जब हम किसी बंगाली को अबंगाली की हिमायत करते देखते हैं, तो उसको हम पसन्द नहीं करते।"

"वे, जो ऐसा करते हैं, सब मूर्ख हैं विमल! मैं नहीं चाहती कि जो मेरे साथ सम्बन्ध रखते हैं, वे भी मूर्खता का व्यवहार करें। बंगाली, पंजाबी, गुजराती, मराठी सब मनुष्य हैं। एक ही देश और शासन में रहने से परस्पर एक-दूसरे के बहुत समीप हैं।

"यूँ तो एक परिवार के लोग दूसरे परिवार वालों से पृथक् हैं ही, परन्तु इसके यह अर्थ नहीं कि एक परिवार की संस्कृति दूसरे परिवार की संस्कृति से भिन्न है। मैं तो भेद-भाव भाषा के आधार पर नहीं मानती। एक मनुष्य कोई भी दूसरी भाषा सीख सकता है। यदि भेदभाव हो सकता है तो वह आचार और व्यवहार के आधार पर होना चाहिए। भेद-

भाव होना चाहिए श्रेष्ठ और दुष्ट मे, योग्य और अयोग्य मे, मनुष्य और पशु में। यह बर्दवान वाले कलकत्ता वालो के, पटना वाले राची वालो के अथवा लखनऊ वाले इलाहाबाद वालो के विरुद्ध होने लगे तो देश का सत्यानाश तो होगा ही, साथ ही मानवता मे पतन भी आयेगा।"

"चाची! तुम जग से न्यारी होकर नहीं रह सकतीं।"

"बस। इस विषय मे और बात की आवश्यकता नहीं है। मेरी बुद्धि की यही सीमा है। तुम जग में रहो अथवा जग से बाहर रहो। यह तुम्हारा काम है। मै अपने परिवार मे रहना चाहती हूँ। मेरे परिवार का हित श्रेष्ठ और योग्यजनो की पक्ति में रहने से है।"

इस वार्तालाप का प्रभाव अमृत पर भिन्न प्रकार का हुआ। वह समझी थी कि कुछ तो बात है, जिसके कारण सुशील की माता और अब यह विमलानन्द बगाली-समाज को उसके समाज से भिन्न समझता है। इस पर उसका ध्यान अपने पिता के मित्र सरदार कर्तार सिंह के विचारो पर चला गया। वह हिन्दू-समाज से सिख समाज को भिन्न मानता था। वह विचार करती थी कि क्या ये दोनो ठीक नहीं हैं? इस प्रश्न ने उसको इस विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के लिए विवश कर दिया। उस रात वह अपने पलग पर लेटी-लेटी करवटें बदलती रही और विचार करती रही। उसका मन कर्तार सिह, सुशील की माता तथा विमलानन्द के विचारों को ठीक मानने के लिए तैयार नही होता था। वह यह जानती थी कि सिखो मे तथा जैनियो में इसी प्रकार बगालियो में तथा पंजाबियो में, भिन्नता तो है, परन्तु इस भिन्नता के कारण क्या एक दूसरे को सम्पर्क मे नहीं आना चाहिए।

सिख, जैन, बौद्ध, आर्यसमाजी इत्यादि भिन्न-भिन्न होते हुए भी क्या एक नहीं हैं, तो कैसे?

इसी प्रकार पजाबी, बगाली, गुजराती इत्यादि ये सब एक नहीं हैं? उसको इसी प्रकार की समस्या ब्राह्मणो और क्षत्रिय तथा वैश्यो मे दिखाई देती थी। छूत और अछूतो मे, काले और गोरों मे तथा पीले और लाल

वर्ण के लोगों मे दिखाई देती थी। ये सीमायें क्या वास्तविक और मान-नीय हैं? इस प्रकार के विचार करते करते वह अपने पर विचार करने लगी। उसके मन में विचार आने लगा था कि वह क्यों सिख समुदाय को छोड़कर हिन्दू-समाज में आना चाहती है? अथवा वह पजावी-समाज को छोडकर क्यों बगाली समुदाय मे आना चाहती है? साथ ही वह इस सीमा-उल्लघन में क्यों सकोच तथा हानि नहीं समझती? इस स्तर पर विचार करने से उसके मस्तिष्क में एक प्रकार का प्रकाश होने लगा। वह विचार करती थी कि प्रतिमा देवी के बगाली महिला होने पर भी वह क्यों उसको पसन्द करती है और क्यों उसका आदर करती है? इस प्रश्न पर बात स्पष्ट होती दिखाई देने लगी। उसको समझ आने लगा कि बगाली होने से चाहे कुछ भी विशेषताएँ प्रतिमा देवी में हों, पर उसकी सुहृदयता तो बगाल अथवा पजाब की बपौती नहीं। ये तो मानवता के गुण हैं। अर्थात् वह प्रतिमा देवी का आदर करती है क्योंकि उसमें मानवता का एक गुण प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। इससे उसको स्पष्ट समझ आने लगा कि सब मनुष्यों में कुछ समानता है। उसने उस समानता की ओर ही ध्यान दिया है। उसने हिन्दू और सिखों मे समानता का ध्यान रखा है। उसने पजाबी और बगाली में समानता की ओर ध्यान रखा है। इसका उलट था, जो विमलानन्द इत्यादि के विचारों को बना रहा था। वह भी उसकी समझ मे आने लगा। ये लोग बगाली और पजाबी अथवा गुजराती और राजस्थानी तथा सिख और जैनों में असमता की ओर ध्यान रखते हुए भेद-भाव मान रहे हैं। इनकी दृष्टि संकुचित है। ये गुणों को छोड़कर अवगुणों को देखने का स्वभाव रखते हैं। यही कारण है कि समानता को न देख, ये भिन्नता को ही सब कुछ मान बैठे हैं। समदृष्टि समन्वय की सूचक है। भेद की ओर ध्यान विग्रह का कारण होता है।

यूँ तो एक परिवार में भी व्यक्ति-व्यक्ति में भिन्नता के स्थान होते हैं। यदि परस्पर समानता की ओर ध्यान न देकर वहाँ भी भिन्नता की ओर दृष्टि रखी जाये तो वहाँ भी वैमनस्य ही उत्पन्न होगा। वह समझती थी

कि उसका भाई हरभजन सिंह और शिशिर की मौसी प्रतिमा देवी भी उसकी भाँति ही दृष्टि रखती है। इससे उसके मन मे प्रतिमा देवी के लिए मान और आदर और भी बढ गया था।

उसने वर्दवान का जीवन एक अभिनय के रूप मे आरम्भ किया था। वह प्रतिमा देवी के चरण-स्पर्श एक नाटक के भाव में करने लगी थी, परन्तु ज्यूँ-ज्यूँ वह प्रतिमा देवी के स्वभाव और विचारों का विश्लेपण करती जाती थी, वह उसको अपने ही विचार और व्यवहार की स्त्री पाती जाती थी और उसके प्रति उसका आदर अधिक और अधिक होता जाता था।

अब वह यह समझने लगी थी कि वह, उसका भाई, प्रतिमा देवी और इसी प्रकार के अन्य लोग एक ही बिरादरी के अन्तर्गत है। यहाँ बिरादरी है मानवता की। जिस रूढिवादी-व्यवहार को छोड वह घर से भागी थी, जिस सकुचित विचारधारा के विरोध मे हरभजन सिह ने केश कटवाये थे, उसी पथ पर चलती हुई प्रतिमा देवी अपने सम्बन्धियो को छोडकर चली आ रही है।

इस समय उसको नीला देवी की एक बात का स्मरण हो आया कि संसार के सब इज्म मानव-समाज मे छोटे-छोटे घेरे हैं। इन घेरो के कितने भी लाभ और गुण क्यो न हो, ये अभेद्य तथा अनुल्लघनीय नहीं हैं। ये घेरे मानवता की प्रगति में बाधा नहीं हो सकते।

आज से वह प्रतिमा देवी को एक नये ही रूप मे देखने लगी थी। सुशील के माता-पिता उसको प्रतिमा देवी की तुलना में बहुत ही निम्न कोटि के प्रतीत होने लगे।

. ६ .

शिशिर कुमार लखनऊ आया तो वह अविलम्ब सुशील से मिलने गया। सुशील अपने क्वार्टर मे सरकार बाबू से बातें कर रहा था। शिशिर आया तो एक ओर चुपचाप बैठ गया। वह न तो अपनी बात

सरकार के सामने करना चाहता था और न ही उनकी वार्तालाप में विघ्न डालना चाहता था। सरकार बाबू कह रहा था, "सुशील बेटा! यह रेणु की इच्छा है कि तुम अवश्य उसके जन्मदिन पर आओ। हम भी यही चाहते हैं। मैं चाहता हूँ कि उस दिन विवाह की तिथि निश्चय कर ली जाये।"

"विवाह तो अभी शीघ्र हो नहीं सकेगा। रेणु अभी अठारह वर्ष की हुई है। डॉक्टरी-सिद्धान्तों के अनुसार विवाह बीस वर्ष की आयु से कम में नहीं होना चाहिए।"

"डॉक्टरों के सिद्धान्त तो विलायत में बनते हैं न। वहाँ की जलवायु यहाँ से बहुत शीतल है। वहाँ की बात यहाँ प्रमाण नहीं हो सकती।

"इस पर भी यदि तुम चाहो तो हम एक दो मास के लिए ठहर सकते हैं। देखो सुशील! हम भी मनुष्य है और जानते हैं कि विवाह की इच्छा कितनी प्रबल होती है। इसको दबाकर रखने से मस्तिष्क पर कुछ अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। जब एक बार विवाह का विचार उत्पन्न हो जाता है तो फिर यह हो ही जाना चाहिए। इसकी अधिक काल तक प्रतीक्षा स्वास्थ्य के विचार से भी ठीक नहीं। तुम यहाँ अकेले रहते हो, वह वहा अकेली तुम्हारी प्रतीक्षा में ठण्डे श्वास छोड़ती रहती है। यह तो मानवता के विचार से भी उचित प्रतीत नहीं होता।"

"अच्छा जी! मैं आऊँगा और फिर विवाह के विषय मे भी विचार कर लेंगे।"

जब सरकार बाबू चला गया तो शिशिर ने पूछा, "सुशील! यह क्या है?"

"यह वही है, जो अमृत वहा कर रही है। मै भी उसकी तरह नाटक कर रहा हूँ। तुम्हारा पत्र बर्दवान से आया था और यह जानकर भारी प्रसन्नता हुई है कि अमृत नाटक बहुत अच्छी भाति कर रही है।

"मेरे माता-पिता मेरा विवाह यहा पसन्द करते हैं। मैं अमृत को चाहता हूँ। अमृत के माता-पिता उसका विवाह एक अन्य से चाहते है।

यह सब भारी विडम्बना है और इसमे हम दोनो को यह अस्वाभाविक अभिनय करना पड़ रहा है।

"परन्तु मै देखता हूँ कि ये लोग मुझको मोह-जाल मे फँसाते जाते हैं। जब मैं इनके घर जाता हूँ तो इनकी लड़की मेरे चरण-स्पर्श करती है और मेरे चरणों में ैठती है। मुझको अपना सगीत सुनाती है। कभी वायलिन बजाती है और कभी नृत्य दिखाती है। मेरे लिए पान लगाकर लाती है और मेरा भोजन स्वय बनाती और मुझको खिलाती है। वह अति सुघड भी है।

"यह देखो, मेरे लिए एक ऊनी जर्सी बुनकर भेजी है। कितनी सुन्दर बनी है।"

सुशील ने अपनी पहनी हुई जर्सी दिखाई। पश्चात् एकाएक रेणु की बात छोड़ अमृत की बात पूछने लगा।

शिशिर ने लखनऊ स्टेशन पर गाडी में बैठने के समय से लेकर अमृत के बर्दवान स्टेशन पर तरल आखों से उसको विदा देने तक का पूर्ण वृत्तान्त बता दिया। अपनी मौसी के व्यवहार को भी उसने व्याख्या सहित सुनाया। पश्चात् कहा, "सुशील! हम दोनो ऐसी विकट परिस्थिति मे पड गए थे कि किसी अज्ञात शक्ति ने ही हमको बचाया प्रतीत होता है। यह शक्ति, जहा तक मैं समझता हूँ अपने मित्र के प्रति सद्भावना ही हो सकती थी।"

"क्या मतलब?"

"मतलब नहीं समझे? पाच रात-भर एक ही कमरे में और एक ही पलंग पर सोने के लिए विवश होना पडा था। अमृत देवी है। अति संयम और धैर्य से वह तुममें निष्ठा बनाकर रह रही है और मैं उसके पावों मे पड़ा-पड़ा सोते हुए उसकी लातें खाता रहा हूँ।"

सुशील हँस पडा। उसने कहा, "तुमने पृथक् सोने का बहाना क्यों नहीं बना लिया? ऋतुकाल में होने की बात कर लेनी थी।"

"और मौसी को पता चल जाता तो सब नाटक का गोबर-गणेश हो

जाता। इस पर भी अभी तक तो तुम विश्वास करो सुशील! तुम्हारी अमानत अछूती वहाँ रख आया हूँ, परन्तु बताऊँ, मौसी क्या कहती थीं?"

"हाँ, हाँ! कह दो वे क्या कहती थी।"

"कहती थी कि जवान पत्नियों को लम्बे काल के लिए अकेला छोड़कर जाना ठीक नही। वह बेचारी मेरे वियोग म तड़पती रहेगी।

"सुशील! यह तुमने मुझको एक भारी मुसीबत मे डाल दिया है।"

"अरे भाई! एक मित्र के लिए यह भी थोड़ा कष्ट सहन कर लो न।"

"मैं अपनी बात नही कह रहा मित्र! मै तो अपनी मौसी की बात कहता हूँ। एक सायकाल अमृत ने अपना गाना सुनाया। तब से तो मौसी उसको गृह-लक्ष्मी मान, उसकी पूजा करती है। जब उनको पता चलेगा कि वह और मै उनको धोखा देते रहे है, तो उनके क्रोध का पारावार नही रहेगा।"

"यही बात तो मेरे साथ यहाँ हो रही है। मै तो अभिनय कर रहा हूँ और एक बालिका और उसके सम्बन्धी मेरे प्रेम मे फँसे हुए दिन रात व्याकुल रहने लगे है।

"कल हरभजन सिह मुझसे मिला था। उसको सन्देह हो रहा था कि मै ही अमृत को भगाकर रखे हुए हूँ। जब मैंने सरकार बाबू से मिली भेट की वस्तुएँ दिखाई, तो कही जाकर उसे विश्वास हुआ। जब मैने उसको रेणु से लिखा पत्र पढकर सुनाया तो वह मुझसे मेरे पर सन्देह करने के लिए क्षमा माँगने लगा। परन्तु इसका परिणाम यह हुआ है कि मेरा रेणु से सम्बन्ध एक पग और आगे बढ गया है।"

"सुशील! यह नाटक तो शैतानी काम मालूम होता है। इसको बन्द कर दो। यह तुमको और अन्य सब को, जो इसके साथ सम्बन्ध मे आये है, नरक मे ले जायेगा।"

"अभी तो कुछ मास निकालना चाहता हूँ। पश्चात् समय आने

पर सोचेंगे कि किस प्रकार इस झंझट से निकलें।"

शिशिर को पार्टी का काम था और सुशील को प्रैक्टिस करनी थी। इस कारण दोनों अमृत का विचार छोड़, अपने-अपने काम मे लग गए।

एक मास व्यतीत होने पर आया तो शिशिर को मौसी का पत्र मिला। वह इस पत्र को लेकर सुशील के पास चला आया। सुशील ने पत्र देखा। उसमे लिखा था :—

"प्रिय शिशिर।

तुम तो बहू को भूल ही गए प्रतीत होते हो। एक मास मे तुमने एक भी पत्र उसको नहीं लिखा। वह बेचारी लज्जावश जिह्वा नहीं खोलती। अन्यथा कौन नहीं जानता कि भरी जवानी मे वियोग की राते काटनी कितनी कठिन होती हैं।

"वह दिन से लेकर रात तक कुछ-न-कुछ करती रहती है। यहाँ तक कि सोने से पूर्व मेरे पाँव दबाने चली आती है। बेचारी बेजबान को और दु:ख मत दो। उस विरही के दुःख को देख मेरा कलेजा मुख को आता है। जब मैं तुम्हारे विषय मे कुछ कहती हूँ तो उसके आँसू अविरल बहने लगते हैं।

"तुमको भगवान् की सौगन्ध है कि दो-तीन दिन के लिए ही सही, अब चले आओ। पत्नी को ऐसा दु:ख देना भारी पाप है, शिशिर!

"मैं कभी मन से पूछती हूँ कि तुमने अब और पढकर क्या करना है? पी० एच० डी० करने से क्या होगा? कहीं प्रोफेसर ही तो लग सकोगे? मिलेगा क्या, पाँच सौ रुपया। एक सहस्र रुपया मासिक का तो केवल तुम्हारे लिए प्रबन्ध कर ही दिया है और मेरा विचार है कि तुम आ जाओ तो तुमको अपने फार्म पर भेज दूँगी और उसकी आय तुमको मिल जाया करेगी। यह मेरे मरने तक है और पीछे तो तुम सर्व-सर्वा होगे।

"उस फार्म में से मेरे नौकर लूट-खसूट करते हुए भी वर्ष में बीस हजार

का लाभ दिखा देते हैं। मुझको विश्वास है कि यदि तुम प्रबन्ध करोगे तो तुम लाभ को ड्योढा तो कर ही लोगे।

"और तुमको क्या चाहिये? मेरा कहा मानो, तुमको बहू की सौगन्ध है, अब तुम चले आओ। अब मुझको दूसरा पत्र न लिखना पड़े।"

१०

सुशील पत्र पढ विस्मय में पड गया। उसने एक भी शब्द और कहे बिना, अपनी जेब में से एक इत्र लगा लिफाफा शिशिर के हाथ में देते हुए कहा, "अब तुम इसको पढो।"

शिशिर ने लिफाफे मे से पत्र निकाला और पढा। वह पत्र रेणु का लिखा था। पत्र में लिखा था, "प्रियतम! मैं श्याम-वर्ण अवश्य हूँ। रूप रेखा भी बहुत तीखी नहीं, परन्तु मैं पूछती हूँ कि क्या पत्नी बनने के लिए यही दो गुण हैं। क्या दाम्पत्य-जीवन के लिए सहयोगिता, सहचारिता, सुहृदयता और सहिष्णुता का कुछ मूल्य नहीं है? क्या मन के ये गुण शरीर के उक्त गुणों की तुलना में, विवाहित जीवन में, कई सौ गुणा अधिक मूल्यवान नहीं?

"आपने लिखा है कि आपके भाग्य मे भगवान् ने एक श्याम-वर्ण, मोटे नाक और छोटी आँखों वाली लडकी लिख रखी है, इससे आप अपने भाग्य पर सन्तोष ही तो कर सकते हैं।

"मैं कहती हूँ कि आपके भाग्य मे भगवान् ने एक दासी, जो दिन-रात आपकी प्रत्येक प्रकार से सेवा करेगी, दी है। मैं भोजन बनाऊँगी, आपके कपड़े सीऊँगी, घर की सफाई करूँगी। आपके कार्य में भी यदि आप चाहें, तो क्लर्क, स्टीनो, टाइपिस्ट और अन्य कई प्रकार से सहायक हो सकूँगी।

"मैं अँग्रेज़ी बोल सकती हूँ। लिख सकती हूँ, सगीत-कला और चित्र-कला से आपका मनो-विनोद कर सकती हूँ। सबसे अधिक आपके सुख-दु:ख मे कन्धे से-कन्धा लगाकर साथ देने का वचन देती हूँ।

"आपको अपने घर ले जाने का कभी शोक नहीं होगा। मै आपकी भाषा बोलने वाली, आपके साहित्य के तारतम्य को समझने वाली और उस साहित्य के अनुरूप अपने जीवन को रखने वाली हूँ।

"और अधिक आप क्या मॉगते है? शारीरिक सौन्दर्य के लिए तो कोई मिट्टी की सुन्दर मूर्ति अपने कमरे मे लगा रखियेगा, काम चल जायेगा, परन्तु जो इसके अतिरिक्त मै आपके घर ला रही हूँ, अर्थात् प्रेम, सेवा और तपस्या, वह आपको अन्य कहीं नहीं मिलेगी।"

पत्र तो और बहुत लम्बा था, परन्तु शिशिर ने पत्र वापिस करते हुए कहा, "सुशील! जो स्वाभाविक है उसको अस्वाभाविक करना क्यो चाहते हो?"

"मैं करना नहीं चाहता, शिशिर! मेरे बस में होता तो मैं दोनो से विवाह कर लेता, परन्तु आज देश का कानून इसकी स्वीकृति नहीं देता।"

"अर्थात् तुम रेणु को नपसन्द नहीं करते।"

"रूप-लावण्य मे तो अमृत अधिक अच्छी है, परन्तु यह मुझसे प्रगाढ प्रेम करती है।

"एक दिन की बात बताऊँ? वह यहाँ आई थी और एक घण्टा-भर बातचीत करती रही। मैंने उसको कहा, 'रेणु! तुम अकेली क्यो आई हो?'

'तो क्या पाप हो गया है?'

'यदि मैं तुमसे बलात्कार करूँ तो?'

'भला ऐसा क्यो करेगे? बलात्कार तो पराई स्त्रियो से किया जाता है। मै तो आपकी अपनी हूँ।'

'पर अभी तो तुम मेरी पत्नी नहीं हुई?'

'कौन कहता है? मै तो मन-वचन-कर्म से आपको वर चुकी हूँ।'

'तो तुम मेरी पत्नी हो?'

'आपको सन्देह है क्या?'

'हाँ, जब तक मैं तुमको प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक तो है।'

'तो आइये, अभी प्राप्त कर लीजिये। मै तो मन से आपकी दासी

बन चुकी हूँ।'

'पर यदि उसके पश्चात् मैंने तुमसे विवाह न किया तो ?'

'तो क्या ? मैं त्यक्ता पत्नी हो जाऊँगी इस पर भी पत्नी तो रहूँगी। यह आपकी इच्छा है कि छोड़े अथवा रखे। मेरा आपको वरन तो हो चुका है।'

"शिशिर! एक बन्द कमरे में, अकेले क्या कुछ हो सकता है तुम समझ सकते हो।"

शिशिर खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने पूछा, "तो तुमने उससे सहवास किया है ?"

"नहीं मित्र! इतना विश्वास और भरोसा करने वाली भोली-भाली लड़की से विश्वासघात नहीं कर सका। मैं उसको अपनी मोटर में बिठा-कर उसके पिता के घर ले गया और वहाँ उसको छोड़ आया। इससे तो मेरा मान उसके हृदय में कई सौ गुना बढ़ गया प्रतीत होता है।"

"सुशील! इस बेचारी से विवाह कर लो और शीघ्र ही।"

"मैं भी यही विचार कर रहा हूँ। परन्तु अमृत का भी तो प्रबन्ध करना है। उसको पत्र लिखूँ, परन्तु क्या लिखूँ और किस प्रकार उसको वचन से मुक्त करूँ ? मैं कई दिनों से यह सब-कुछ उसको लिखने के लिए यत्न कर रहा हूँ, परन्तु कलम नहीं चलती और यह समस्या मेरे मस्तिष्क को खराब कर रही है।"

"तो जहाँ पहली कठिनाई में तुमने मेरे को शिखण्डी बनाया है, क्या इसमें भी मेरे को अपनी आड़ बनाना चाहते हो ?"

"तो तुम इस विषय में भी मेरी सहायता करोगे ?"

"पहले से यह काम और भी कठिन है। पहले में तो वह हँसती हुई सम्मिलित हुई थी और इसमें वह रो-रोकर अपनी जान दे देगी। मुझको और तुमको, कदाचित् पूर्ण बंगाली समाज को गालियाँ देने लगेगी।"

"तुम उससे विवाह क्यों नहीं कर लेते ? तुम्हारी मौसी तो प्रसन्न है ही।"

"यह विवाह है, सुशील ! गाजर-मूली का बाजार नहीं। एक ग्राहक न मिला तो किसी दूसरे के पास चली गई।"

"भारी कठिनाई तो यह है कि मैंने ही उसको तुम्हारे साथ भाग जाने को कहा था।"

"हाँ, और यह भी कहा था कि यदि मैंने तुम्हारी खेती में मुख डाला तो ठीक नहीं होगा।"

"मैं अपना कथन वापिस लेता हूँ।"

"पर वह खेती नहीं है, सुशील ! वह एक समझदार, सभ्य, सुशील और पढ़ी-लिखी लड़की है।"

"पर क्या तुम उसको पसन्द नहीं करते ?"

"मेरी पसन्द का तो प्रश्न ही नहीं पैदा होता। वह तुमसे प्रेम करती है, मुझसे नहीं।"

"तुम उससे कहकर तो देखो। यदि वह तुमको पसन्द है और तुम्हारी मौसी उसको अपनी बहू मानती ही है, तब तो बात सुगम ही है।"

"कैसे सुगम है ?"

"आओ, हम षड्यन्त्र करें। आखिर बंगाली मस्तिष्क के लिए यह कौन कठिन बात है।"

शिशिर मन में विचार करता था, 'बड़ा षड्यन्त्रकारी बन आया है। बच्चू ! अपनी चतुराई से सोना देकर कासा पकड़ बैठे हो।' इसके पश्चात् उसने कहा, "मैं कल बर्दवान जा रहा हूँ। मैं उसके विचारों को जानने का यत्न करूँगा और यदि वह कुछ भी तैयार हुई तो फिर मैं अपनी किस्मत आजमाऊँगा।"

"सच ?"

"यत्न करूँगा।"

"मैं तुम्हारा बहुत आभारी रहूँगा।"

शिशिर मन-ही-मन मुस्कराता हुआ चला आया। वह विचार करता था, 'अच्छा उल्लू बनेगा।'

११

शिशिर के मन मे यह विश्वास सा बन रहा था कि सुशील के विवाह के पश्चात् अमृत को विवाह के लिए राज़ी कर लेना कठिन नहीं होगा। आवश्यक यह था कि सुशील का विवाह अमृत के बालिग होने से पूर्व हो जाये। इसके अतिरिक्त वह कम्यूनिस्ट पार्टी का वैतनिक कार्यकर्ता था। विवाह के उपरान्त वह इस कार्य को कर नहीं सकेगा। या तो अमृत को कम्यूनिस्ट विचार का बना ले और फिर दोनों पार्टी का कार्य करें। यह इतना सुगम नहीं था। तो वह पार्टी को छोड़ दे, इस को भी वह सुगम नहीं समझता था। वह इस के सिद्धान्तों को मानव समाज के लिए अति-हितकर मानता था और उनके प्रचार को अपने जीवन का ध्येय बना चुका था। इससे भी बढकर समस्या फार्म की थी। विवाह के पश्चात् वह फार्म का काम करेगा और फिर कर्मचारियों को कैसे नौकर बना कर रख सकेगा ?

वह लखनऊ ऑटोमोबाईल वर्कर्ज़ यूनियन का प्रधान था। उसको प्रबोध के कारखाने में कर्मचारियों के प्रबन्ध में हस्तक्षेप करने से कारखाने की दुर्गति का पता था। वह वैसा ही हाल अपनी मौसी के फार्म में नहीं करना चाहता था।

एक बात वह समझता था कि यदि अमृत से विवाह नहीं होता तो मौसी के घर से उसका तिनका ही टूट जायेगा। वह अभी ऐसा करना नहीं चाहता था। उसके मन में स्पष्ट था कि वर्तमान कांग्रेस राज्य से कम्यूनिस्ट पार्टी को कुछ नहीं मिलेगा। आगामी निर्वाचनों में भी कांग्रेस ही देश की शक्तिशाली पार्टी रहेगी। कम्यूनिस्ट पार्टी के शक्ति प्राप्त करने में अभी काफी समय था और तब तक उसको मौसी के रुपयों की आवश्यकता थी।

वह यह भी मन में विचार करता था कि अमृत मौसी से प्रसन्न है और मौसी के नाम पर यदि वह उसके सामने प्रस्ताव करेगा तो उसके लिए मानने में सन्देह नहीं हो सकता। प्रश्न तो घूम-घुमाव कर वही था

कि सुशील का विवाह अमृत के तीन मास के अज्ञातवास के भीतर ही हो जावे।

इस उधेड़-बुन मे वह कार्यालय में जा पहुँचा। वहाँ कार्यालय में यह पत्र देकर कि उसकी मौसी ने तुरन्त बुलाया है, वह बर्दवान के लिए रवाना हो पड़ा। उसने अपने वहाँ पहुँचने की सूचना भी नहीं भेजी।

जब वह घर के फाटक के बाहर गाड़ी खड़ी कर नौकर को आवाज देने लगा, तो उसकी आवाज अमृत ने सुन ली। वह लपककर खिड़की में देखने गई। शिशिर का सामान नौकर उठाकर चला आ रहा था और शिशिर उसके साथ था। वह उसके इतनी जल्दी लौट आने की आशा नहीं रखती थी। वह मन में विचार कर रही थी कि अब वह कितने दिन वहाँ रहेगा और उसको उतनी रातें उसके साथ बन्द कमरे मे रहना पड़ेगा।

इस चिन्ता के साथ-साथ वह लखनऊ के समाचार जानने के लिए भी उत्सुक थी। वह अपने भाई और माता-पिता के विषय में भी जानना चाहती थी। वह सुशील के विषय में भी जानने की इच्छा रखती थी। इसके अतिरिक्त वह जानना चाहती थी कि नीला, प्रबोध इत्यादि उसके भाग जाने को कैसा समझते हैं। अतएव वह शिशिर से एकान्त में मिलने की लालसा कर रही थी। वह स्वागत के लिए द्वार की ओर जाने के स्थान अपने सोने के कमरे मे चली गई।

मौसी ने समझा कि वह सबके सामने अपने पति से मिलने मे लज्जा अनुभव करती होगी। इस कारण एकान्त मे मिलने के लिए अपने कमरे में चली गई है। यह विचार कर वह मुस्कराई।

शिशिर भीतर आया तो प्रतिमा देवी ने उसको प्यार किया और पूछा, "आने की सूचना क्यों नहीं भेजी?"

"मौसी! तुम्हारा पत्र मिला तो चल पड़ा। सुनाओ अमृत ने तंग तो नहीं किया?"

"नहीं बेटा! वह बेचारी बहुत ही सुशील है। मै तो अब उसके

बिना रह नहीं सकती। उसके आने से मेरा जीवन रसमय हो गया है। अब एक बात करो। उसके एक लड़का पैदा कर दो। बस मेरी मनोकामना पूरी हो जावेगी।"

"मौसी! यह तो भगवान् के हाथ मे है न।"

"तुम भगवान् को कब से मानने लगे हो?"

"जब से अमृत को पाया है?"

"सच? तब तो मुझको उसका और भी कृतज्ञ होना चाहिए। उसने मेरे बेटे को सन्मार्ग दिखाया है।"

शिशिर हँस पड़ा। इस पर प्रतिमा देवी ने विस्मय में पूछा, "तो क्या यह ठीक नहीं है?"

शिशिर एक कुर्सी पर बैठ गया। सब बैठक में खड़े थे। प्रतिमा नहीं बैठी। उसने मुस्कराते हुए कहा, "बेटा! जाओ। वह तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। अभी यहाँ थी। तुम्हारी आवाज़ सुन अपने कमरे में चली गई है।"

"अच्छा मौसी! उससे निपट कर आता हूँ।"

यह कह शिशिर अमृत के कमरे में जा पहुँचा। वह द्वार के समीप खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी। शिशिर ने कमरे मे आ द्वार बन्द कर लिया और पूछा, "अब तुम सुनाओ।"

"यहाँ सब ठीक है। मैं अपना पार्ट इस खेल में भली-भाँति खेल रही हूँ। मौसी से पूछा है कुछ?"

"हाँ।" शिशिर ने एक कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "कहती थीं कि तुम बहुत अच्छी हो। अब तुम्हारे एक लड़का होने की बात रह गई है। वह हो जाये तो उसकी सब मनोकामना पूरी हो जायेंगी।"

अमृत का मुख लाल हो गया। शिशिर ने देखा परन्तु उसको सुझाया नहीं। उसने कहा, "अमृत! बैठो। लखनऊ की बात नहीं सुनोगी?"

"इसीलिए तो यहाँ चली आई हूँ।"

"तुम्हारे माता-पिता और तुम्हारे भाई तुम्हारी खोज मे लीन हैं। तुम्हारे भाई का विचार है कि तुमने घर से भागकर भूल की है। नीला देवी का भी यही विचार है। ये दोनों समझते है कि यदि तुम घर मे रहकर माता-पिता का विरोध करतीं तो बहुत ठीक रहता।"

"तो आप उनसे स्वयं मिले थे?"

"नहीं, यदि मै उनसे तुम्हारे विषय में रुचि प्रकट करता तो उनको सन्देह हो जाता कि तुम मेरे पास हो। यह सब मैंने सुशील के द्वारा ही जाना है।"

"मेरे माता-पिता अब मेरे विवाह के विषय में क्या कर रहे हे?"

"विवाह की बात समाप्त हो गई है। सरदार कर्तार सिंह तुम्हारे पिता से मिले थे और उनको जली-कटी सुना गए है। तुम्हारी माता का क्रोध तो शान्त हो गया प्रतीत होता है, परन्तु तुम्हारे पिता जी के विषय मे अभी कुछ नहीं कहा जा सकता। कभी तो बहुत नाराज होते है और कभी कहते है कि उनसे भूल हुई है और सगाई से पूर्व तुमसे पूछ लेना चाहिए था।"

"सुशील जी कैसे है?"

"बहुत मजे मे है। उनका नाटक भी तुम्हारे नाटक की भांति एक विकट स्थिति में पहुँच गया है। रेणु उनसे प्रेम करने लगी है और वह उनको किसी सूरत मे भी छोडने को तैयार नहीं। सरकार बाबू ने पूर्ण नगर मे और बंगाली बिरादरी मे सुशील और रेणु के विवाह का समाचार विख्यात कर दिया है। सुशील के हस्पताल के सब अधिकारी इस बात को जान गए है और प्रत्येक सम्बन्धी और मित्र उसको विवाह के समय देने के लिए भेंट तैयार कर रहा है।"

"देखो, शिशिर बाबू! मैंने सुशील जी से कहा था कि यह नीति ठीक नहीं है। यदि इसमें सीमा से दूर गये तो फिर लौटना कठिन हो जायेगा। वे न केवल स्वयं इस बनावट के जीवन मे फँस गए, प्रत्युत् मुझको भी साथ ही फाँस लिया है।

"मैं अब मौसी के अहसान के नीचे इतनी दब चुकी हूँ कि यहाँ से जाने की बात सोचकर मेरा हृदय काँपता है।"

"क्यों?"

"वे क्या समझेंगी? उनके मन पर इस धोखाधड़ी का क्या प्रभाव होगा? कहीं उनकी हत्या का पाप मेरे सिर न चढ़ जाये। अभी दो दिन की बात है कि आपके भाई विमलानन्द को उन्होंने बहुत बुरी तरह डाँटा था। वे कहने लगीं, 'विमल! मैं तुमको बताना चाहती हूँ कि शिशिर ने इससे विवाह किया है। धर्म की वेदीपर बैठ कर इसको अर्धांगिनी बनाया है। अतएव अच्छी अथवा बुरी यह मेरे परिवार का अग है। इसकी निन्दा मेरी निन्दा है। जान गये हो?'"

"तो क्या विमलानन्द ने तुम्हारी निन्दा की थी?"

"उसने किसको क्या कहा था, मैं नहीं जानती। मौसी ने उसको डाँटा तो वह भीगी बिल्ली की भाति मैं-मैं करने लगा। मैं तो यह अनुभव कर रही हूँ कि यदि मैं यहाँ से चली गई तो विमलानन्द इत्यादि तो मौसी को कच्चा ही चबा जायेंगे।"

"तो फिर क्या किया जाये?"

"मैं तो यह चाहती हूँ कि सुशील अब अपना नाटक बन्द करे। वह यहाँ चला आए और मौसी के पाँव पर अपना सिर रख क्षमा मागे और सब बात सत्य सत्य बता दे। यदि यह नहीं हो सकता तो लखनऊ में किसी काम के मिल जाने का बहाना कर मुझको आप वहाँ ले चलिये और फिर मौसी को वहाँ बुलाकर सब बात वहाँ ठीक कर ली जाये। ये दोनों बातें दो मास के भीतर हो जानी चाहियें। वहाँ आप अपने विवाह का भी प्रबन्ध कर ले, जिससे मौसी को कम से-कम सदमा पहुँचे।"

शिशिर यह योजना सुन हँस पडा। उसने कहा, "इस योजना में बड़े-बडे छिद्र हैं। प्रथम, सुशील सरकार बाबू से सम्बन्ध-विच्छेद नहीं कर सकता। वह मान भी जाये, तो भी रेणु उसके द्वार पर धूनी रमा कर सत्याग्रह करने लगेगी। नगर-भर में धूम मच जायेगी। सुशील की

बदनामी होगी तो उसके काम में भी गड़बड़ होगी।

"दूसरा छिद्र है मौसी का लखनऊ चलना, यह नहीं होगा। यदि मैं हठ कर तुमको लखनऊ ले गया तो भी वह स्वयं नहीं जायेगी और जब तुम्हारा विवाह सुशील से हुआ तो वह अति दुःख अनुभव करेगी।

"तीसरे, मैं किससे विवाह करूँगा? उसको, जो भी वह हो, मौसी तुमसे अच्छा कभी नहीं समझेगी। विमलानन्द का मुख भी तब ही बन्द हो सकेगा, जब मैं शशि से विवाह के लिए तैयार हो जाऊँ। यह मुझसे नहीं हो सकेगा। मौसी भी इसको पसन्द नहीं करेंगी।"

"तो आपके कहने का अभिप्राय यह हुआ कि मेरी योजना नहीं चलेगी?"

"बिलकुल नहीं।"

"तो फिर क्या किया जाये?"

"मैं क्या जानूँ? तुम जानो और सुशील जाने। मैंने इस धोखे-बाजी में सम्मिलित होकर कुछ ठीक नहीं किया। मैं अपनी हानि तो सह लूँगा। मैं तो फक्कड़ हूँ। तुम दोनों अपनी सोच लो।"

"बहुत मुसीबत में फँस गई हूँ।"

"देखो अमृत! मेरी योजना यह है कि यदि सुशील तुमसे विवाह करने की कोई योजना निकाले और यहाँ आकर मौसी के सम्मुख गिड़गिड़ा कर उसके पाँव पकड़ ले और सब रहस्य खोल, तुमको यहा से ले जावे तो मैं इस धोखे में अपने भाग के लिए जो भी दण्ड मौसी देगी, सहन कर लूँगा। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता तो दोनों ओर का नाटक सत्य होकर रहेगा।"

"इस योजना मे छिद्र नहीं है क्या?"

"है और बहुत बडे-बडे हैं, परन्तु उसका फल सबको सहन करना पड़ेगा। इस पर भी मैं समझता हूँ कि यह बेल मढे चढेगी नहीं। रेणु सुशील को छोड़ेगी नहीं। इससे लखनऊ-भर में हल्ला होगा। सुशील की नौकरी जाने का भय हो जायेगा।

"यहाँ तुमको मौसी छोडेगी नहीं। मै समझता हूँ कि रेणु सुशील से विवाह करने में सफल हो जावेगी और मौसी तुम जैसी पतोहू को पाये बिना नहीं रहेगी। मैं समझता हूँ कि मौसी भी सफल हो जावेगी।"

"मौसी की पतोहू बनने में तो कुछ बड़ी कठिनाई नहीं है। पर मौसी के बेटे की पत्नी बनने की इच्छा नहीं होती।'

"क्यों, वह लगा-लुजा है क्या?"

"उसमें कई दोष हैं, जो एक पति म नहीं होने चाहिएँ।"

"तो उसको वे सब दोष बता दो अमृत! शायद वह ये सब दोष अपने में से निकालने का यत्न कर ले।"

१२

तीन दिन तक बर्दवान मे रहकर जब शिशिर जाने लगा तो अमृत ने उसको कहा, "जाइये और अब दो मास तक यहाँ न आइयेगा। जब मुझको यह विश्वास हो जायगा कि सुशील का रेणु से विवाह हो गया है तो मै आपसे विवाह करने लखनऊ आऊँगी। आप सुशील के विवाह की तिथि लिखियेगा। तब ही मैं वहाँ आ सकूँगी।"

"पर मैं बीच में क्यों न आऊँ?"

"इसलिए कि यहाँ आकर आप को सयम से रहने में कष्ट होता है।"

"जब तुम सयम से रह सकती हो तो मैं क्यों नहीं रह सकता?"

"यह मैं क्या जानूँ? आप जितनी बेताबी प्रकट करते हैं, क्या वह झूठी समझ लूँ?"

"नहीं, यह बात नहीं। मैं मन मे सर्वथा वैसा ही अनुभव करता हूँ जैसा मुख से कहता हूँ, परन्तु मैं अपने मन को शान्त तब ही रख सकता हूँ, जब तुमसे अपने प्रेम की बात कह लेता हूँ। जब जनता में कोई भावना उग्र होती है तो हम नेता लोग उनसे नारे लगवाने लग जाते हैं। इससे उनका जोश नारों में निकल जाता है और समाप्त हो जाता है।"

"मैं इससे उलट समझती हूँ। जब किसी मूर्ख गँवार मे उत्तेजना लानी होती है, तब नारे लगवाये जाते हैं। नारे लगाने से उसके मस्तिष्क में एक ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जाती है जिससे वह पराकाष्ठा की मूर्खता करने के लिए तैयार हो जाता है।"

"पर अमृत ! मैं मूर्ख नही हूँ। मैं जब अपने मन की बात कह लेता हूँ तो मुझको शान्ति मिलती है।"

"अच्छी बात, एक मास के उपरान्त आकर मेरे से प्रेम के नारे लगा जाइयेगा और चित्त को शान्त कर जाइयेगा।"

"धन्यवाद।" इतना कह शिशिर खिल-खिलाकर हँस पड़ा।

जाते समय उसको मौसी ने कहा, "शिशिर ! मै तुम्हारे इस प्रकार बार-बार जाने को पसन्द नही करती। बहू को छोड़कर इस प्रकार भटकते रहना कोई अच्छा काम नहीं। मैं तुम्हारी आँखो मे देख रही हूँ कि अब तुम पढ़ाई कर नहीं सकते। व्यर्थ मे वियोग का दुःख सह रहे हो और बहू को दे रहे हो।"

इस बार शिशिर गया तो अमृत रोई नहीं। मौसी को कुछ अचम्भा हुआ। इस कारण स्टेशन से लौटकर मौसी ने अमृत से पूछा, "बहू ! क्या कुछ लड़ाई हुई है तुम दोनो मे ?"

"नहीं तो, माँ जी !"

"पिछली बार उसके जाने पर जितना दुःख तुमको हुआ था, उतना इस बार हुआ प्रतीत नहीं होता।"

"हाँ. पर माँ जी ! इसमें कारण है। पिछली बार वे कह गये थे कि छः मास तक लौटकर नहीं आयेंगे और इस बार वे वचन दे गए है कि एक मास में ही आयेंगे।"

"तो तुमको बहुत आशा बँधा गए हैं न ?"

"हाँ, मा जी। उनके मित्र सुशील कुमार का विवाह होना है और वे मुझको मित्र के विवाह पर ले चलेंगे।"

"तभी। तो तुम बहुत प्रसन्न हो ? भगवान् करे कि इस बार तुम्हारे

दिन चढ जायें और नौ मास में तुम्हारे लड़का हो।"

अमृत ने लज्जा से आँखें झुकाकर कहा, 'मा जी! आपकी आशीर्वाद चाहिए। शेष सब-कुछ होता रहेगा।"

शिशिर लखनऊ पहुँचा तो उसको पता चला कि सुशील उससे मिलने स्वय आया था। शिशिर को कार्यालय में पहुँचते ही पता चला कि सुशील पहले दिन उसको पूछ गया था। वह स्नानादि से छुट्टी पा, सुशील की ओर जाने ही वाला था कि वह स्वय आ गया। उसने आते ही कहा, "क्या कर आये हो शिशिर?"

"क्या करना था वहाँ? मौसी से मिलने गया था, सो मिल आया हूँ। उसको स्वप्न आया था कि मेरे साथ कोई दुर्घटना हो गई है। इससे परेशान थी। जब उसने मुझको देख लिया और हाथ लगाकर मेरे जीवित होने का विश्वास कर लिया तो शान्त हो गई और कहने लगी कि अब मैं अपनी पढाई के लिए जा सकता हूँ।"

सुशील हँस पड़ा और कहने लगा, "ऐसा प्रतीत होता है कि तुम्हारा अपनी मौसी से किसी प्रकार का घना सम्बन्ध उत्पन्न हो रहा है और वह किसी दूसरे का नाम ले लेकर अपनी वियोग-व्यथा प्रकट कर रही है।"

शिशिर भी हँसने लगा। दोनों बाह-में-बाह डालकर कार्यालय से निकल पड़े। बाहर सड़क पर आ दोनों मोटर में बैठ गए। लखनऊ में हुई बातों का उल्लेख करते हुए सुशील ने मोटर स्टार्ट कर दी। उसने कहा, "कल सरकार बाबू मेरे माता-पिता तथा अपनी पत्नी को लेकर हस्पताल में आ गये थे। वहाँ डॉक्टर हनुमान सिंह, डायरेक्टर आफ हॉस्पिटल्ज और उनकी धर्मपत्नी बैठे थे। ऐसा प्रतीत होता है कि डायरेक्टर महोदय का पिता जी से भारी परिचय है और उनकी सिफारिश से ही मुझको हस्पताल में नौकरी मिली है। उनकी उपस्थिति में मेरे विवाह की चर्चा चल पड़ी। हस्पताल के चीफ मेडिकल ऑफिसर कमलापति दास तो मेरे विवाह में पहले ही रुचि रखते हैं। बस फिर क्या था मेरे विवाह की तिथि पाँच अप्रैल नियत कर दी गई है।

"कमलापति दास सरकार बाबू के परम मित्र हैं। उन्होंने तो संकेत-मात्र मुझको कह भी दिया है कि वे एक बंगाली की कमाई किसी पंजाबी के लिए व्यय नहीं होने देंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि पिताजी ने उनको मेरी प्रेम-कथा का परिचय दे दिया है।"

"यह तो बहुत बुरी बात हुई है सुशील! तुमको तो सरकार बाबू ने भलीभांति जाल मे फंसा लिया है। क्या नौकरी छोड़ दोगे?"

"मुझसे दुकानदारी नही हो सकती। हरभजन सिंह बहुत ही योग्य सर्जन होते हुए भी पांच-छः सौ से अधिक प्रैक्टिस नहीं रखता। इसमे ही क्लिनिक का खर्चा भी करना पड़ता है। मैं किसी प्रकार का भी खर्चा किये बिना दो-तीन हज़ार प्रतिमास जेब मे डाल लेता हूं।

"यह सब हस्पताल के कारण ही है। हस्पताल मे बैड पाने के लिए लोग घर पर फीस दे जाते हैं। जहां हरभजन सिंह और नीला अभी पांच रुपये फीस लेते हैं, वहां मेरी फीस पन्द्रह हो गई है। हस्पताल छोड़ने पर यह सब समाप्त हो जावेगा। तब अमृत से भी विवाह किया तो उसको भी मुसीबत मे डालना ही होगा।"

"तो तुम विवाह के लिए मान गये हो क्या?"

"हां।"

"तो अमृत एक कटी पतंग की भांति हो गई है। न इधर की रही न उधर की।"

"तो तुम अपने कार्य मे सफल नहीं हुए?"

"सुशील! वह कहती है कि जब तुम्हारा विवाह हो जायेगा, तब ही वह किसी अन्य के विषय मे विचार कर सकती है।"

"तब तो मुझको उसके यहां आ सकने के पहले ही विवाह कर लेना चाहिए।"

"हां, नहीं तो वह किसी प्रकार का विघ्न भी डाल सकती है।"

"तो अब मौसी से उसका झगड़ा हो गया है क्या?"

"हां, भला उन दोनो की कैसे पट सकती थी? एक उत्तरी ध्रुव

और दूसरी दक्षिणी । एक सर्वथा शीतल, दूसरी अग्निपु ज । एक भावुकता से ओत-प्रोत दूसरी गिनती मिनती करने वाली बुद्धि शील । एक मास में ही चित्र बदल गया है ।"

"सुशील ! किसी प्रकार मेरी सहायता करो ।"

"मित्र ! वह तो कर ही रहा हूँ । मौसी से कह आया हूँ कि उसको ताला लगाकर रखे । कहीं भाग गई तो उससे अपनी पत्नी भर लूँगा ।"

"वडरफुल । शाबास शिशिर ! माना कि तुम षड्यन्त्रकारी हो । इसका अर्थ मैं यह समझा हूँ कि यदि वह यहा आई तो मौसी को इससे कुछ भी दु.ख नहीं होगा । तुम उसके मन को पहले ही तैयार कर आये हो ?"

"हा । परन्तु मुझको उस बेचारी पर दया आती है । उस बेचारी का बनेगा क्या ?"

"जब वह मौसी जैसी स्त्री से निर्वाह नहीं कर सकी तो फिर क्या किया जा सकता है ? अपने कर्मों का फल तो मिलेगा ही । इस पर भी तुम्हारा क्या बनेगा और वह लखनऊ में तो बदनाम हो चुकी है ।"

"उसको तुम्हारे व्यवहार पर भी सन्देह हो रहा है । उसको विश्वास हो रहा है कि तुमने उसको लखनऊ से बाहर भेजकर अपने मार्ग से हटा दिया है । इससे वह मन ही-मन तुम पर रुष्ट है और उसका क्रोध बेचारी मौसी पर निकल रहा है ।"

"मैंने तो उसके भले के लिए ही किया था, परन्तु मैं क्या जानता था कि परिस्थिति इस प्रकार बदल जायेगी और मैं विवश हो जाऊँगा । मनुष्य की शक्ति और बुद्धि सीमित तो है ही । मैं इस भावी को समझ नहीं सका । भाग्य इतना प्रबल निकला कि वह हवा में ही लटकी रह गई ।

"देखो शिशिर ! उसको मेरे विवाह तक तो बर्दवान में ही रखो और पीछे उसको वहा से भाग जाने के लिए प्रोत्साहन दो । मौसी के मन से वह बिलकुल उतर जायेगी ।"

सुशील को अपने विवाह-कार्य मे जल्दी करने के लिए कह, शिशिर पार्टी कार्यालय को वापस लौट गया। वह मन मे प्रसन्न था। उसने समझा कि चोर को मोर पड गये। सुशील अपने को बहुत ही चतुर समझता था सो उसकी चतुराई से भी लाभ उठाने वाला आ पहुँचा है।

एक बात वह विचार कर रहा था कि पार्टी के झंझट से वह कैसे छूटे। उसने मन में निश्चय कर लिया था कि वह वैतनिक कार्यकर्ता तो अब नहीं रहेगा। वेतन की उसको अब आवश्यकता भी नहीं रही थी। उसको इलाहाबाद बैंक की वर्दवान शाखा का एक सहस्र रुपये का ड्राफ्ट मिल गया था। यह मौसी के प्रबन्ध के अधीन था।

इस पर भी वह कम्युनिस्ट पार्टी से अभी सर्वथा सम्बन्ध-विच्छेद करना नहीं चाहता था। उसके मन में यह बात अंकित हो चुकी थी कि अब ससार मे कम्युनिज्म का बोलबाला होने वाला है। कम्युनिस्ट राज्याधिकारी एक क्षण के लिए भी मत-भेद स्वीकार नहीं कर सकते। उस राज्य मे न मौसी की सम्पत्ति रहेगी न उससे मिलने वाला यह एक सहस्र रुपया। उस समय निर्वाह तो उनका ही हो सकेगा, जो कम्युनिस्ट स्टेट के साथ सहयोग दे सकेंगे। कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य होना उस समय एक महान् सिफारिश होगी।

वह अभी बाईस वर्ष का युवक था। कम-से कम पचास वर्ष तक जीने की आशा रखता था। वह विचार रखता था कि इस आधी शताब्दी मे होने वाले परिवर्तनो के लिए उसको तैयार रहना चाहिए। 'सैल्फ प्रिजर्वेशन' (स्वरक्षा) जीवन का एक मुख्य सिद्धान्त है और वह इससे भाग नहीं सकता।

पिछले वर्ष भारत के प्रधान मन्त्री रूस-यात्रा पर गए थे और उनका वहा भव्य स्वागत किया गया था। इस वर्ष रूस के प्रधान नेता और प्रधानमन्त्री भारत आये थे और उनका वह स्वागत हुआ है कि ससार-भर मे आज तक किसी भी महापुरुष का कभी भी नहीं हुआ। इस सबका परिणाम वह यह देखता था कि भारत के लोगो की ही रुचि नहीं प्रत्युत्

पूर्ण ससार के लोगों की रुचि कम्युनिस्ट विचारधारा की ओर आकृष्ट क‹ ली गई है।

पार्टी में इन विषयों पर चर्चा होती थी। छोटे-से छोटे कार्यकर्ता से लेकर पार्टी के बड़े-बडे कार्यकर्ता तक सब इस विषय मे सहमत थे कि भारत बिना जाने-बूझे कम्युनिज्म की गोदी मे धकेला जा रहा है। सब लोग अब यह विचार कर रहे थे कि क्रान्ति होगी अथवा द्रुतगति से विकास। भारत के प्रधानमन्त्री में और चाहे कुछ गुण हो चाहे न हो, परन्तु उसने भारत को कम्युनिस्ट बनाने मे बहुत सहायता दी है।

इस बदल रही परिस्थिति में वह कम्युनिस्ट पार्टी से सम्बन्ध विच्छेद करना नहीं चाहता था।

देवेन्द्र कम्युनिस्ट पार्टी का मन्त्री जब लखनऊ आया तो शिशिर ने उससे कहा, "मैं पार्टी का वैतनिक कार्यकर्ता रहना नहीं चाहता।"

"क्यों?"

"मेरा विवाह होने वाला है। कार्य के साथ पूर्ण सहानुभूति रखते हुए भी मैं कार्य के लिए पर्याप्त समय नहीं दे सकूँगा?"

"तो निर्वाह कैसे होगा?"

"मेरी मौसी, जिसने यह विवाह का प्रबन्ध किया है, मुझको एक सहस्र रुपया मासिक देगी।"

"तो वह हज़ार रुपया तुम पार्टी को दे देना। एक सरमायादार की सम्पत्ति को पार्टी-फण्ड में दे देने से अच्छा काम और क्या हो सकता है।"

"वह यह जान लेगी तो मुझको वह रुपया मिलना बन्द हो जावेगा।"

"तुमको खाने-पीने को तो मिलता ही है।"

"पर इतने से तो परिवार का बोझा ढोया नहीं जा सकता।"

"तुमको मैरेज अलाऊंस मिल जायेगा।"

"देव जी! यह नहीं हो सकेगा। मैं यह वचन देता हूँ कि एक

सहस्र में से जो-कुछ बचेगा, सब पार्टी को दे दिया करूँगा और साथ ही मैं पार्टी का कार्य तो करूँगा ही। जब मुझको एक सहस्र निर्वाह के लिए मिलेगा तो मैं कोई व्यवसाय तो करूँगा नहीं।"

देवेन्द्र की बुद्धि में बात आ गई। उसने पूछा, "कब से वेतन बन्द कर रहे हो?"

"इसी मास से।"

"रहोगे कहाँ?"

"अभी तो इसी कार्यालय में ही ठहरा हूँ। विवाह तक यहाँ ही रहूँगा। पश्चात् जहाँ रहूँगा, पार्टी से सम्पर्क रखूँगा।"

"तब तो ठीक है। यहाँ न्यू इण्डिया ऑटो-मोबाईल इञ्जीनियरिंग वर्क्स में झगडा हो रहा है। वह मैं तुम्हारे हाथ में देना चाहता हूँ। तुम उनकी यूनियन के प्रधान भी हो। अब तुमको हाई कमाण्ड की आज्ञानुसार वहाँ के झगडे का संचालन करना है।"

"परन्तु देव जी! इस कारखाने का मालिक तो हमारी पार्टी का सदस्य है। उसने कर्मचारियों की एक प्रबन्धक कौन्सिल बना रखी है और उनकी राय से ही सब प्रबन्ध हो रहा है। इस कौन्सिल ने भारी सुविधायें दे रखी हैं, जिससे कर्मचारी बहुत मजे में हैं।"

"यह झगड़ा तो कौन्सिल की राय न मानने के कारण खड़ा हुआ है। हाई कमाण्ड की राय है कि मालिकों को सबक सिखाना चाहिए कि वे इस प्रकार की कौन्सिल की राय की अवहेलना नहीं कर सकते। साथ ही हमारी पार्टी का यह नियम है कि यूनियन के प्रधान हाई कमाण्ड की आज्ञा पालन करते हैं। विचार करना कमाण्ड का काम है। यूनियन को उनके कहने के अनुसार काम करना चाहिए।"

"मैंने इस बात से इन्कार नहीं किया। इस पर भी पूर्ण परिस्थिति का ज्ञान कराना मेरा कर्तव्य है।"

"परिस्थिति से हाई कमाण्ड परिचित है।"

"पर उसको यह पता नहीं कि कर्मचारी इस कारखाने के मालिक से

परम सन्तुष्ट है और हड़ताल का सफल होना सम्भव नहीं।"

"हमारा विचार है कि हड़ताल तक नौबत ही नहीं आयेगी। केवल धमकी से ही काम चल जायेगा।"

"मैं समझता हूँ कि इसमें हाई कमाण्ड भूल कर रहा है।"

"अब तुम अपने अधिकार से बाहर जा रहे हो। हाई कमाण्ड की सम्मति को ग़लत बताना तुम्हारा काम नहीं।"

शिशिर इस पर चुप कर गया।

१३

शिशिर जानता था कि प्रबोध के कारखाने मे, अन्य ऐसे कारखानो के कर्मचारियो से अधिक वेतन, काम कम और छुट्टियाँ अधिक मिलती हैं। इस कारखाने में झगड़ा कराना किसी प्रकार भी कर्मचारियो के हित में नहीं। इस पर भी आज्ञा-पालन कर्तव्य मान, उसने वर्कर्ज की मीटिंग बुला ली। इसमें उसने बताया कि यदि प्रबोध आपको अधिक छुट्टियाँ देता है तो इसलिए नहीं कि वह आप पर कोई कृपा कर रहा है। यह इसलिए है कि उसके कारखाने मे काम कम आता है और वह एक अच्छा मैनेजर नहीं है। उसकी अयोग्यता के कारण आप लोगों का वेतन कम करने का विचार किया जा रहा है।

कर्मचारी इस बात को मानने के लिये तैयार नहीं हुए। इस समय अमृत का कहना शिशिर को स्मरण हो आया। अमृत ने कहा था, "जब किसी मूर्ख गँवार में उत्तेजना लानी होती है, तो उससे नारे लगवाये जाते हैं। नारे लगने से मस्तिष्क में ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जाती है कि मूर्ख पराकाष्ठा की मूर्खता करने पर उद्यत हो जाते हैं। यह स्मरण कर उसने कर्मचारियों को कहा, "यह ठीक है कि प्रबोध ने कुछ सुविधाएँ दे रखी हैं, परन्तु इस प्रकार वह अपनी अयोग्यता और सरमायादारी को छुपाकर आपको उल्लू बना रहा है। प्राय. सरमायादार यही करते हैं।

"देखो, मैं तुमको एक उदाहरण देता हूँ। अमरीका की फोर्ड फैक्टरी

में मजदूरों को कुछ विशेष सुविधाएं मिल रही हैं, परन्तु उन सुविधाओं को देने का प्रयोजन कर्मचारियों को अफीम खिलाकर सदा अपने वश में रखने के तुल्य है।"

इस पर एक कर्मचारी ने कहा, "मेरे विचार में झगडा उन कारखाने के कर्मचारियों को करना चाहिए, जिनको हमसे अधिक कष्ट है।"

"यही तो असम्भव और अयुक्तिसंगत है। जो अच्छे लोग हैं, वही उन लोगों की अवस्था सुधारने का यत्न कर सकते हैं, जिनके पास कुछ नहीं है। आपको अच्छा वेतन मिलता है। आपके पास कुछ धन होने की भी आशा है। इस कारण आप ही तो मजदूरों की लड़ाई लड सकते हैं।"

इस युक्ति के सम्मुख प्रश्नकर्ता चुप कर गया। वास्तव में वह इसका उत्तर नहीं जानता था। इसको सुअवसर जान शिशिर ने कर्मचारियों को जोश दिलाना आरम्भ कर दिया।

"हम मज़दूर सब भाई-भाई हैं। हमने यहाँ मजदूरों का राज्य स्थापित करना है। इसके लिए जो सम्पन्न कर्मचारी हैं, उनको ही आगे बढ़ना चाहिए। आओ, हम सरमायादारी को जड से उखाड़ने के लिए एक हो जायें।"

इतना कह उसने नारा लगा दिया, "सरमायादारी।"

कुछ मजदूरों ने आवेश मे कह दिया, "मुर्दाबाद।"

"यह नहीं। सब मिलकर कहो, सरमायादारी।" उसने कुछ और ऊँची आवाज मे कहा। अब बहुत से उपस्थित कर्मचारियों ने जोर से कह दिया, "मुर्दाबाद।"

"मजदूरों का हक।"

नारा लग गया, "लेकर रहेंगे।"

"मुनाफाखोर।"

"मुर्दाबाद।"

इस समय सब लोग नारे लगाने लगे थे। शिशिर कुमार ने फिर

कहा, "भारत-रूस मैत्री।"

"चिरजीव हो।"

इन नारों से विचार्य विषय कि प्रबोध के कारखाने मे कुछ खराबी है अथवा नहीं, विस्मरण हो गया और रूस के नमूने का मजदूर-राज्य भारत में लाने का विचार उग्र हो गया। यह निश्चय हो गया कि प्रबोध को नोटिस दे दिया जाये कि उनके वेतन में कटौती न हो और वह उनकी कौंसिल की राय की अवहेलना न करे। नोटिस इस प्रकार था, "न्यू इण्डिया ऑटो-मोबाइल इन्जीनियरिंग वर्कस को चलते हुए एक वर्ष से ऊपर हो चुका है। कारखाने में काम करने वाले कर्मचारियो को बोनस मिलना चाहिए था। इसके विपरीत सब कर्मचारियों के वेतन में कटौती की गई है।

"इस कटौती के करने के लिए न तो कोई कारण है न ही मालिकों को अधिकार है। जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं का दाम अभी कम नहीं हुआ। अतएव वेतन कम नहीं होना चाहिए। इस कटौती की यूनियन घोर निन्दा करती है और यदि मालिकों ने कटौती वापिस न ली तो कारखाने में हड़ताल कर दी जायेगी।"

यह प्रस्ताव पढकर सुनाया गया और नारों के घोर नाद के भीतर पास कर दिया गया। अगले दिन प्रस्ताव प्रबोध की मेज पर रख दिया गया।

यथा समय प्रबोध ने उत्तर दिया। उत्तर था .—

"मैं स्वय मज़दूर हूँ और मजदूरों के हित मुझको सदा प्रिय रहे हैं। यही कारण है कि मैंने अपने कारखाने के कर्मचारियों को बाहर के कारखानों से अधिक वेतन और सुविधायें दे रखी हैं। इस वर्ष कारखाने में हानि हुई है। इस कारण वेतन और अन्य सुविधायें कुछ सीमा तक कम करनी पड़ी हैं। मेरा विचार है कि कर्मचारियों को अगले वर्ष तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। आपको मेहनत और समझ-बूझ से काम करना चाहिए, जिससे कारखाने में लाभ हो और आपको अधिक वेतन और भत्ता देने

पर विचार किया जा सके।"

इस उत्तर पर यूनियन मे विचार हुआ और यह निश्चय कर दिया गया कि पन्द्रह दिन का नोटिस दिया जाये। उसमें मॉगों को दुहराया जाये और लिख दिया जाय कि स्वीकार न होने पर हड़ताल कर दी जायेगी।

यह नोटिस प्रबोध को मिला तो वह अवाक् रह गया। वह स्वयं शिशिर कुमार से मिला और उसने उसको बताया, "मै अपने कर्मचारियों को अन्य कारखानों के कर्मचारियों की भॉति केवल वेतन ही नहीं देता प्रत्युत् इसके साथ उनके परिवार की सदस्य-संख्या पर एलाउन्स भी देता हूॅ। प्रत्येक कर्मचारी का एक आधारभूत वेतन है। वह वेतन योग्यता और कार्यानुसार न्यूनाधिक होता है। साथ ही प्रत्येक कर्मचारी को उसके आश्रितो की सख्या के अनुसार भत्ता भी देता हूॅ। वास्तव में मैंने वह भत्ता ही कम किया है। पहले प्रत्येक सज्ञान आश्रित के लिए बारह रुपये मासिक देता था। अब वह आठ रुपये कर दिया है। प्रत्येक अल्प-वयस्क बच्चे के लिए सात रुपये मासिक देता था, अब वह पॉच रुपया कर दिया है। आधारभूत वेतन कम नहीं किया।"

शिशिर ने यह सब बात सुनी तो अवाक् रह गया। जहॉ इस प्रकार की सुविधायें मिलती हो, वहॉ झगड़ा करना उसको उचित प्रतीत नहीं होता था। इस पर भी वह जो-कुछ कर रहा था, आप विचार कर तो नहीं कर रहा था। यह सब वह हाई कमाण्ड की आज्ञानुसार कर रहा था। यदि उसके अपने बस की बात होती तो वह उसी समय किसी प्रकार का समझौता कर लेता, परन्तु वह विवश था। उसने कह दिया, "मैं आपकी ये बाते हाई कमाण्ड के सामने रख दूॅगा।"

"उत्तर कब तक आयेगा?"

"यह मै कैसे बता सकता हूॅ।"

"तो उत्तर आने तक हड़ताल नहीं की जायगी न?"

"इस विषय मे अभी कुछ नहीं कह सकता।"

"तो काम कैसे चलेगा ?"

"जैसे चल रहा है।"

"मैं इसका मतलब नहीं समझा। हड़ताल हो गई तो काम कैसे चलेगा ?"

"आप कर्मचारियों को कह दीजिये कि उनकी माँग पर विचार किया किया जा रहा है।"

"विचार करने का तो प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता। लाभ हुआ ही नहीं। वेतन, जो बहुत अधिक है, दिया नहीं जा सकता। मैं तो यह लिख रहा हूँ कि यदि मेरे हिसाब में यूनियन को सन्देह है तो वह मेरी किताबें देख सकती है।"

"किताबें तो बनाई जा सकती हैं।"

"जब आप मुझ पर विश्वास ही नहीं करते तो फिर मैं क्या कह सकता हूँ ? इससे मुझको हानि होगी, परन्तु मजदूर भी लाभ नहीं उठा सकेंगे।"

"आप ठीक कहते होंगे। परन्तु मज़दूर-वर्ग को इस बात का विश्वास कैसे हो सकता है ?"

"यह आप कराइये।"

इस बातचीत का कुछ भी परिणाम नहीं निकला और निश्चित दिन कारखाने में पूर्ण हड़ताल हो गई। हड़ताल होने पर प्रबोध एक-एक कर्मचारी को मिला। प्रायः सब मिलने वाले प्रबोध की बात को मानते थे, परन्तु अगले दिन जब सब मिलकर नारे लगाते तो प्रबोध की बातों को भूल जाते थे।

हड़ताल चलती रही। जब कर्मचारी आतुर हो गए और बहुतों के घर खाने को नहीं रहा तो यूनियन के कर्मचारी प्रबोध से वार्तालाप करने के लिए तैयार हो गए। यह वार्तालाप भी पन्द्रह दिन तक चलता रहा और फिर एकाएक हड़ताल का समाचार नीला देवी को मिल गया। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रबोध के पिता को सूचना मिल गई और दोनों के

यत्न से हड़ताल का अन्त उस प्रकार हुआ, जिसकी आशा यूनियन के अधिकारी नही करते थे और न ही कर्मचारी उसके लिए तैयार थे।

यूनियन और कम्यूनिस्ट पार्टी मे शिशिर कुमार कड़ी का काम करता था। वह आरम्भ से ही हड़ताल को अनुचित समझता था। ज्यूँ-ज्यूँ पार्टी उसको वह काम करने को कहती, जिसको उसकी बुद्धि उचित नहीं समझती थी, उसके मन पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव उत्पन्न होता चला जाता था। अनुशासन में बँधा हुआ वह हड़ताल का सचालन कर रहा था, परन्तु वह मन-ही मन समझ रहा था कि सब-कुछ अनुचित हो रहा है। वह जानता था कि हड़ताल का प्रभाव उन पर नहीं हो रहा, जो इसको चलाने की आज्ञायें दे रहे हैं। वह यह भी समझता था कि कर्मचारी तो बेचारे भावुकता के अधीन व्यर्थ की यन्त्रणा सह रहे हैं। वे न तो समझने की योग्यता रखते थे और न ही उनको समझने का अवसर दिया जाता था। नारो और जोशीले व्याख्यानो के प्रभाव मे वे असल बात का ध्यान छोड़कर मजदूर-राज्य स्थापित करने की बाते करने लग जाते थे।

अब कारखाना बिक गया। प्रबोध बेकार हो गया। सब कर्मचारी नौकरी से निकाल दिये गए। तीन कर्मचारी मारे गए और बीस के लगभग घायल हो गए।

नीला ने पुराने कर्मचारियो को पुन. नौकरी दिलाने के लिए यत्न करने का आश्वासन दिया। इस पर भी हाई कमाण्ड की आज्ञा आई कि कारखाने की बिक्री पर कचहरी मे से निषेधाज्ञा ली जाये। इस आज्ञा को पाकर तो शिशिर हताश हो गया। उसने हाई कमाण्ड की आज्ञा मानते हुए निषेधाज्ञा के लिए प्रार्थना तो कर दी, परन्तु उसका कम्युनिस्ट कार्य-विधि पर विश्वास उठ गया।

आज वह कचहरी से सीधा सुशील की कोठी पर चला गया। उसका मन पार्टी के कार्यालय को जाने को नहीं किया। सुशील ने उसको धम्म से कुर्सी पर बैठते देख चिन्ता मे पूछा. "शिशिर। क्या बात है?

स्वास्थ्य तो ठीक है ?"

"मैं अति विक्षुब्ध हूँ। मैं नहीं जानता कि क्या करूँ। इस हड़ताल में मैंने अपनी आत्मा की हत्या की है।"

"क्यों ?"

"मैं जानता था कि लखनऊ में यदि कोई कारखाना है, जहाँ कर्मचारियों को उचित सुविधायें मिल रही थीं, तो वह प्रबोध का कारखाना है। वहाँ हड़ताल कराने के लिए कोई कारण नहीं था, परन्तु अनुशासन के बल पर मुझसे वह सब कुछ कराया गया, जो मैं नहीं करना चाहता था। आज यह मुकद्दमा करना भी मुझको अयुक्ति सगत व्यवहार प्रतीत हुआ है। मैं यह करना नहीं चाहता था। यह कारखाने के नये मालिकों को व्यर्थ में तग करने के विचार से है। वर्तमान कर्मचारियों को इससे कुछ भी लाभ की आशा नहीं। जो उनमे से नौकरी पाने वाले थे, वह मुकद्दमा समाप्त होने तक अभी और बेकार रहेंगे।

"मुझको सबसे अधिक खेद यह सुनकर हुआ है कि मजदूरों को यह कष्ट इस कारण दिया जा रहा है कि सरकार बदल कर कम्युनिस्टों के हाथ में आ जाये, अर्थात् राजनीतिक शक्ति हथियाने के लिए मजदूरों को हथियार बनाया जा रहा है।"

"तो फिर क्या करना चाहते हो ?"

"मैं बीमार होकर तुम्हारे हस्पताल में प्रवेश पाना चाहता हूँ।"

"इससे क्या होगा ?"

"यह काम मेरे हाथ से लेकर किसी दूसरे के हाथ में दे दिया जायेगा।"

"पर दूसरी ओर भी तो कुछ हो रहा है, वहाँ क्या करोगे ? हस्पताल में लेटने से वहाँ कैसे काम चलेगा ?"

"कहाँ, क्या हो रहा है ?"

"कल अमृत की चिट्ठी उसके पिता को मिली है।"

"क्या लिखा है उसने ?"

"लिखा है कि वह अब बालिग हो गई है। अब अपना विवाह स्वय करने में स्वतन्त्र है। यदि उसके माता-पिता उसके भागने को क्षमा कर दे, तो वह लौट आयेगी।"

शिशिर इस समाचार को सुनकर अवाक् रह गया। वह इसका अर्थ समझने का यत्न करने लगा। जब उसने इस पर विचार किया तो उसको यह समाचार अति भयानक प्रतीत हुआ।

वह दो मास तक हड़ताल के काम मे लीन रहने के कारण अमृत की सुध-बुध ही भूल गया था। उसको ऐसा प्रतीत हुआ कि कदाचित् अमृत उसकी प्रतीक्षा करती-करती थक कर यह समझी है कि वह भी उसको हवा मे लटकता छोडकर छुप कर बैठ गया है।

उसने और अधिक जानने के लिए पूछा, "तुम्हे यह समाचार किसने दिया है?"

"नीला देवी ने कल बताया था। उसको हरभजन सिंह ने यह बताया है। चिट्ठी में लिखा है कि यदि उसके माता-पिता उसको क्षमा कर रहे है, तो वे अपनी इस बात को अपने सम्बन्धियों और मित्रों मे घोषित कर दें। इससे उसको विदित हो जायेगा और वह लौट आयेगी।"

"तो उसने अपना पता नहीं लिखा?"

"नहीं। यह पत्र भी कलकत्ता से आया है।"

"मुझको मौसी का पत्र पाच-छः दिन हुए मिला था। उसमे उन्होंने पिछले मास मेरे बर्दवान न जाने के लिए डाट बताई है। वे अमृत को लेकर कलकत्ता गई थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि उसने वह चिट्ठी वहा से ही लिखी है।"

"तो भाग जाओ। मुझको कुछ गड़बड प्रतीत होती है। मै अभी उसका लखनऊ आना पसन्द नही करूंगा। अभी मेरे विवाह मे पाच दिन बाकी हैं। उसको तब तक वहा रोको।"

"अपने विवाह का एक निमन्त्रण-पत्र मिस्टर तथा मिसेज शिशिर के नाम का दे दो। इससे उसको यहा आने से रोकने मे सहायता मिलेगी।"

सुशील ने छपा निमन्त्रण-पत्र दे दिया। उस पर शिशिर तथा उसकी 'पत्नी' का नाम लिख दिया।

१४

जब वढियाम सिह ने यह विख्यात करना आरम्भ किया कि अमृत आयेगी और अपनी इच्छा से विवाह करेगी तो यह सूचना गुरुद्वारा कमेटी के मन्त्री सरदार कर्तार सिह को भी पहुँच गई। वह एक दिन सरदार वढियाम सिह से मिलने आया। उसने कुछ काल तक इधर-उधर की बात कर अमृत की बात चला दी, "सुना है अमृत का पत्र आया है?"

"हाँ, उसने लिखा है कि अब वह बालिग हो गई है। इस कारण यदि उसको विवाह अपनी रुचि-अनुसार करने की स्वीकृति दे दी जाये तो वह लौट आयेगी।"

"इस सबकी अब क्या आवश्यकता है? जहाँ तीन महीने वह रही है, वही रहती हुई विवाह क्यो नही कर लेती? अपना मुख काला कर और हमको अपमानित, कर वह यहाँ आकर क्या करेगी?"

"मै ऐसा नही समझता। उसकी इच्छा के बिना हम विवाह करने लगे थे। इस कारण वह यहाँ से चली गई थी। वह नाबालिग होने के कारण अपनी बात मना नही सकती थी। अब वह अपने मन की बात करने मे स्वतन्त्र है। इस कारण लौट आने मे उसको कोई हानि प्रतीत नही हुई।"

"बात तो एक ही है, भाई साहब।"

"कुछ भी समझो।"

"चिट्ठी कहाँ से लिखी है?"

"कलकत्ता से।"

"तो कब तक आ रही है?"

"मेरा विचार है कि एक दो दिन मे आ जावेगी।"

"तो आप उसको अपने घर मे रख लेंगे ?"

"क्यों न रखूँगा ? आखिर तो वह मेरी लडकी ही है ।"

"तो आप उसका विवाह करेंगे ?"

"हाँ, यदि उसका चुनाव हमको पसन्द आया तो इसमे क्या हानि है ?"

"तो आप उसको अपनी सम्पत्ति मे से भाग भी देंगे ?"

"यह तो मेरे मरने के समय विचार करने की बात है । साथ ही अभी इस विषय में कुछ कहना कठिन है ।"

यह सुनकर सरदार कर्तार सिह गम्भीर विचार मे डूब गया । इस पर सरदार बढियाम सिह ने पूछा, "क्या बात है सरदार साहब ?"

"बात यह है कि मैंने प्रीतम सिह को लिखा था कि अमृत का पत्र आया है और उसने लिखा है कि मै पता करूँ कि वह कहाँ है । वह वहाँ जाकर उससे मिलकर स्वयं बातचीत करना चाहता था । मै भी यही समझता हूँ कि यदि उसका विवाह उससे ही हो जावे तो बहुत ठीक होगा । प्रीतम सिंह का विचार है कि वह अब अपनी अवस्था से निराश हो चुकी है और वह उसको अपने से विवाह करने के लिए राजी कर लेगा ।"

इस बात को सुनकर बढियाम सिह को आश्चर्य हुआ । उसने पूछा, "सरदार कर्तार सिह ! क्या प्रीतम सिह को वह अब भी भली प्रतीत होती है ?"

"आजकल के लडके है ! वे हमारे युग के नहीं है ।"

'परन्तु जब हरभजन सिह ने केश कटवाये थे, तब तो तुम कहते थे कि मुझे उसको फारखती दे देनी चाहिये । अब अपने लडके की सिफारिश करने क्यो चले आये हो ?"

"केवल इसलिए कि खून पानी से गाढा होता है ।"

"ओह ! समझ गया, कर्तार सिह ! तुम्हारा मतलब यह है कि मै मूर्ख था, जो तुम्हारे कहने पर लडके से बोलना बन्द कर बैठा था ।"

"पर फारखती तो नहीं दी न ।'

"वह इसलिए कि हरभजन की माँ, भागन, मुझसे अधिक बुद्धि रखती थी।"

"कुछ भी कहो वढियाम सिंह! अब लड़की के भाग जाने के पश्चात् उससे जो कोई भी विवाह करने का विचार करेगा, वह प्रशंसा का पात्र माना जायगा।"

"अच्छी बात है। मैं तुम्हारा धन्यवाद करता हूँ। तुमने मेरी आँखें समय पर ही खोल दी हैं। प्रीतम सिंह को लिख दो कि जब अमृत लखनऊ आ जायेगी तो वह आ जाये और उसको मना ले।"

"मेरा तो केवल इतना ही मतलब है कि अब भी यदि वह गुरुमुख हो सके तो अच्छा ही है। यदि वह प्रीतम को पसन्द न करे तो किसी अन्य गुरु के प्यारे युवक से उसकी भेंट करा देना। वाहेगुरु सहायता करेगा।"

परिणाम यह हुआ कि वढियाम सिंह, जहाँ अमृत के लौटने की प्रतीक्षा करने लगा, वहाँ वह किसी सिख लड़के की, जो उसको पसन्द आ सके, खोज भी करने लगा। रह-रहकर उसके मन में विचार उठ रहा था कि जिसके साथ वह भागकर गई थी अब उससे लड़कर लौट रही है और अब उसको विवाह पर राजी कर लेना सुगम होगा।

जब एक बार बात आरम्भ हुई तो कई सिख लड़के धनी बाप की लड़की से विवाह करने के लिए तैयार होने लगे।

अमृत पत्र आने के दस दिन पश्चात् लौट आई। प्रात. बनारस से तार आया कि वह देहरादून एक्सप्रेस से लखनऊ पहुँच रही है। उसको लेने के लिए स्टेशन पर हरभजन सिंह को भेजा गया। अमृत के माता-पिता ने स्वय जाना उचित नहीं समझा। हरभजन सिंह अपनी मोटर लेकर स्टेशन पर जा पहुँचा। वह यह जानना चाहता था कि अमृत अकेली आती है अथवा कोई अन्य भी उसके साथ आता है।

जब अमृत अकेली फर्स्ट क्लास के डिब्बे से निकली तो उसके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा। अमृत न केवल फर्स्ट क्लास के डिब्बे से निकली थी, प्रत्युत् उसके साथ एक बड़ा-सा बिस्तर और एक चमड़े का सूटकेस

भी था। साथ ही वह बढ़िया रेशमी सूट पहने थी। इसके अतिरिक्त उसके मुख पर किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया था। हरभजन सिंह को अब भी वह पहले की भाति प्रसन्नवदन और तरो-ताजा प्रतीत हुई थी। उसको किसी प्रकार से भी वह पतित हुई दिखाई नहीं देती थी। उसकी आँखें अभी भी रोशन थीं और पहले की भाँति निधड़क थीं।

अमृत ने हरभजन को पहले देखा। उसने हाथ जोड़कर सत श्री अकाल कही तो हरभजन उसके डिब्बे के बाहर जा खड़ा हुआ। वह गाडी से उतरी तो उसने स्नेह से अपने साथ लगा कर उसके सिर पर प्यार दिया। उसने पूछा, "तो तुम आ गई हो अमृत ? कैसी हो ?"

"भैया ! आप ठीक हैं ?" इतना पूछते-पूछते उसकी आँखें तरल हो उठीं।

"हाँ, हम सब ठीक हैं।"

"भापा जी और मम्मी ?"

"ठीक है। तुमने बहुत अच्छा किया है जो आ गई हो।"

जब दोनों मोटर में सवार होकर घर को आ रहे थे तो अमृत ने पूछा, "भैया। तुम्हारा विवाह ?"

हरभजन सिंह ने मुस्कराते हुए उसकी आँखों मे देखकर कहा, "अभी नहीं।"

"तो अभी आपने निश्चय नहीं किया ?"

"फिर बताऊँगा। पहले तुम बताओ। यह इतना सामान कहाँ पा गई हो ?"

"मैं अपनी एक सहेली की मौसी के घर पर ठहरी हुई थी। वह मुझसे बहुत स्नेह करती थी। सब उसने ही दिया है।"

"पर यह कहानी क्या है ? तुम्हारी चिट्ठी आई कलकत्ता से, तुम्हारा तार आया बनारस से और तुम आ रही हो बर्दवान से।"

"यदि यह न करती तो पिता जी वहाँ पर जाकर पकड़ न लेते और..."

"और क्या ?"

"कह नहीं सकती। कदाचित् मेरा भ्रम ही हो। मुझको विश्वास-सा हो गया था कि जबरदस्ती मेरा विवाह कर देते।"

"और हम कहाँ चले जाते?"

"तो आप मुझको बचाते?"

"क्यों नहीं। मैं जान लड़ा देता और तुम्हारी इच्छा के बिना तुम्हारा विवाह न होने देता।"

"सच? मुझको पता नहीं था। खैर, अभी भी कुछ हानि नहीं हुई।"

"अच्छा यह तो बताओ कि तुमको हमारे विचारों का पता कैसे चला?"

"मेरी सहेली आपके विचारों की टोह लेती रहती थी।"

"तुम्हारे इस प्रकार घर से लापता हो जाने से घर की बदनामी बहुत हुई है।"

"तो आप सबको मेरे जाने से बहुत कष्ट हुआ प्रतीत होता है?"

"अब जो हुआ सो हुआ। पहले तुम बताओ कि तीन महीने वहाँ कैसे व्यतीत हुए हैं?"

"मुझको शारीरिक कष्ट तो किंचित्मात्र भी नहीं हुआ। मानसिक दुःख अवश्य था। इसी कारण आवश्यक अवधि समाप्त होते ही लिखा था।"

"कुछ भी कहो, यह सब ठीक नहीं हुआ। नीला देवी भी तुम्हारे व्यवहार को पसन्द नहीं करती थी।"

"अब तो हो गया। आप अब मेरा क्या करने जा रहे हैं?"

"यह तो तुम उनसे पूछना, जिनके घर चल रही हो। मेरा अपना घर अभी कोई नहीं बना।"

"दिल्ली के प्रोफेसर साहब की लड़की का क्या हुआ है?"

"उसको तुम्हारे भाग जाने का पता चला तो उसने किसी अन्य से विवाह कर लिया।"

"और प्रबोध जी की बहन माधुरी का क्या विचार मालूम होता है ?"

"वह तो ठीक है, परन्तु मेरा, बहुत जाँच-पडताल के पश्चात्, लीलावती का चुनाव था।"

"सुशील का भी तो विवाह हो रहा है ?"

"कल होने वाला है।"

"हाँ, मुझको भी निमन्त्रण मिला है।"

"सच ? उसको तुम्हारा पता मालूम था क्या ?"

"नही। मेरी सहेली ने, जो सुशील को जानती है, निमन्त्रण लेकर भेजा था।"

इससे हरभजन सिह गम्भीर विचार मे पड गया।

इस समय मोटर कोठी में पहुँच गई थी। अमृत मोटर से उतर कर सीधी पिता जी के कमरे में चली गई। वहाँ उसकी माँ और पिता दोनो उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। अमृत ने पहुँचकर दोनो के चरण-स्पर्श किये और हाथ जोड़कर सत् श्री अकाल बुलाई।

"यह कहाँ से सीख आई हो ?" वढियाम सिह ने पूछा।

"जिनके यहा तीन मास तक रही हूँ, वहा सब छोटे-बड़ों के चरण-स्पर्श करते हैं।"

"ओह ! आओ बैठो।" वढ़ियाम सिह ने कहा, "सुनाओ। कहा रही हो और कैसे रही हो ?"

अमृत बैठ गई। उसके माता-पिता भी बैठ गये। इस समय तक हरभजन सिंह भी सोहनू के हवाले सब सामान देकर वहा चला आया था। उसने आते ही कहा, "यह लम्बी यात्रा से आई है। बहुत थकी हुई प्रतीत होती है। इसको आराम करने देना चाहिये।"

"नहीं भैया !" अमृत ने कहा, "कल मैं मिस्टर सुशील के विवाह पर जाना चाहती हूँ। नहीं जानती कितना समय लगेगा। मैं चाहती हूँ कि पिता जी को आज ही मेरे विषय में अपने विचार बना लेने दूँ।"

"मैंने विचार क्या बनाने हैं ? तुमने लिखा है कि तुम अपनी इच्छा

से विवाह करोगी, सो कर लेना। मुझको आपत्ति नहीं होगी। यहां की परिस्थिति यह है कि तुम्हारी सब करतूत का ज्ञान होने पर भी लोग उसको भूल जाना ही ठीक समझेंगे। मेरे धन का, जो मैं तुम्हारे विवाह पर देने वाला हूँ, लोभ बहुत भारी है।"

"भैया तो कहते थे कि मेरे घर से भाग जाने पर घर-भर का भारी अपमान हुआ है।"

"यह तो है ही, परन्तु वह अपमान मैं अपने धन से ढाप रहा हूँ। मैंने यह घोषणा कर दी है कि मैं तुम्हारे विवाह पर दो लाख रुपया देने वाला हूँ।"

"दो लाख?" अमृत ने आश्चर्य से अपने पिता के मुख पर देखते हुए कहा, "आपने यह घोषणा कर मेरे साथ भारी अन्याय किया है।"

"क्या अन्याय किया है? मैंने तुम्हारी रक्षा के लिए घर को लुटा दिया है।"

"जिसको रक्षा की आवश्यकता नहीं, उसकी रक्षा पर कुछ भी व्यय करना उसको दुर्बल सिद्ध करना है। आपने यह घोषणा कर मेरे व्यवहार को अपमानजनक मान लिया है। मुझको आपकी सूझ-बूझ पर भारी खेद है।

"जितने भी लोग इस इनाम की सूचना पाकर मुझसे विवाह करने आयेंगे, मुझे आवारा समझकर ही आयेंगे। नहीं पिता जी। यह नहीं होगा।"

"तो क्या होगा?"

'मैं यहां से एक पाई का भी दहेज लेकर नहीं जाऊँगी। किसी को मुझसे विवाह करना है करे, नहीं करना न करे। केवल इतना हीं नहीं, प्रत्युत मैं यह बात भी स्पष्ट कर दूँगी कि मैं आपसे जीवन-भर एक कौड़ी भी नहीं लूँगी। आपको देने की जब बुद्धि ही नहीं तो लेकर क्या करूँगी। यदि अब भी आपका विचार मुझको घर पर रखने का बदल गया हो तो बता दीजिये। मैं किसी अन्य स्थान पर चली जाऊँगी।"

"कहाँ चली जाओगी ?"

"अभी तो कार्लटन होटल में जाऊँगी। कल तक किसी अन्य स्थान र प्रबन्ध कर लूँगी।"

बढ़ियाम सिंह भौचक्का हो मुख देखता रह गया। उत्तर हरभजन सिंह ने दिया। उसने कहा, "मैं समझता हूँ कि अमृत ने पिता जी का आशय नहीं समझा। पिता जी ने उसके दहेज की घोषणा कर कुछ भी बुरी बात नहीं की। इससे किसी अच्छे वर के मिल जाने की सम्भावना अधिक हो गई है।"

"भैया! जो रुपये के लोभ से विवाह करने आयेंगे, वे अच्छे होंगे क्या ? नहीं भापा जी।" उसने अपने पिता को सम्बोधन कर कहा, 'मेरे विवाह पर एक पाई भी व्यय नहीं होगी।"

"तो विवाह कहाँ होगा ?"

"यह तो मैं अभी नहीं जानती।"

अमृत ने समझा कि उसने अपने मन की बात अपने माता-पिता को कह दी है। इसके पश्चात् वह उनको विचार करने के लिए समय देना चाहती थी। अतएव वह उठ पड़ी और यह कह, "अब मैं आराम करना चाहती हूँ।" अपने कमरे मे चली गई। हरभजन सिंह उसके पीछे-पीछे जा पहुँचा। अमृत ने अपना सूटकेस खोलकर स्नान के लिए सामान निकाल लिया और स्नानागार मे चली गई। हरभजन सिंह वहाँ ही बैठा उसकी प्रतीक्षा करता रहा। उसने उसका बिस्तर, जो सोहनू ने खोल दिया था, देखा तो चकित रह गया। उसके बिस्तर मे एक रईस के योग्य सामान था। उसका अनुमान था कि शॉल, जो रात को उसके ओढने के लिए था, कम-से-कम पाँच सौ रुपये के मूल्य का अवश्य था। वह मन मे विचार करने लगा था कि यह कौन सहेली हो सकती है, जिसकी मौसी ने इसको इतना कीमती सामान दिया है। जब सोहनू बिस्तर मे से कपड़े निकाल झाड़ चुका तो उसने पलंग पर बिस्तर लगा दिया। इस समय हरभजन सिंह ने सोहनू को कहा, "जाओ, हम दोनों के लिए खाना यहाँ

ही ले आओ।"

सोहनू खाना लेने चला गया। अमृत स्नान कर कपडे पहन, बाहर निकली तो हरभजन ने देखा कि वह बहुत बढिया रेशम के कपड़े पहने हुए है। वह चकित रह गया। उसने पूछा, "अमृत! यह कपडे तुम्हारी सहेली की मौसी ने ही दिये हैं?"

"हाँ भैया! पर ये तो कुछ भी नहीं। और भी बहुत-कुछ दिया है। आप देखेंगे कि मुझको क्या-क्या दिया है? जब उनको पता चला कि मैं सुशील के विवाह पर आ रही हूँ तो उन्होंने पहनने को भूषण भी दिये हैं। जब मैंने लेने से इन्कार किया तो उन्होंने कहा कि विवाह के पीछे वापिस भी कर सकती हूँ।"

इतना कह अमृत ने भूषणों का डिब्बा खोलकर दिखाया। देखकर हरभजन सिंह की आँखें चकाचौंध रह गईं। इस समय सोहनू खाना लेकर आ गया। इस कारण हरभजन सिंह ने और कुछ नहीं कहा। इस पर भी वह मन-ही-मन इस सब में किसी रहस्य की सम्भावना मान रहा था। ये भूषण इत्यादि बीस-तीस सहस्र से कम का सामान नहीं था।

भोजन करने के पश्चात् जब सोहनू चला गया तो उसने अपने मन में उठ रहे सन्देहों को कह दिया, "अमृत! मुझको कुछ ऐसा प्रतीत हो रहा है कि इतनी कीमती भेंटें अकारण नहीं दी जा सकतीं।"

"हो सकता है, कि मौसी का इसमें कुछ उद्देश्य हो। परन्तु जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैंने इनके पाने के लिए किसी प्रकार का न तो वचन दिया है और न ही कुछ भी प्रतिकार दिया है।"

चार

: १ :

इस बार शिशिर कुमार बर्दवान पहुँचा तो अमृत को बहुत ही अधीर देख विस्मय करने लगा। उसने पूछा, "अमृत! क्या बात है कि तुमने पत्र लखनऊ भेज दिया है?"

"मुझको यहाँ आये तीन मास से ऊपर हो गये हैं। मेरे यहाँ आने से सुशील बाबू के मन मे भारी परिवर्तन हो गया है। इस कारण मै समझती हूँ कि मुझको अब अपने भविष्य के विषय मे कुछ-न-कुछ निर्णयात्मक कार्य करना चाहिये। जिस प्रयोजन से मै यहाँ आई थी, अर्थात् बालिग होने तक छुपकर रहना, वह पूर्ण हो गया है। अब आप आ गये हैं तो उस पत्र की, जो मैंने पिता जी को लिखा था, प्रतिक्रिया भी लाये होंगे?"

"हाँ। नीला के द्वारा यह पता चला है कि तुम्हारे पिता तुम्हारी बात को मानने के लिए तैयार हैं और वे तुमको अपने घर रखने के लिए तैयार हैं।"

"तो ठीक है। अब मुझको जाना ही चाहिये।"

"तो मेरा और मौसी का क्या बनेगा?"

"यह अब आप पर निर्भर है। आप क्या करना चाहते हैं?"

"देखो अमृत! सुशील का तो विवाह हो रहा है। मेरा विचार है

कि तुम उस ओर से बन्धन मुक्त हो गई हो। अब यदि तुम मुझसे विवाह करने के लिए तैयार हो जाओ तो इसकी विधि विचारी जा सकती है।"

"मैं आपकी मौसी की पतोहू बनने के लिए तो तैयार हूँ, परन्तु आपकी बहू तो आपके बनाने से ही बन सकती हूँ।"

"ओह! धन्यवाद अमृत! तो आज रात ही हमारा विवाह हो जायेगा।"

"वाह! मेरे कहने का यह अभिप्राय कैसे हो गया? मेरा मतलब यह है कि इस उद्देश्य से हमको अपनी योजना बनानी चाहिये। विवाह तो विधिपूर्वक ही होगा।"

शिशिर मुख देखता रह गया। इस पर अमृत ने अपनी योजना बता दी। उसने कहा, "आप अपनी मौसी से यह कहकर कि मुझको सुशील के विवाह पर जाना है, मेरी लखनऊ जाने की तैयारी करवा दीजिये। वहाँ चलकर विवाह का प्रबन्ध मैं कर लूँगी।"

"बात तो ठीक है। तो मैं आज ही मौसी से कहकर प्रबन्ध करवाता हूँ।"

उसी रात शिशिर ने मौसी से कह दिया, "मौसी! सुशील को तो जानती हो न। उसका विवाह होने वाला है और उसने मुझको बहू सहित विवाह में सम्मिलित होने का निमन्त्रण दिया है। बहू की भी इच्छा है कि विवाह में जाये। सुशील से उसका परिचय भी है।"

अमृत समीप ही बैठी थी। इस कारण मौसी ने उससे पूछा, "क्यों बहू? क्या विचार है?"

"माँ जी आज्ञा देंगे तो अवश्य जाऊँगी।"

"जाओ बेटा! उसको मेरी ओर से बधाई देना और उसकी बहू के लिए यहाँ से कुछ, जो मन करे, भेंट भी लेते जाना।"

"मैं आपकी बहुत ही आभारी हूँ।" इतना कह उसने मौसी के चरण-स्पर्श किये। प्रतिमा देवी ने सिर पर हाथ फेरकर आशीर्वाद देते हुए पूछा, "तो कब जाओगी और कब तक लौटोगी?"

"जब आप कहेंगी और जब तक वहाँ रहने की आज्ञा देंगी, तब तक ही रहूँगी।"

"कहाँ ठहरोगे, वहाँ?"

"जहाँ ये रखेंगे।"

"देखो शिशिर! सुशील के घर तो एक-आध दिन से अधिक नहीं रहना। यदि और रहने की आवश्यकता हो तो किसी अच्छे-से होटल में रह जाना।"

शिशिर ने सुशील के विवाह का निमन्त्रण-पत्र देखकर बताया, "मौसी आज है दो तारीख। हम कल यहाँ से पजाब मेल से जायेंगे और परसों लखनऊ पहुँच जायेंगे। चौथे दिन विवाह है। हम होटल मे ठहरेंगे और वहाँ से उसकी बरात मे शामिल होंगे। विवाह छः तारीख को समाप्त हो जायगा और हम आठ तारीख को वहाँ से चलकर नौ को बर्दवान पहुँच जायेंगे।"

"बहुत ठीक। मैं नौ तारीख को तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी।"

इस प्रकार योजना का प्रथम चरण तो निश्चित् हो गया। अगले दिन वे पजाब मेल से चल पड़े, परन्तु अमृत बनारस स्टेशन पर उतरकर, पीछे आने वाली देहरादून एक्सप्रेस मे सवार होकर लखनऊ पहुँच गई। बनारस मे उसको तीन घण्टे का अवसर मिल गया और उसने वहाँ के तार-घर से एक तार अपने पिताजी को दे दिया।

अगले दिन स्नानादि से निवृत्त हो, प्रातः का अल्पाहार कर अमृत सुशील के घर जा पहुँची। उसने वहाँ पहुँच सुशील से मिलने की इच्छा प्रकट की। सुशील अमृत के वापिस आने के विषय मे नहीं जानता था, इस कारण बाहिर आ जब उसने अमृत को देखा तो अवाक् रह गया। उसका विचार था कि शिशिर उसको विवाह तक रोकने का प्रबन्ध कर लेगा। अमृत उसको चुप खड़ा देख बोली, "क्यों क्या बात है सुशील बाबू? झेंप क्यों गए है? मै आपको विवाह से रोकूँगी नहीं। शिशिर बाबू की मौसी ने आपकी बहू के लिए भेंट भेजी है। वह मैं देने

आऊँ अथवा न ?"

"शिशिर भी आया है अथवा अकेली आई हो ?"

"शिशिर बाबू भी आये हैं, यद्यपि मैं यहाँ अकेली आई हूँ।"

"मेरा विचार है कि मौसी की भेंट तुम शिशिर के हाथ भेज देना।"

अमृत इसका अर्थ नहीं समझ सकी। इस पर भी उसके मन में सुशील के लिए भारी घृणा उत्पन्न होने लगी थी। अतः वह उसको वहीं खड़ा छोड़ और बिना एक शब्द भी और कहे चल पड़ी। वह सुशील से मिलने तो इस कारण गई थी कि उसको जली-कटी सुनायेगी, परन्तु उसको आँखें झुकाये सामने खड़ा देख उसके मन में ग्लानि उत्पन्न होने लगी थी और वह उसको वैसे ही खड़ा छोड़ चली आई। वहा से वह नीला देवी से मिलने के लिए उसके क्लिनिक में जा पहुँची। उसका विचार था कि नीला से मिलने के पश्चात् वह अपने भाई से कहकर शिशिर को बुला भेजेगी। जब वह नीला के क्लिनिक में पहुँची तो वह उसको एक आदमी से बातें करते देख झिझककर खड़ी रह गई। वह दूकान के दरवाज़े में खड़ी उसको देख रही थी कि नीला की दृष्टि उसकी ओर चली गई। नीला अमृत को पहचान एक क्षण तो विस्मय में देखती रह गई और फिर उठकर लपककर उसकी ओर आई और उससे गले मिलने लगी। जब मिल चुकी तो उसने पूछा, "कब आई हो ?"

"कल सायकाल पहुँच गई थी।"

"कहा गई थी ?"

अमृत हँस पड़ी। नीला समझ गई कि वह बताना नहीं चाहती। इस पर उसने कहा, "अच्छा, आओ बैठो। इनसे एक बात कर लूँ तब तुमसे ही बातचीत करूंगी।"

इतना कह उसने अमृत की बाह में बाह डाली और उसको अपने समीप एक कुर्सी पर ले जाकर बिठा दिया। पश्चात् वह पुनः उसी

आदमी से बात करने लगी, जिससे अमृत के आने के पहले वह कर रही थी। उस आदमी ने कहा, "हा, तो मैं बता रहा था कि ज्यूँ ही शिशिर बाबू आया, मैं भागा हुआ थाने मे गया और वहा से पुलिस लेकर कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यालय पर जा पहुँचा और शिशिर को पकड़वा दिया। अब वह हवालात मे है। आज उसकी मजिस्ट्रेट के सामने पेशी होगी। मैंने पुलिस वालों को कहा है कि आज ज़मानत न होने पाये। वे मजिस्ट्रेट से रिमाण्ड मागेंगे।"

"यह तो अच्छा हुआ।" नीला ने सुख का सास लेते हुए कहा, "अब इन्जेक्शन के मुकद्दमे मे क्या होना है?"

"हमने जवाब दावा तैयार कर लिया है। इसके बाद दो-तीन दिन की पेशी पड़ेगी। तब तक विचार कर लेंगे। यह बात यहा निर्णय होती प्रतीत होती नहीं। इसके लिए तो हमको सुप्रीम कोर्ट तक जाना होगा।"

"अच्छा, अब आप चलिये। मैं ठीक ग्यारह बजे कचहरी में पहुँच जाऊँगी।"

जब वह आदमी चला गया तो अमृत ने पूछा, "नीला देवी! यह शिशिर कौन है?"

"एक कम्युनिस्ट है। इसने कुछ दिन हुए प्रबोध जी के कारखाने को आग लगवा देने की कोशिश की थी। इसके वारंट तो चार दिन से निकले हुए थे, पर वह पकड़ा कल गया है।"

एक क्षण तक तो अमृत इस सब बात को समझने के लिए चुप रही। पश्चात् उसने कहा, "आप ठीक कहती हैं क्या? क्या यह पुलिस वालों की कोई बनाई बात तो नहीं?"

"नहीं, मै इसको स्वय देख चुकी हूँ। मुकद्दमा तो पुलिस ने ही बनाया है, परन्तु कारखाने के कर्मचारी ही इसके विरुद्ध गवाही दे रहे है।"

अमृत के मुख का रंग विवर्ण हो गया था। नीला ने उसके मुख का रग उड़ते देखा तो पूछने लगी, "क्यो अमृत! क्या बात है? कैसे

जानती हो तुम शिशिर को ?"

"ये वही हैं न, जो सुशील बाबू के मित्र हैं ?"

"हाँ, क्या बात है ?"

"ये किसी प्रकार छूट नहीं सकते ?"

नीला के मन में कुछ कुछ प्रकाश होने लगा। उसने अमृत की आँखों में देखते हुए पूछा, "यह शिशिर कौन है ? अमृत !"

"नीला देवी ! इनको छुडा दीजिये। मेरा इनसे ही विवाह होने वाला है।"

"छुड़ा दूँ ? यह हो सकता है, परन्तु इसने हमको बहुत तंग कर रखा है।"

"उनसे आपकी सुलह करवा दूँगी।"

नीला कुछ देर तक विचार करती रही। पीछे बोली, "वह तुम्हारा कहना मान जायेगा क्या ?"

"मैं समझती हूँ कि मान जायेंगे।"

"तो चलो मेरे साथ। मैं तुमको इनसे मिला देती हूँ और यदि तुम इनको राजी कर लो कि वे प्रबोध बाबू पर से एक मुकद्दमा उठा लें तो मैं पुलिस को ले देकर छुड़ाने का प्रबन्ध कर दूँगी।"

"तो चलिये। मैं चाहती हूँ कि उनको समझा दूँ कि आप मेरी परम प्रिय हैं। उनको मेरी बात अवश्य मान जानी चाहिये।"

दोनों पुलिस थाने की ओर चल पड़ीं। मार्ग में नीला देवी ने अमृत को पूर्ण परिस्थिति से अवगत कर दिया। नीला ने बताया, "शिशिर बाबू ऑटो-मोबाइल वर्क्ज़ यूनियन के प्रधान हैं। प्रबोध जी ने अपना कारखाना कर्मचारियों की हडताल से तंग आकर बेच डाला है। वर्क्ज़ यूनियन के प्रधान ने इस बिक्री पर इन्जेक्शन लगाने के लिए कचहरी में दावा दायर किया हुआ है। यह तो हम जानते हैं कि यह दावा कुछ अधिक काल तक चल नहीं सकेगा। इस पर भी कारखाना खरीदने वालों को तंग किया जा सकता है। यदि यह दावा उठा लिया

जाये तो शिशिर को बलवे के मुकद्दमे से निकाला जा सकता है।"

थाने में वे थाना-इंचार्ज से मिले और नीला देवी के कहने पर वह उनको हवालात में ले गया और शिशिर के सामने ले जाकर खड़ा कर दिया। शिशिर अमृत को सामने देख बहुत झेंपा। उसको इस प्रकार लज्जित देख अमृत, उससे पृथक् मे बात करने की स्वीकृति लेकर, उसको हवालात के बरामदे में एक ओर ले जाकर खड़ी हो गई। अमृत ने पूछा, "बताइये अब क्या होगा?"

"मेरी आज जमानत हो जावेगी।"

"कौन जमानत देगा आपकी?"

"सुशील से मैंने कहला भेजा है।"

"वह जमानत देने आयेगा क्या?"

"नहीं। वह किसी को भेज देगा।"

"कौन कहने गया है?"

"एक कान्स्टेबल चिट्ठी लेकर गया है।"

"मुझको सुशील से कुछ भी आशा नहीं।"

"तो फिर जेल मे ही रहूँगा और कदाचित् मुकदमे मे दो-चार वर्ष का दण्ड पा जाऊँगा।"

"पर क्या आपने यह अपराध किया है?"

"एक तरीके से तो अभियोग सत्य ही है। प्रबोध के कारखाने के बाहर मैंने एक भाषण दिया था और नारे लगवाये थे। ऐसा करने का परिणाम यह हुआ था कि लोग पुलिस का घेरा तोड़कर कारखाने मे घुस गए थे और उसके सामान को तोड़ने-फोड़ने लग गए थे। यदि पुलिस यथा समय गोली नहीं चलाती तो यह सम्भव था कि कारखाने को आग लगा दी जाती।"

"पर आपने यह सब क्यों किया?" अमृत की आँखे तरल हो उठी थीं।

"पार्टी-अनुशासन मे बँधे हुए, जो कुछ पार्टी के नेताओं ने कहा

मैंने वही किया ।"

"पर ऐसा करना क्या ठीक था ?"

शिशिर अमृत की आँखों से ढुलकते आँसू देख रहा था। उसके मुख से अनायास ही निकल गया, "मैं मन से ऐसा करना नहीं चाहता था ।"

"तो अब प्रायश्चित् कीजिये ।"

"वह तो हवालात में पड़ा हुआ कर रहा हूँ ।"

"यह प्रायश्चित् नहीं। यह तो किये का दण्ड भोगना है। प्रायश्चित् के लिये तो नीला जी से क्षमा मांगिये। हमको आशा करनी चाहिए कि देवी जी प्रसन्न होकर वरदान देंगी ।",

"तो तुम्हारी सहेली के सामने जाकर गिड़गिड़ाऊँ ?"

"नहीं शिशिर जी ! अपनी भूल को स्वीकार करो और जो मुकद्दमा प्रबोध जी के विरुद्ध कर रखा है, उसको उठाने की प्रार्थना करो ।"

"देखो अमृत ! तुम नहीं जानतीं कि ये दोनों मुकद्दमे भिन्न-भिन्न हैं। मेरे विरुद्ध मुकद्दमा पुलिस ने चलाया है और प्रबोध के विरुद्ध कर्मचारी यूनियन ने। एक के हटा देने से दूसरा कैसे उठ जायेगा ?"

"तो आप यूनियन के प्रधान नहीं क्या ?"

"प्रधान तो हूँ ।"

"और इन्जेक्शन का दावा आपकी ओर से नहीं ?"

"दावा तो मेरी ओर से ही है, परन्तु लड़ रही है यूनियन ।"

"आपके दावा उठाने की प्रार्थना से क्या दावा उठ सकेगा ?"

"हाँ, यह दावा तो उठ जायेगा, परन्तु यूनियन दूसरा दावा भी कर सकती है ।"

"क्या यूनियन का यह दावा कि कारखाने की बिक्री पर रोक लगाई जावे, ठीक है ?"

"वकील कहते हैं कि ठीक है ।"

"मैं किसी वकील की राय नहीं पूछ रही। मैं तो आपसे पूछ

रहे हैं अथवा सौदा कर रहे है ? यह नीला देवी पर छोड़िये। आप अपने किये को बदलने के लिए जो उचित है कर दीजिये।"

शिशिर ने झिझकते-झिझकते हस्ताक्षर कर दिये। नीला ने पुलिस वालों से पहले ही प्रबन्ध कर रखा था। वहाँ से वह वकील और शिशिर तथा अमृत को लेकर कचहरी जा पहुँची।

कचहरी मे सुशील का नौकर आया हुआ था। शिशिर ने समझा कि वह किसी जामन का प्रबन्ध करके अपने साथ लाया होगा, परन्तु जब उस नौकर ने आकर सुशील की चिट्ठी दी और शिशिर ने वह चिट्ठी पढ़ी तो उसका मुख विवर्ण हो गया। सुशील ने लिखा था, "मैं स्वय तो जामिन बन नहीं सकता। मेरी कोई जायदाद नहीं है। मैं पिता जी से कहकर कोई प्रबन्ध कर सकता था, परन्तु वे सरकारी नौकर होने से राजनीतिक बातो मे अपना नाम लाना नहीं चाहते। तुम कोई और प्रबन्ध कर लो।"

शिशिर ने पत्र अमृत को दिखाया तो अमृत ने कहा, "मैने यही आशा उससे की थी।"

जब मुकद्दमा उपस्थित हुआ तो यूनियन की ओर से दो वकील उपस्थित हो गए। दोनो को शिशिर ने वकालतनामा लिखकर दिया हुआ था। कचहरी मे पहुँचकर जब शिशिर ने उनसे कहा, "मै तो यह इन्जेक्शन का मुकद्दमा वापिस लेना चाहता हूँ।"

"अब नहीं हो सकता।"

"क्यो ?"

"इस कारण कि हम वापिस नहीं लेगे। मै आपसे वकालतनामा वापिस ले लूगा।"

"आप मेरी यह प्रार्थना पेश कर दे, नही तो मै अदालत में बयान दे दूँगा कि मेरे वकील होकर मेरी आज्ञा के विरुद्ध मुकद्दमा चला रहे हैं।"

इस पर दोनो वकील एक-दूसरे का मुख देखते रह गए। पीछे वे दोनों

प्रार्थना शिशिर के हाथ में देकर वहाँ से खिसक गए।

शिशिर की प्रार्थना नीला के वकील ने ही अदालत मे दे दी और मुक़द्दमा उठ गया।

यूनियन के वकील स्वय कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य थे। वे अदालत के कमरे से कुछ दूर खडे हुए विचार कर रहे थे कि अब क्या होना चाहिए। इस समय शिशिर स्वतन्त्र होकर और मुकद्दमा उठाकर चला आया तो वही वकील उसके समीप आकर पूछने लगे, "क्या हुआ है शिशिर बाबू ?"

"मुकद्दमा उठ गया है।"

"बिना पार्टी की स्वीकृति के तुमने ऐसा क्यो किया है ?"

"मैंने पार्टी के सामने अपनी आत्मा अभी नहीं बेची। मै इस मुकद्दमे को गलत समझता था।"

"तो तुमको पार्टी से त्यागपत्र दे देना था।"

"अब दे दिया है।"

"इस पर भी तुम मुकद्दमा वापिस लेने के लिए चले आये हो ?"

"मैंने यूनियन के प्रधान-पद से त्यागपत्र नही दिया।"

"एक ही बात है।"

"कानून से दोनो का कोई सम्बन्ध नही।"

"यह तो यूनियन की बैठक मे चलकर देख लेगे।"

"हाँ, मैं उसकी बैठक एक-दो दिन मे बुलाऊँगा।"

वकील मुख देखते रह गए।

: २ :

शिशिर के मन में पार्टी के लिए ग्लानि भर रही थी। उसने नीला से, जो उसकी और यूनियन के वकीलो की बात सुन रही थी, कहा, "नीला देवी ! यदि आप पुराने कर्मचारी रख ले तो मैं समझता हूँ कि जिस भावना से मैंने यह मुकद्दमा वापिस लिया है, वह पूरी हो

जावेगी।"

"यह हो जावेगा। आप कर्मचारियों को कह दीजिये कि कल कार-खाने में हाजिर हो जावें।"

कोर्ट से नीला, अमृत और शिशिर घर को लौट आये। चिकित्सा-लय का समय हो चुका था। घर जाकर भोजन के लिए भी समय नहीं रहा था। इस कारण नीला ने पूछा, "शिशिर बाबू, अब किधर जा रहे हैं?"

"मैं ठहरा तो पार्टी के कार्यालय में था, परन्तु अब वहाँ नहीं जाऊँगा। यहीं कहीं होटल में खाना खाकर अपने ठहरने के विषय में विचार करूँगा।"

"तो चलिये। सामने पंजाब सिंध होटल है, वहीं खाना खा लेंगे। साथ ही मैं आपको अपने कारखाने के विषय में कुछ बातें बताना चाहती हूँ।"

वे होटल में चले गए और जब खाने के लिए आर्डर दिया जा चुका तो नीला ने अपना कहना जारी रखा। उसने बताया, "यह सत्य है कि कारखाने का बेचना केवल कागजी बात है। इस पर भी इसका एक परिणाम हुआ है कि परिवर्तित परिस्थिति में प्रबोध जी को भी बदलने का अवसर मिल जायेगा। मैं इस विषय में उनसे बहुत-कुछ कह सुन चुकी हूँ और जो योजना हमने बनाई है, वह उनकी सहमति से ही है। हम उन सब कर्मचारियों को वापिस ले रहे हैं, जो अब नई शर्तों पर काम करने के लिए तैयार हैं। हम कर्मचारियों की एक कौंसिल भी बना रहे हैं, परन्तु उस कौंसिल का काम निश्चित और सीमित होगा। मालिक और कर्म-चारियों की कौंसिल के कामों और अधिकारों में एक निश्चित रेखा बना दी गई है। कर्मचारियों का वेतन उनके काम की श्रेष्ठता और अधिकता के अनुसार दिया जाया करेगा। प्रति तीन मास के उपरान्त उनके काम का रिकार्ड देखा जाया करेगा और उसके अनुसार वेतन में वृद्धि और कमी की जाया करेगी। एक फण्ड बनाया जायेगा, जिससे कर्मचारियों के

परिवार के सदस्यों को जीवन-सुविधायें दी जाया करेगी।"

शिशिर इस प्रबन्ध को सुन बहुत प्रसन्न था। इस पर भी एक सदेह उसके मन में बना था। उसके विषय मे वह स्पष्टीकरण चाहता था। उसने पूछा, "यह क्या गारन्टी है कि इस सब प्रबन्ध को ईमानदारी से चलाया जायेगा?"

"कानूनन इस बात की गारन्टी नहीं हो सकती कि कानूनों का पालन करने वाले ईमानदारी से काम करेंगे। ईमानदारी मन का एक गुण है। क़ानून चाहे कुछ हो, जब तक उसके चलने वालों के मन शुद्ध न हों, वे कानून अच्छे होते हुए भी हितकर नहीं हो सकते। अभी तक तो मालिकों के दिमाग में बेईमानी नहीं है। मैं समझती हूँ कि विश्वास से विश्वास उत्पन्न होता है। यदि कर्मचारी अपना व्यवहार ठीक रखेंगे तो इसकी प्रतिक्रिया भी ठीक ही होगी।"

शिशिर के डॉवाडोल मन मे नीला के वक्तव्य ने भिन्न ही प्रतिक्रिया उत्पन्न की। वह कम्यूनिस्ट पार्टी के कार्य करने के ढग से निराश हो चुका था। अब नीला के इस कथन से वह यह समझा था कि शायद मालिकों का लाभ भी इसी में है कि कर्मचारियों को प्रसन्न रखें। इस पर भी उसने पूछा, "एक बात मैं जानना चाहता हूँ, नीला देवी! क्या आप यह सब प्रबन्ध मजदूरों पर दया के भाव से कर रही हैं अथवा उनसे डरते हुए?"

नीला हँस पड़ी। उसने कहा, "एक बात आप नहीं समझते। जो भी काम दया अथवा भय के प्रभाव मे किया जायेगा, वह स्थायी नहीं हो सकता। इन बाहरी कारणों के हट जाने पर वह काम बन्द हो जायेगा। व्यवहार वह ही स्थायी और ईमानदारी से हो सकता है, जिसके करने मे आत्मा की प्रेरणा हो। आत्मा की प्रेरणा तो लाभयुक्त कामों मे ही होती है। हम इस बात को भली भाति समझते है कि कर्मचारियों से किया गया अच्छा व्यवहार मालिकों के हित मे ही होगा। हम चाहते हैं कि हम कर्मचारियों के मन मे भी यह बात जमा दें कि मेहनत-मजदूरी से किया

हुआ काम उनके अपने लाभ के लिए ही होगा।"

"एक बात और नीला देवी! आपके प्रबन्ध मे यूनियन का क्या स्थान होगा?"

"कर्मचारी अपनी यूनियन बना सकते हैं। मै तो समझती हूँ कि कर्मचारियों कि कौंसिल ही वास्तव में उनकी यूनियन का काम करेगी। अन्तर केवल यह होगा कि जहाँ बाहर की यूनियन कम्यूनिस्ट पार्टी के अधीन काम करेगी, वहाँ कौंसिल कारखाने के अपने कर्मचारियों की होगी। इसमें बाहर के किसी व्यक्ति का हस्तक्षेप नहीं होगा।"

शिशिर ने कुछ विचारकर कहा, "मै पार्टी छोड़ रहा हूँ। जब से प्रबोधजी के कारखाने में हड़ताल आरम्भ हुई है, तब से ही मुझको पार्टी के व्यवहार में और उसकी कार्यविधि मे दोष प्रतीत होने लगा है। मुझको इस काम के ढग से घृणा-सी होने लगी थी। आज बहुत-कुछ बातो का पता चला है, जिससे मैं समझने लगा हूँ कि वर्ग-युद्ध नहीं प्रत्युत् वर्ग-समन्वय की आवश्यकता है।

"सब से बड़ी, मन में प्रकाश करने वाली बात हुई है रूस की कार्य-पद्धति पर रूस के कुछ नेताओं का रहस्योद्घाटन। आज से पाँच-छः वर्ष पहले जब कुछ लोग रूस मे हो रहे अनाचार की बात कहते थे, तो हम उनको कह देते थे कि वे बुर्जुआ मनोवृत्ति के लोग व्यर्थ में मानवता के साम्राज्य को बदनाम करने के लिए कह रहे हैं। जब कुछ लोगो ने लौह-आवरण के पीछे रहस्योद्घाटन किये तो हमने रेशमी आवरण के पीछे रहस्यो की बात करनी आरम्भ कर दी। परन्तु आज रूसी नेताओं के रहस्योद्घाटन ने उनसे कहे जाने वाले बुर्जुआ-मनोवृत्ति के लोगो की बात सिद्ध हो गई है।

"मैं तो यह समझा हूँ कि भारत में कम्यूनिस्ट पार्टी रूस की बोलशिविक पार्टी के पदचिह्नों पर चल रही है। ये सब वाग्जाल है, जिसके बल पर लाखो नवयुवको को मूर्ख बनाकर समाज में अव्यवस्था उत्पन्न कर प्रभुत्व जमाने के लिए यत्न किया जा रहा है। मैं इस धोखाधड़ी में

सम्मिलित रहना नहीं चाहता।"

नीला ने कहा, "ससार मे वर्ग-समस्या तो है, परन्तु ये वर्ग वे नहीं, जिनका उल्लेख कार्ल मार्क्स ने किया है। जहाँ पर एक श्रेणी के आदमी को दूसरी श्रेणी मे जाने का अधिकार हो, वहाँ वर्ग-समस्या नहीं मानी जानी चाहिए। मालिक और मजदूर में कोई ऐसी अनुल्लंघनीय रेखा नहीं कि एक दूसरे मे नही जा सकता। ऐसे उदाहरणो की कमी नही, जहाँ मालिक मज़दूर बन गए और जहाँ मजदूर मालिक बन गए। विचारणीय बात तो केवल इस रेखा को सुगमता से पार कर सकने के साधनो पर है। यह विचार वर्ग-युद्ध से नहीं प्रत्युत् वर्गों मे सहचारिता से हो सकेगा।

"देखिये शिशिर बाबू! कम्यूनिज्म पनपता है छात्रो और बेघर वालों मे। अब आप छात्र तो हैं नही। साथ ही अपना घर भी बना लीजिये। तब यह 'इज्म' आप मे निःशेष हो जावेगा।"

"देखिये, यत्न तो कर रहा हूँ। सफलता इनके हाथ में है।" इतना कह उसने अमृत की ओर देखा और मुस्करा दिया।

: ३ :

अमृत चार बजे के लगभग घर पहुँची। वह कोठी मे पहुँच सीधी अपने कमरे मे चली गई। इस समय हरभजन सिंह अपनी मोटर में कहीं जाने को तैयार खड़ा था। वह अमृत को आया देख गाड़ी को छोड़, उसके पीछे कमरे में चला आया। अमृत अभी कुर्सी पर बैठी ही थी कि वह आया और पूछने लगा, "कहाँ रही हो अमृत! दिन-भर?"

अमृत ने सुशील के घर जाने से लेकर शिशिर को होटल मे छोड़ आने तक की पूर्ण बात बता दी। इस पर हरभजन सिंह ने कहा, "यहाँ तो पिता जी के पास कई लोग तुम्हारे साथ विवाह-सम्बन्ध के लिए आ चुके हैं।"

"मै जानती हूँ कि वे मेरे लिए नहीं आये। वे तो पिता जी के धन के लोभ मे आये हैं। मेरा उनसे कोई वास्ता नहीं।"

"तो अब कैसे यह सब होगा ?"

"शिशिर बाबू आज सायकाल पिता जी से मिलने आयेंगे। मैं नहीं चाहती कि किसी प्रकार की बात उनके विषय में मै करूँ। मैं देखना चाहती हूँ कि उनका कहना पिता जी के मन में क्या प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है ? वह जानने के पश्चात् ही बात आगे चल सकेगी।"

"मैं चाहता हूँ कि उस समय मैं भी सामने होता तो ठीक रहता।"

"तो भैया ! ऐसा करो न। अभी होटल में उनसे मिलकर एक समय निश्चय कर लो। उस समय उनको साथ ही लेते आना।"

"इस समय सरदार कर्तार सिह का लड़का प्रीतम सिह पिता जी के पास बैठा है। मुझको उसकी बातों में कुछ भी रुचि नहीं। इस कारण मैं वहाँ से उठकर चला आया हूँ। मैं समझता हूँ कि पिता जी उसको लेकर आने ही वाले हैं। लो मैं चला।"

"अच्छी बात है, अब आप जाइये। मैं निपट लूँगी।"

अमृत अभी अपनी थकावट दूर कर ही रही थी कि उसके पिता प्रीतम सिंह को लेकर आ पहुँचे। उन्होंने आते ही पूछा, "अमृत ! कहाँ गई थीं तुम ?"

"पहले सुशील जी के घर गई थी, पीछे नीला देवी से मिलने। उन्होंने अभी तक रोक रखा था। अभी-अभी आई हूँ।"

"इनको जानती हो ?" बढियाम सिह ने प्रीतम सिह की ओर सकेत कर पूछा।

"जी हाँ। बचपन से जानती हूँ। आपके साथ ही तो मेरे विवाह का प्रबन्ध हो रहा था, जब मैं घर से चली गई थी।"

इस प्रकार मुँहफट बात से तो बढियाम सिंह की आँखें झुक गईं। वे और प्रीतम सिंह अभी खड़े थे। अमृत भी उनके स्वागत के लिए खड़ी हो गई थी। इस समय बढियाम सिंह ने बात बदलने के लिए प्रीतम सिंह को बैठने को कहा और स्वय भी बैठ गया। अमृत बैठी तो बात प्रीतम-सिंह ने की। उसने कहा, "मैं जानता हूँ कि आप घर से चली गई थीं

और आपके लौट आने का समाचार पाकर ही तो मैं आया हूँ। मै आपसे पृथक् मैं बात करना चाहता हूँ।"

"पिता जी भी रहे अथवा उनसे भी पृथक् बात करना चाहते हैं?"

"मैं चाहता हूँ कि मै और आप अकेले हो तो ठीक रहेगा।"

"ठीक है।" इतना कह अमृत ने अपने पिता की ओर देखा। बढियाम सिंह समझ गया और यह कह, "आप जब फुरसत पा जायें तो चाय के लिए बाहर लॉन में आ जाइयेगा। मै वहाँ ही आपकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" वह कमरे से बाहर निकल गया।

प्रीतम सिह ने बात आरम्भ की : "देखिये अमृत जी! मै आपको तब से जानता हूँ, जब आप छोटी-सी थीं और माता जी के साथ गुरुद्वारे में आया करती थीं। मैंने तब से ही निश्चय किया हुआ था कि मै आपसे विवाह करूँगा। इसी कारण नौकरी पाते ही मैंने आपके पिता जी को कहला भेजा था। उनकी स्वीकृति से ही आपसे मगाई की बात हुई थी।"

"आप जो कहते है ठीक ही होगा, परन्तु जब से मै आपके विषय मे समझने लगी हूँ, मै आपका अपने पति के रूप में कभी भी विचार नही कर सकी।'

"क्यो?"

"जहाँ तक मुझको स्मरण है, मै आपको कुछ गँवार समझती थी। देखिये सरदार प्रीतम सिह। हम यहाँ अपने भावी जीवन के विषय मे विचार करने बैठे है। इस कारण मन के भावो को समझने मे यदि कुछ ऐसे शब्द प्रयोग में आ जावें, जो कानों को प्रिय न लगें तो क्षमा चाहती हूँ। मुझको आपका पहिरावा, आपका बोलना और आपका गुरुद्वारे मे व्यवहार सदा ही अप्रिय रहा है।

"पश्चात् जब आप कॉलेज मे पढते थे और मै स्कूल मे पढती थी, तब आपका घूर-घूरकर लडकियो की ओर देखना मुझको बिलकुल पसन्द नहीं था। साथ ही मै यह कभी भी समझ नही सकी कि एक पढा-लिखा व्यक्ति कैसे वास्तविकता को छोड बाहरी बातों को आवश्यक समझने

लगता है ? आपने एक सेवादार को इस कारण गुरुद्वारे से निकलवा दिया था कि वह गुरु ग्रन्थ साहब की ओर पीठ कर खड़ा था। जब मेरे पिता जी ने उस सेवादार को क्षमा कर देने के लिए कहा तो आपने क्षमा करने का विरोध किया था।

"इसके अतिरिक्त भी कई बातें हैं, जिनसे मै आपको एक बहुत ही साधारण बुद्धि का व्यक्ति समझती हूँ। जब आपके विषय मे ऐसा विचार मन में हो तो आप से विवाह का विचार उत्पन्न हो नहीं सका।"

"परन्तु," प्रीतम सिह ने कहा, "अब तो मै वह नहीं हूँ। मै सिखों मे एक उदार विचार का व्यक्ति समझा जाता हूँ।"

"सच ?"

"मैंने इस विषय में अपने पिता जी को लिखा था।"

"क्या लिखा था ?"

"लिखा था कि आपके विचारों की मैं सराहना करता हूँ। इन विचारों के कारण आप मुझको और भी अधिक प्रिय हो गई हैं।"

"परन्तु आपके आचरण में तो कुछ अन्तर आया प्रतीत नहीं होता।"

"यह आचरण तो नौकरी के कारण रखना पड़ता है। देखिये मैं थर्ड क्लास एम० ए० हूँ। इस पर भी इन्स्पैक्टर ऑफ स्कूल्ज लग गया हूँ। यह केवल इस कारण ही है कि मैं केशधारी सिख हूँ। पजाब में सिखों की स्थिति हिन्दुओं के दो दलों में निर्णयात्मक है। इस कारण हिन्दू अधिकारियों को सिखों को प्रसन्न रखना आवश्यक हो गया है। इस कारण मेरा सिख होना मेरे लाभ की बात हो गई है।"

"तो यह नौकरी के कारण है। वास्तव में आप सिखिज्म मे विश्वास नहीं रखते।"

"यह बात नहीं। मैं मन से सिख हूँ, परन्तु मैं यह कच्छा, कड़ा इत्यादि सिख धर्म के आवश्यक अग नहीं मानता।"

"अब समझी हूँ कि आपकी विवशतायें हैं, जिनके कारण आप

आवश्यक और अनावश्यक बातों में भेद-भाव नहीं कर सकते, अर्थात् नहीं करना चाहते।"

"देखिये अमृत जी! आज पजाब मे सिख और हिन्दुओं में भारी झगड़ा हो रहा है। बहुत ही निकट भविष्य मे सिख-समुदाय के लिए जीवन-मरण का प्रश्न उत्पन्न होने वाला है और उस समय के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति, जो सिख-सम्प्रदाय का हित चाहता है, वह अपने को प्रकट रूप में भी सिख बनाये रखे। अन्यथा मैं तो आपसे भी पहले यह झंझट छोड़ चुका होता।"

"बहुत ही विचित्र बात है। आप सिख-धर्म की रक्षा के लिए भारी त्याग कर रहे हैं और कष्ट सहन कर रहे हैं। परन्तु मैं यह नहीं समझ सकी कि इसकी रक्षा की आवश्यकता क्या है?"

"गुरु महाराज ने जो शिक्षा दी है, उसकी रक्षा की आवश्यकता है।"

"वह रक्षा तो यूं भी हो जावेगी। गुरु ग्रन्थ साहब का अनुवाद सब भाषाओं में करवा कर बॉट देने से ही यह काम सुगमता से हो जावेगा। अभी तक तो हिन्दू गुरु महाराज की वाणी को आदर से सुनते हैं और फिर हिन्दू-धर्म से सिख-धर्म किस प्रकार भिन्न है? मैंने तो दरबार साहब में यह पढा है—

कहत कबीर अवर नहीं कासा। हमरे मन धन राम को नामा।
राम सिमर राम सिमर राम सिमर भाई
राम नाम सिमरन बिनु बूडते अधिकाई।
वनिता सुत देह ग्रेह सम्पति सुखदाई
इन्ह में कछु नाही तेरो काल अवधि आयी
अजामल गज गनिका पतित करम कीने
तेऊ उतरि पारि परे राम नाम लीने
सूकर कूकर जोनि भ्रमे तऊ लाज न आयी
राम नाम छाड़ि अमृत काहे बिखु खाई

इस वाणी को तो कोई भी हिन्दू पसन्द कर लेगा।"

"नहीं अमृत जी ! यह बात नहीं । बात यह है कि यदि सिखों को धेकार नहीं मिले तो कोई किसलिए सिख-धर्म मानेगा ?"

"कौन से अधिकार आप चाहते हैं, जो आपको नहीं और हिन्दुओं प्राप्त हैं ?"

"हमारी यह धारणा है कि यदि सिखों का प्रभुत्व किसी एक राज्य में रहा तो कोई भी सिख नहीं रहेगा।"

"सिख धर्म के बढ़िया होने पर भी लोग इसको छोड देंगे क्या ?"

प्रीतम सिंह को स्मरण हो आया कि वह सिख-हिन्दू के विवाद में ड़कर अपने वहाँ आने के प्रयोजन को भूल रहा है। इस कारण उसने ात बदल कर कहा, "परन्तु अमृत जी ! इन बातों का विवाह से क्या सम्बन्ध है ? मैं आपको बहुत सुखी रखूँगा और आपकी स्वतन्त्रता में किसी प्रकार की बाधा नहीं डालूँगा।"

"मैं इस आश्वासन के लिए आपकी बहुत ही आभारी हूँ। मैं आपका धन्यवाद करती हूँ, परन्तु मैं एक सिख में और एक हिन्दू में कोई अन्तर नहीं समझती। सिख-धर्म में तथा हिन्दू धर्म मे मुझको कहीं भी अन्तर प्रतीत नहीं होता। मैं जब दरबार साहब में पढती हूँ कि—

अस्थावर जगम कीट पतगा अनेक जन्म किये बहुरगा
ऐसे घर हम बहुत बसाये जब हम राम गरभ होइ आये
जोगी जति तपि ब्रह्मचारी कबहू छत्रपति कबहू भिखारी।

तब मुझको गुरु महाराज से सहस्रों वर्ष पूर्व भगवान कृष्ण की बात याद आ जाती है। भगवान् कृष्ण ने कहा था, 'हे अर्जुन, मैंने और तुमने भी लाखों जन्म पाये हैं। तुम नहीं जानते और मैं जानता हूँ।'

"जब यह है तो आपका यह सब-कुछ कहना व्यर्थ है।"

"पर अमृत जी ! मैं तो विवाह के विषय में कह रहा हूँ।"

"ओह ! वह तो मैं भूल ही गई थी। पर यह बहस तो आपने ही आरम्भ की थी।"

"हाँ ! तो फिर क्या विचार है ? बाहर पिता जी लान में प्रतीक्षा कर

रहे हैं और चाय ठडी हो रही है।"

"मैंने इस विषय मे अपने विचार अभी बदले नहीं। अभी भी मेरे मन पर बचपन के प्रभाव विद्यमान हैं।"

"पर मैं तो आपसे प्रेम करता हूँ।"

अमृत हँस पडी। उसने कहा, "छोडिए इस बात को। एक बगाली युवक, जो डॉक्टर है, उच्च कोटि की सगत मे घूमने वाला है, वह भी मुझको यही कहता था। जब उसको पचास हजार दहेज में मिलने की आशा हुई तो सब प्रेम भूल गया' और उस लडकी से विवाह करने पर उद्यत हो गया है, जिसको वह कुरूप, कुशिक्षित और काली कहा करता था। यह प्रेम शब्द एक आडम्बर है। यह कविताओं और नावलों में लिखने के लिए भावुक युवकों ने बना रखा है। निम्न कोटि के कलाकारों ने भी इसको अनावश्यक महत्ता दी है।"

"तो फिर आप क्या चाहती हैं?"

"चलिए बाहर! चाय ठडी हो रही है।"

इतना कह वह उठ खडी हुई। उठते हुए उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि और कुछ कहने को नहीं रह गया। चलिए, पिता जी काफी देर से प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

: ४ :

बढियाम सिंह ने लॉन में चाय लगवाई हुई थी। ये दोनों वहाँ पहुँचे तो चुपचाप चाय के लिए कुर्सियों पर बैठ गये। अमृत मुस्करा रही थी। वह मन में सोच रही थी कि बात करने का ढग भी नहीं आता और वह विवाह करने चला आया है।

बढियाम सिंह ने अमृत को प्रसन्न देखा तो यह समझा कि दोनों में कुछ समझौता हो गया है। अतएव उसने पूछा, "क्यों अमृत! क्या निश्चय किया है?"

अमृत ने मुस्कराते हुए कहा, "इनसे ही पूछ लीजिये।'

वढियाम सिह ने इस उत्तर से उत्साहित हो प्रीतम सिंह की ओर देखा। इस पर प्रीतम सिह ने कहा, "अमृत जी ने किसी और को पसन्द कर रखा है।"

"किसको ?" वढियाम सिह ने अमृत की ओर देखकर पूछा।

"ये ही वतायेगे। जो-कुछ ये कहते है, उसको ये ही जानते होगे।"

वढियाम सिह दोनो का मुख देखने लगा। वह इस बातचीत का अर्थ नही समझा था। अमृत अभी भी मुस्करा रही थी। प्रीतम सिह का मुख विवर्ण हो रहा था। उसने किसी अन्य के पसन्द करने की बात कहकर अमृत को प्रकुपित करने का यत्न किया था। उसका विचार था कि वह क्रुद्ध होकर कुछ कहेगी और इससे उसका रहस्य खुल जायेगा, परन्तु उसको शान्त और प्रसन्न देख वह स्वय प्रकुपित हो उठा।

"छोडिये इस बात को, चाय पीजिये और शान्ति से बात करिये।"

अमृत ने चाय बनानी आरम्भ कर दी। प्रीतम सिह ने अमृत के पिता को कहा, "क्षमा करिये। चाय तो सब जगह मिल सकती है। जिस वस्तु की लालसा से मै यहाँ आया था, यदि वह नही मिली तो फिर यहाँ ठहरने मे कुछ भी प्रयोजन नही।"

"प्रीतम सिह जी।" अमृत ने बनी चाय का प्याला आगे करते हुए कहा, "आपके पिता जी और मेरे पिता जी का सम्बन्ध इस असफल प्रेम से बहुत पुराना है। उस सम्बन्ध को क्यो भग करते है ?"

ज्यूँ त्यूँ कर प्रीतम सिंह ने चाय का प्याला समाप्त किया और सत श्री अकाल कह चल दिया। उसके चले जाने के पश्चात् वढियाम सिह ने पूछा, "क्या बातचीत हुई है ?"

"कुछ विशेष नही। ये कहते थे कि मुझको पसन्द करते है। मैने बताया कि मुझको वे पसन्द नही। इस पर नाराज हो गये और कहने लगे थे कि मैने कोई दूसरा पसन्द किया हुआ है।"

"अमृत ! आज तुम्हारे विवाह के लिए पाँच अन्य स्थानो से भी सन्देश आये है। कुछ निर्णय तो करना ही होगा।"

"हो जायेगा और शीघ्र ही। मैं अब लखनऊ मे नहीं रहना चाहती।"

"पर कहाँ रहना चाहती हो?"

"कहीं तो रहना होगा ही। आप व्यर्थ की चिन्ता न करें।"

निराश वढियाम सिह चुप कर रहा। चाय पीकर दोनो अपने-अपने कमरो मे चले गये।

सायकाल हरभजन सिह शिशिर को लेकर आया और सीधा अपने पिता के कमरे में चला गया। वहाँ शिशिर का उसने परिचय कराया, "पिता जी। ये हैं शिशिर कुमार, प्रधान ऑटोमोबाइल वर्कर्ज यूनियन। आपसे कुछ निवेदन करने आये हैं।"

"हाँ बताइये साहब।" वढियाम सिह ने सतर्क हो पूछा।

शिशिर ने बैठते हुए कहना आरम्भ किया, "आज से सवा तीन महीने पहले की बात है कि मेरे एक मित्र मेरे पास आये। उनके साथ एक लड़की थी। वे कहने लगे कि यह लडकी तीन मास के लिए अपने माता-पिता से छिपकर रहना चाहती है और मै इसको अपनी मौसी के घर छोड आऊँ। वे मेरी मौसी को जानते थे।

"मै उस लडकी को अपनी मौसी के घर छोड आया। मौसी के पूछने पर हम दोनो ने अर्थात् मैने और उस लडकी ने कह दिया कि हम दोनो पति-पत्नी हैं। ऐसा कहने मे प्रयोजन यह था कि मौसी को किसी अनुचित बात का संदेह न हो जाये और लडकी का उचित मान-आदर हो सके।

"लडकी वहाँ रही और मै यहाँ लखनऊ मे रहा। तीन मास मे लडकी की विशेष मोह-माया मौसी से हो गई और वह उनको अपनी वास्तविक सास बनाने की इच्छा करने लगी है। मेरी मौसी भी, जो उस लडकी को अपनी पतोहू ही समझती है, उससे बहुत प्रसन्न है।

"मौसी की कोई सन्तान नहीं। मुझको उन्होंने गोद लिया हुआ है। स्वाभाविक रूप से यदि मौसी और उस लडकी की इच्छा पूर्ण की जाये तो

लड़की के पति होने का सौभाग्य मुझको प्राप्त होगा और वह आपके आशीर्वाद से ही हो सकता है।

"मैं कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य था परन्तु अब मैंने पार्टी छोड़ दी है। अभी-अभी मैंने इस विषय का पत्र पार्टी के अधिकारी को लिख दिया है। अभिप्राय यह है कि मैं अब स्वतन्त्र हूँ और स्वतन्त्रता से जीविकोपार्जन के साधन रखता हूँ।"

बढियाम सिंह कुछ ऐसी ही बात की आशंका कर रहा था। शिशिर ने अपनी पूर्ण कथा इतनी स्पष्टता और सुन्दरता से उसके सामने रखी थी कि बढियाम सिंह अनुभव करने लगा कि कोई विशेष व्यक्ति उसके सामने बैठा है। इस पर भी उस युवक ने यह बात बताई नहीं थी कि वह मित्र, जो उसके पास उस लड़की को लेकर गया था, कौन था। दूसरी बात, जिसके विषय में उसका संदेह विश्वास की सीमा तक जाता था, वह उनके परस्पर सम्बन्ध की थी। वह यह बात समझ ही नहीं सकता था कि कैसे ये दोनों, पति पत्नी का अभिनय करते हुए, घनिष्ठ सम्बन्ध से बचे रह सके होंगे? दूसरी बात का मन में विश्वास कर वह इस विवाह को रोकने का विचार नहीं कर सकता था। यूँ तो वह इस प्रकार के सम्बन्ध से हेठी अनुभव करता था, परन्तु वर्तमान परिस्थिति में इस विषय पर चुप रहने के अतिरिक्त और कोई उपाय भी नहीं था।

इस पर भी वह पहली बात पर प्रकाश डाले जाने की अपनी उत्सुकता को रोक नहीं सका। उसने पूछ ही लिया, "और वह मित्र, जो उस लड़की को आपके पास लेकर गया था, हरभजन सिंह था?"

"जी नहीं!" शिशिर ने कहा। "वह सुशील कुमार था। लड़की को विश्वास था कि सुशील कुमार उससे प्रेम करता है और उससे विवाह करने का इच्छुक है। सुशील कुमार का विवाह आज सरकार बाबू की लड़की से हो रहा है। साथ ही उसको सुशील कुमार की माता से मेरी मौसी अधिक पसन्द है।"

बढियाम सिंह हँस पड़ा। उसने कहा, "हरभजन सिंह! हमारी

बदनामी तो जो होनी थी, सो हो चुकी। तुम जानते हो कि प्रीतम सिंह यहाँ आया हुआ था। अमृत ने उससे झगड़ा कर उसको यहाँ से भगा दिया है। इस कारण मुझको लड़की का विवाह शीघ्रातिशीघ्र हो जाना ही ठीक प्रतीत होता है। अन्यथा लोग आते रहेंगे और अमृत उनसे झगड़ा करती रहेगी।

"देखो युवक!" उसने शिशिर की ओर देखकर कहा, "पूर्व इसके कि मैं अमृत को बुलाकर पूछूँ, मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुम्हारे पास अपनी पत्नी को सुखी रखने के साधन भी हैं अथवा नहीं। कम्युनिस्ट प्रायः निर्धन, अयोग्य, अशिक्षित और कोरे भावुक व्यक्ति होते हैं। जीवन-संघर्ष में अपने पाँव पर खड़ा हो सकने की क्षमता न रखने के कारण ही वे सरकार की सहायता के मोहताज होते हैं। जानते हो मैं राष्ट्रीय-करण के क्या अर्थ समझता हूँ? अयोग्य लोगों को खाना-पीना और वह भी अच्छे स्तर पर दिलाने के लिए फौज और पुलिस की शक्ति का प्रयोग करना।

"यह मैं जानता हूँ कि भारत सरकार ऐसे निर्धन और अयोग्यों की सहायता करने का पक्का निश्चय किये हुए है। इस पर भी मैं अपने दामाद को राज्य के, अर्थात् टैक्स देने वालों के आश्रय पर पलने वाला देखना नहीं चाहता।"

शिशिर हँस पड़ा। उसने अपने मन के भाव बताने और अपनी मौसी की सम्पत्ति का उल्लेख करने के स्थान, इस सरकारी ठेकेदार से प्रश्न पूछने आरम्भ कर दिये। उसके अपने मन में उठ रहे विचारों का एक नया रूप, इस व्यक्ति ने उसके सामने उपस्थित किया था। शिशिर ने कहा, "आपका प्रश्न तो उचित ही है। परन्तु इस प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व मैं आपसे यह निवेदन करना चाहता हूँ कि एक निर्धन शोषित व्यक्ति यदि अपनी सरकार से सहायता न माँगे तो किससे माँगे? पैसे वालों ने निर्धनों को बेमोल दासता में बाँध रखा है। यदि सरकार उनकी सहायता करती है, तो आपको आपत्ति क्यों है?"

वढियाम सिंह ने कहा, "ठीक है, ऐसी अवस्था में सरकार को दुःखी और शोषित व्यक्ति की सहायता करनी ही चाहिए। मैं समझता हूँ कि सब सभ्य देशों में मज़दूरों के सरक्षणार्थ विधि-विधान बन रहे हैं। यह बात तो ठीक है ही। इसके विपरीत मैंने कुछ नहीं कहा। मैंने तो यह कहा है कि जब सरकार प्रबन्धकर्ता होने के स्थान स्वयं व्यवसायी और मालिक बन जाती है, तब वह, जो मेहनत-मज़दूरी करने वालों की मेहनत से उत्पन्न धन से चलती है, बेकार, अयोग्य और प्रमादी लोगों का आश्रय बन जाती है।

"अब देखो, सरकार ने बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण कर उन कम्पनियों को सहारा दिया है, जिनके प्रबन्धक अयोग्य होने के कारण चलाने में असफल हो रहे थे। कम्पनियों की लूट रोकने का उपाय तो उनके 'प्रीमियम' कम करना तथा उनके खर्च पर नियन्त्रण करना और धन-वितरण में शीघ्रता कराना था, न कि भारत-भर में एक ही बीमा करने की संस्था और वह भी सरकारी प्रबन्ध के अधीन कर देना था। अब परस्पर स्पर्धा (कम्पिटीशन) न होने के कारण बीमा के व्यवसाय में उन्नति और कम्पनियों के प्रबन्धकों के व्यवहार में श्रेष्ठता आने में बाधा उत्पन्न हो जायगी।

"बीमा कम्पनियों के अधिकारी भी धीरे धीरे वैसे ही आलसी, काम-चोर और रिश्वत लेने वाले बन जायेंगे, जैसे आज रेल के अधिकारी हैं?"

"पर क्या आप" शिशिर ने मुस्कराते हुए पूछा, "सरकार के एक उच्च अधिकारी, मेरा अभिप्राय है कि एक सचिव (सेक्रेटरी) में और एक ठेकेदार में अन्तर नहीं समझते? इनमें से कौन निष्काम भाव से काम कर सकता है?"

"जन-साधारण में तो सचिव को ही श्रेष्ठ माना जाता है, परन्तु यह वास्तविकता से दूर है। जहाँ तक ठेकेदार की बेईमानी का सम्बन्ध है, वह क्या सरकारी अधिकारियों के रिश्वत लेने के ही कारण नहीं? यदि सचिव और इञ्जीनियर अपनी अतिरिक्त आय का लालच न करें तो ठेके-

दार की क्या मजाल है कि सीमेंट मे मात्रा से अधिक रेत मिला सके। ठेकेदार ऐसा करता है क्योंकि उसको ओवरसियर, इञ्जीनियर इत्यादि सबको दक्षिणा देनी पड़ती है।

"क्या कभी आपने इस बात की ओर ध्यान दिया है कि एक ही प्रकार की, सरकार द्वारा निर्मित इमारत और किसी निजी व्यक्ति द्वारा निर्मित इमारत की लागत मे आकाश-पाताल का अन्तर होता है ? भला यह क्यो ? क्या इसमें यह कारण नहीं कि सरकारी अधिकारी कार्य की श्रेष्ठता और सतर्कता की ओर ध्यान न देकर अपनी अतिरिक्त आय की ओर अधिक ध्यान देते है।

"निजी कार्य में धन व्यय करने वाला अपने से अर्जित धन का व्यय करता है। सरकारी कार्यों में धन व्यय करने वाला दूसरे से अर्जित धन का व्यय करता है। इससे यह स्वाभाविक ही है कि निजी कार्य करवाने वाला कम दाम मे अधिक अच्छा काम करा सकता है।"

"काम करने वाले तो मनुष्य ही होते है। सरकारी कामो मे भी और निजी कामो मे भी। तो फिर ऐसा क्यों होता है ?" शिशिर ने उत्सुकता से पूछा।

"सरकार कभी भी कोई कार्य किसी निजी कार्य (private enterprise) से स्पर्धा में नहीं कर सकती। यही कारण है कि सरकार अपने प्रत्येक कार्य में एकाधिकार (मोनोपली) ले लेती है। कारण स्पष्ट है कि सरकारी कामों में अधिकारियों को धन व्यर्थ जाते देख दुःख नहीं होता। वह उनका अपना अर्जित किया हुआ धन नहीं होता। जनता के धन से वे खिलवाड़ करते हैं।"

"पर मैं पूछता हूॅ कि व्यक्तिगत प्रयास मे विशेष बात क्या होती है ? एक ठेकेदार की आवश्यकता ही क्या है ?"

"ठेकेदारी व्यक्तिगत प्रयास (private enterprise) का एक रूप है। इसमें अन्य व्यक्तिगत प्रयासो (enterprises) से अन्तर यह है कि इसमे कार्य को सुव्यवस्थित करने की विशेष आवश्यकता रहती है।

सुव्यवस्था करने की शक्ति परस्पर स्पर्धा के कारण उग्र और सम्पुष्ट हो जाती है ।

"मै आपको अपनी ही बात बताता हूँ । मेरे पिता पजाब में ठेकेदारी करते थे । मैं पन्द्रह वर्ष का था, जब मैं मैट्रिक पास कर पिता के साथ काम करने लगा । एक ही वर्ष में मैं काम का आधार-बिन्दु समझ गया । यह था लेबर ऑर्गनाईज़ेशन (कर्मचारियों में सुव्यवस्था) । जब मैं अपने विचारानुसार कार्य करने लगा तो पिता से झगड़ा हो गया और मैं पिता से बिना कुछ लिये दिये, भागकर लखनऊ चला आया । यहाँ दीनानाथ ठेकेदार के पास मुन्शी का काम करने लगा । एक वर्ष-भर यहाँ कन्जूसी का जीवन व्यतीत कर, पाँच सौ रुपया एकत्रित कर ठेकेदारी में कूद पड़ा । बड़े ठेकेदारों से छोटे-छोटे काम लेकर धन पैदा करने लगा । पाँच वर्ष में मैं स्वतन्त्र ठेके लेने योग्य हो गया । इस समय दीनानाथ, जो मुझ पर बहुत ही दयालु था, मुझको अपना दामाद बनाने के लिए तैयार हो गया। मेरा विवाह हुआ और तब से मैं अपनी सुव्यवस्था करने की योग्यता से उत्तरोत्तर उन्नति करता चला आ रहा हूँ । इस समय मैं लाखों रुपयों का काम लेता हूँ ।

"जो उन्नति नहीं कर सकते, वे ईर्ष्या के कारण मुझको गालियाँ देते हैं । जो गालियाँ नहीं देते और योग्यता रखते हैं, वे मेरे समान उन्नति कर रहे हैं ।"

"तो आपके कहने का मतलब यह है कि सरमायेदार ईमानदार और मेहनती आदमी हैं ?"

"मैंने यह नहीं कहा । मैं सरमायादारी कोई वस्तु नहीं समझता । कई लोगों के पास धन इस कारण जमा हो गया है कि वे पैसे वालो की सन्तान हैं । मैं इस समय उनकी बात नहीं कह रहा । मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि ऑर्गनाइज़िंग कैपेसिटि (सुव्यवस्था करने की शक्ति) सफल ठेकेदार का अत्यावश्यक गुण है । इस योग्यता का न होना पैसे से पूर्ण नहीं हो सकता । अयोग्य आदमियों के हाथ में पैसा नहीं रह सकता ।

पैसा होने पर भी अयोग्य सफल नहीं हो सकते।"

इस पर शिशिर ने अपना एक और संदेह बता दिया, "सरमाये को पैदा करना तो बुरा नहीं, परन्तु इसको मजदूरों की मेहनत मोल लेने में व्यय करना मजदूरों का विदोहन (एक्सप्लॉयटेशन) करना है, उनकी मजदूरी को सस्ते दाम पर खरीदकर महँगे भाव पर बेचने के तुल्य है।"

बढियाम सिंह ने मुस्करा कर कहा, "यह लाछन कुछ अंशो मे ठीक है, परन्तु इस विदोहन को बन्द करने का उपाय एक विदोहन-कर्ता को हटाकर दूसरा विदोहन-कर्ता पैदा कर देना नहीं है।

"राष्ट्रीयकरण इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। यदि मैं विदोहन करता हूँ तो बुरा और यदि रेल्वे बोर्ड विदोहन करे तो बुरा नहीं।"

'रेल्वे बोर्ड कैसे विदोहनकर्ता हो गया। रेल्वे का लाभ तो बोर्ड नहीं लेता। यह तो कर्मचारियों और जनता को चला जाता है।"

'मुझको आपके कथन पर सदेह है। प्रतिवर्ष मै रेल्वे का बजट बहुत शौक से पढता हूँ और वहाँ के कर्मचारियों का वेतन और उनकी अवस्था देखता हूँ। हमारे यहाँ से उनकी अवस्था किसी प्रकार भी अच्छी नहीं।

"मैं तो यह समझता हूँ कि रेल्वे की करोडो रुपयो की आय अधिकारियो के अतिरिक्त आय मे, ठेकेदारो के साथ रियायत करने मे और कर्मचारियों द्वारा समय के व्यर्थ खोये जाने मे भस्म हो जाती है।

"अब यात्रियो को सुविधाये दी जा रही है। यह मै जानता हूँ। परन्तु उसमे कारण यह नहीं कि रेल्वे की आय का सदुपयोग हो रहा है, प्रत्युत् प्लैनिंग की मद्द मे से अरबो रुपये रेल को मिल रहे है। प्लैनिंग की मद्द का रुपया रेल की आय का धन नहीं, प्रत्युत् कर-दाताओ के कर का रुपया है।

"मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि राष्ट्रीय उद्योग-धन्धो मे आय न तो कर्मचारियों को मिलती है, न ही सर्व-साधारण के हितो मे प्रयोग होती है। यह जाती है सरकारी अफसरो की जेब मे और अयोग्य, आलसी और

कम काम करने वाले कर्मचारियों के वेतन मे।"

"आपके कहने से तो यह सिद्ध हो गया कि एक व्यक्तिगत उद्योग-पति मजदूर से काम खूब लेता है और वेतन कम देता है। तभी तो आप टैक्स देकर भी मज़े में रहते हैं।"

"इसके लिए तो कानून बनाये जा सकते हैं। वेतन कितना हो, काम कितने घण्टे लिया जाये और अन्य सुविधायें क्या हों। मुझको विश्वास है कि इस बात के होने पर भी प्राइवेट उद्योगपति के कार्य की निष्पत्ति (एफिशियन्सी) सरकार के कार्य से अधिक होगी।

"यह मनुष्य-प्रकृति है कि जब उसको यह समझ आती है कि उसके काम के लाभ-हानि से उस पर भी प्रभाव पड़ेगा तो वह मेहनत और विचार से कार्य करेगा।

"एक वेतनधारी नौकर, कार्य के लाभ-हानि से पृथक् रहने के कारण, कार्य की श्रेष्ठता और सतर्कता में शिथिल हो जायेगा।"

"तो आपका अभिप्राय यह है कि कोआॅपरेटिव (सहकारिता) का ढग ठीक है। उसमे तो काम करने वाले लाभ-हानि में हिस्सेदार होते हैं।"

"हाँ, यदि कोआॅपरेटिव-सोसाइटियों को किसी कार्य में मोनोपली (एकाधिकार) न दी जाये, तब तो परस्पर प्रतिस्पर्धा कर वे अपनी निष्पत्ति (ऐफिशियन्सी) बढाती चली जायेंगी।"

"आप तो केवल मैट्रिक पास हैं।"

"परन्तु मेरी शिक्षा और अनुभव तो मैट्रिक पास करने के पश्चात् आरम्भ हुआ है। मैं अपनी स्कूल की शिक्षा के पश्चात् चालीस वर्ष भर अनेको प्रकार के व्यक्तियों के सम्पर्क में आया हूँ और उन सबसे शिक्षा ग्रहण करता रहा हूँ। जीवन की प्रत्येक घटना से मैं शिक्षा ग्रहण करता रहा हूँ। मेरा सबसे बड़ा गुण मेरा प्रबल-ग्राही (रिसैप्टिव) मन ही है। यही कारण है कि मैं नये-नये विचारों और परिस्थितियों में अपने को खोया हुआ नहीं पाता।"

: ५ :

शिशिर ने आज तक समाजवादियो की ही युक्तियाँ सुनी थीं। अभी तक तो उसका मन उचाट हुआ था उनकी कार्य-विधि को देखकर, वे अधिनायक-ढग (डिक्टेटर-शिप) से कार्य करते थे। उनका उद्देश्य क्रान्ति उत्पन्न करना था। वे भूल रहे थे कि क्रान्ति उपाय था गये गुजरे जमाने का। जहाँ एक व्यक्ति का शासन हो और वह युक्ति का आदर और सहानुभूति से व्यवहार न करे, तब ही क्रान्ति आवश्यक होती है। भारत में तो प्रति पाँच वर्ष पश्चात् शान्तिमय क्रान्ति उत्पन्न करने का अवसर होता है।

जब पार्टी ने केवल गड़बड मचाने के विचार से हडताल कराई और उस हडताल को अन्तिम स्थिति तक पहुँचाया तो वह उनके उपायो मे त्रुटि अनुभव करने लगा था। परन्तु जब एक व्यर्थ का मुकद्दमा कर कारखाने के मालिकों को तग करने की आज्ञा उसको मिली तो वह घबडा उठा और अवसर मिलते ही सब झमेले से बाहर निकल आया।

परन्तु आज उसको एक सरमायेदार के दृष्टिकोण को सुनने का अवसर मिला। यह उसके मस्तिष्क मे हलचल मचाने वाला सिद्ध हुआ। सरदार वढियाम सिह का कहना था कि सरमायादारों में भी ऊँच-नीच हैं। ये ऊँच-नीच कम और अधिक सरमाया के आधार पर नहीं, प्रत्युत सरमाया पैदा करने की योग्यता के आधार पर है।

एक व्यक्ति अपने व्यापार को दस बीस अथवा चार-पाँच सौ रुपये से आरम्भ करता है और अपनी मितव्ययता के कारण, कारखाने की सुव्यवस्था के कारण और कारखाने के कर्मचारियो को प्रसन्न और सन्तुष्ट रखने के कारण अपने उद्योग में उन्नति कर सकता है। दूसरा व्यक्ति अपने बाप-दादाओं की सम्पत्ति लेकर उसको अनियमित ढंग से उद्योग मे लगाता है और शीघ्र ही दिवालिया हो जाता है। दोनो प्रकार के उद्योगो और व्यक्तियों मे अन्तर है।

साथ ही उसने कहा था कि जहाँ तक मालिक का कर्मचारियों के

साथ व्यवहार का सम्बन्ध है, वह तो देश के कानून से व्यवस्थित किया जा सकता है।

एक बात जो मानव-प्रकृति की उसने बताई और जिसका प्रभाव शिशिर के मन पर सबसे अधिक हुआ था, वह मोनोपली अर्थात् एकाधिकार के विषय में थी। जब किसी उद्योग में किसी को भी एकाधिकार मिल जाता है तो वह प्रतिस्पर्धा के अभाव में मनुष्य को आलसी, प्रमादी और प्रवची बना देता है।

इसने उसके समाजवाद के आधारभूत सिद्धान्तों में विश्वास को जड़ से हिला दिया। यद्यपि उसकी आस्था समाजवाद से अभी भी सर्वथा उन्मूलित नहीं हुई थी, तो भी वह अब उसके पक्ष में कहने से पूर्व गम्भीर विचार की आवश्यकता समझने लगा था।

उसने इस वाद विवाद से निकलने के लिए कहा, "मेरी मौसी ज़िला बर्दवान के एक जमींदार की विधवा स्त्री है। जमींदारी तो समाप्त हो गई, परन्तु नकद और कम्पनियों और कारखानों में हिस्सों के अतिरिक्त एक बहुत बड़ा फार्म उनके पास है। मैं उस फार्म का मैनेजर बनने वाला हूँ। केवल उससे ही तीस-चालीस हज़ार की वार्षिक आय होने वाली है।"

बढियाम सिंह ने कुछ विचारकर कहा, "हरभजन। अमृत को बुला लाओ। यदि वह इस युवक के साथ विवाह करना चाहती है तो कर ले। मुझको आपत्ति नहीं होगी।"

हरभजन सिंह गया और अमृत को बुला लाया। अमृत के पिता ने उससे बहुत प्रश्न किये और जब देखा कि अमृत सब प्रकार से सन्तुष्ट है तो विवाह की स्वीकृति दे दी।

विवाह की विधि पर विचार हुआ तो शिशिर ने कह दिया कि उसकी मौसी के मन में यह बात बैठ चुकी है कि विवाह हो चुका है। वह नहीं चाहता था कि यह बैठी बात मिटाई जाये। इससे उसका, सम्बन्धियों में भारी अपमान होने की सम्भावना थी। इस कारण उसने कह दिया,

"विवाह बहुत ही साधारण विधि से और तुरन्त हो जाना चाहिए।"

वढियाम सिंह ने हरभजन सिह को कहा, "ग्रन्थी को बुला लो और 'आनन्द' पढा दिया जाये।"

"परन्तु पिता जी! ग्रन्थी उस व्यक्ति का, जिसने पौल नही ली और जिसने केश नहीं रखे 'आनन्द' नही पढायेगा।"

वढियाम सिंह इससे एक क्षण के लिए घबडाया। फिर कुछ विचार-कर बोला, "छोड़ो इस झंझट को। किसी पण्डित को बुलाकर विवाह करा लो। यूँ तो कचहरी मे जाकर स्पेशल मैरेज ऐक्ट से भी विवाह हो सकता है, परन्तु उसमे कम-से-कम पन्द्रह दिन लग जायेंगे।"

"यह तो सबसे अधिक अच्छा है। यह शीघ्र और मौसी के मतानुसार ही होगा।"

"क्यों अमृत?" पिता ने पूछा।

"यह बात मेरे निर्णय करने की नहीं है। मैंने निर्णय करना होता तो यहाँ लौटकर नहीं आती।"

"तो ठीक है। पण्डित को बुलाकर विवाह हो जाना चाहिए। साक्षी के रूप में दस-बीस आदमियों की आवश्यकता है। सो निकटस्थ सम्बन्धियों को ही बुलाना चाहिए।

यह सब-कुछ अगले दिन प्रातःकाल के लिए निश्चय हो गया।

अगले दिन सौ सवा-सौ मित्रो तथा सम्बन्धियो के सम्मुख विवाह हो गया। कन्यादान सरदार वढियाम सिह ने किया। शिशिर के मित्रो मे नीला, प्रबोध और कुछ यूनियन के सदस्य उपस्थित थे। हरभजन सिंह का मामा विष्णु सहाय तथा कुछ मित्र, जिनको वह टेलीफोन पर बुला सका, वहाँ आ गए थे।

विवाह हो गया और जब यह बात विख्यात हुई कि वढ़ियाम सिंह की लड़की का विवाह हिन्दू विधि से हुआ है तो गुरुद्वारा में उसके बहिष्कार की चर्चा चल पड़ी। एक 'गुर-मता' स्वीकार किये जाने की बात होने लगी। यह प्रस्ताव था कि सरदार साहब को गुरुद्वारा कमेटी से

निकाल दिया जाये।

वढियाम सिंह को जब पता चला तो उसने स्वय ही लिखकर त्याग-पत्र दे दिया।

विवाह के पश्चात् वढियाम सिंह ने शिशिर कुमार को पृथक् में ले जाकर पूछा, "मै विवाह के अवसर पर कुछ भेट-स्वरूप देना चाहता था। परन्तु मैं इस बात की प्रतीक्षा कर रहा था कि तुम इस विषय को चलाओगे। तुमने इस विषय पर बात नहीं की। इस कारण अब जानना चाहता हूँ कि तुम क्या आशा लगाये बैठे थे?"

"जो चाहता था, सो पा गया हूँ। मैं विवाह करने पर किसी प्रकार के दहेज की इच्छा नहीं रखता। मेरा विचार है कि अमृत हमारे घर की अवस्था जानती है। उससे पूछिये कि वह किस वस्तु का अभाव वहाँ देखती थी। सो वह वस्तु उसको दे दीजिये।"

अमृत को बुलाया गया और पिता ने एक खाली चैक पर हस्ताक्षर कर अमृत के हाथ में दे दिया। अमृत ने पूछा, "क्या करूँ इसका?"

"इसको भर लो। जितना तुम उचित समझती हो और जिसके नाम तुम उचित समझती हो।"

अमृत ने चैक वापिस करते हुए कहा, "भापा जी! आपने मेरी उच्छृङ्खलता को क्षमा कर दिया है सो मैंने लाखों पा लिये हैं। इनकी मौसी बहुत ही अच्छी हैं। उन्होंने यह जानकर भी कि मैं एक गरीब रिफ्यूजी की लड़की हूँ, जो दहेज में कुछ भी नहीं ले गई थी, मुझसे न तो घृणा की और न ही मुझको छोटा समझा। मेरे कहने का अर्थ है कि मुझको किसी वस्तु की अब आवश्यकता नहीं।"

"यह मैं तुमको इसलिए नहीं दे रहा कि यह तुम, इनको रिश्वत देकर सुखी रह सको। यह तो तुमको स्नेह-भेंट के रूप में देना चाहता हूँ।"

"तो इसके लिए आप मुझसे क्यों पूछते हैं? जितना मूल्य आप स्नेह का आँकते हैं, दे दीजिये और मेरे से स्नेह-शेष कर दीजिए। वैसे तो मैं इस स्नेह का मूल्य पसन्द नहीं करती। यह यहाँ इस बैंक में जमा

रहने देना चाहती हूँ।"

इस बात ने पिता का मुख बन्द कर दिया। शिशिर ने बात बदलने के लिए कह दिया, "हम आज सायंकाल ही जाना चाहते हैं।"

६

उस दिन उनका जाना नहीं हो सका। विवाह से छुट्टी पाने पर नीला ने अमृत को पकड़ लिया और उसको उसी सायंकाल चाय-पार्टी पर निमन्त्रण दे दिया। नीला के इस निमन्त्रण को वह इन्कार नहीं कर सकी।

वहाँ पर पार्टी के कुछ लोग भी बुलाये हुए थे। वे प्रबोध के परिचय के कारण आये थे। देवेन्द्र भी आमन्त्रित था। उसके पास शिशिर का त्याग-पत्र आ चुका था। वह इसका अभिप्राय नहीं समझा था। चाहिए तो यह था कि उसके बिना पार्टी की आज्ञा के मुकद्दमा वापिस लेने पर, उसके विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही की जाती। अब इस त्यागपत्र से परिस्थिति भिन्न हो गई थी।

जब अनौपचारिक बातचीत हो चुकी तो देवेन्द्र उस मेज पर आ बैठा, जिस पर शिशिर, नीला तथा प्रबोध बैठे थे। देवेन्द्र ने अवसर पा बात चला दी। उसने पूछा, "शिशिर! यह त्यागपत्र कदाचित् अनु-शासन भंग करने के परिणामों से बचने के लिए दिया गया है?"

"नहीं देव जी! मैंने कोई अनुशासन भंग नहीं किया। न ही मैं इससे डरता हूँ। इस पर भी मैंने त्यागपत्र दिया है। इसमें कारण यह है कि मेरा पार्टी के सिद्धान्तों और इसकी कार्यविधि पर बिलकुल विश्वास नहीं रहा।"

"यह बात कबसे हुई है?"

"जब से प्रबोध जी के कारखाने में हड़ताल की बात चली थी।"

"परन्तु हड़ताल तो तुमने सफलतापूर्वक चलाई है।"

"चलाई थी पार्टी की आज्ञा पालन करते हुए। इस पर भी मेरा

विचार है कि वह सफल नहीं रही।"

"क्यों ? चालीस दिन तक हड़ताल चली और एक भी कर्मचारी अनुशासन भग कर काम पर नहीं गया। क्या इसको तुम सफलता नहीं समझते ?"

"यह सफलता तो वैसी ही है, जैसे कोई तैरकर नदी पार करना चाहे और तैरता हुआ मँझधार में डूब मरे। इम अवस्था में यह कहना कि वह बहुत शान से तैरता रहा है, इस हड़ताल की सफलता के तुल्य है।"

"यह तो ठीक उदाहरण नहीं बना। देखो तुमने हड़ताल कराई और अन्त तक हड़ताल नहीं टूटी। यही इसकी सफलता का सूचक है।"

"क्या हड़ताल लक्ष्य था ? वास्तव में तैरने की भाँति हड़ताल भी साधन ही था। एक में नदी पार जाना लक्ष्य था और दूसरे में कर्मचारियों के लिए सुविधाएँ प्राप्त करना।"

"इस समय हड़ताल ही लक्ष्य था। अन्य बातें तो गौण थीं।"

"कर्मचारियों ने तो हड़ताल अपनी आर्थिक अवस्था सुधारने के लिए की थी।"

"वे लोग तो गँवार और कम शिक्षित थे। उनसे यह आशा करनी कि वे हमारे उद्देश्यों को समझ सकेंगे, ठीक नहीं। वे तो हमारे अमर-युद्ध में केवल मोहरों का काम दे रहे थे। हम तो नगर में हलचल पैदा करना चाहते थे। सो तुम्हारे इस कार्य से हो गई। गोली चल गई। एक दर्जन के लगभग कर्मचारी घायल हुए और तीन मर गये। पार्लियामैंट और राज्य-सभा में प्रश्न पूछे गए। काम रोको प्रस्ताव किये गए और जब ये प्रस्ताव अस्वीकार किये गए तो मजदूर-वर्ग में कांग्रेस सरकार के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। यह सब कुछ तुमने सम्पन्न किया। इस प्रकार हड़ताल तो सफल ही कही जा सकती है।"

"तो मज़दूरों के हितों के लिए यह हड़ताल नहीं थी ?"

"कदापि नहीं। हम अपनी पार्टी को सुदृढ बनाना चाहते हैं और उसके लिए जनता में सरकार के विरुद्ध भावना उत्पन्न करने के लिए

इस प्रकार की हलचलें उत्पन्न करनी अत्यावश्यक हैं। कर्मचारियों को तो हानि हुई है, हम भली भाँति जानते हैं; परन्तु लाभ बहुत भारी हुआ है।"

"मैं इस प्रकार की हलचल प्रबोध जी के कारखाने मे उत्पन्न करना न तो पार्टी के विचार से और न ही जनता मे मजदूरो के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करने के लिए उचित समझता हूँ। इससे आपकी पार्टी का प्रभाव बहुत-कुछ बिगड़ा ही है। इससे भी बढकर मै आप को बताना चाहता हूँ कि मैं आपकी पार्टी का काम देश में हलचल मचाने के लिए नहीं करता था। न ही मुझको कांग्रेस पार्टी से अथवा किसी अन्य पार्टी से द्वेष है। मै मजदूरों का हित चाहता हूँ और इसमे इस हड़ताल से हानि हुई है।

"मैं समझता हूँ कि कम्यूनिस्ट पार्टी के अधिकारी वर्ग न केवल अपनी कार्यविधि में भूल कर रहे हैं, प्रत्युत् वे अपनी पार्टी का उद्देश्य भी गलत बनाये हुए हैं।"

देवेन्द्र के माथे पर यह सुनकर त्योरी चढ गई। उसने कहा, "शिशिर! दस वर्ष तक पार्टी का काम करने के पश्चात् यह उद्देश्यों मे त्रुटि समझ आने लगी है। कहीं एक ठेकेदार की लड़की से विवाह इसमे कारण तो नहीं बन गया?"

बात बढती देख प्रबोध ने कहा, "भाई साहब! लड़ना हो तो यहाँ से बाहर जाकर लड़ियेगा। मैंने शिशिर के विवाह के उपलक्ष मे यह पार्टी की है। यहाँ स्टडी-सर्कल नहीं खोला है।"

शिशिर हँस पडा, परन्तु देवेन्द्र दो घूँट चाय पीकर प्रबोध से पूछने लगा, "क्या आप भी समझते है कि आपके कारखाने मे हड़ताल कराकर बहुत खराबी हुई है।"

"मै तो आपकी पार्टी के सिद्धान्तो को मानने वाला था। इस पर भी आपने मुझे ही अपनी हलचल सम्बन्धी कार्यवाई का केन्द्र बनाया, यह मुझको भला प्रतीत नहीं हुआ। वास्तव मे मेरे मे और पार्टी के प्राय.

सदस्यों में एक भारी अन्तर है। पार्टी के सदस्यों ने कारखाना नहीं खोला हुआ। उन्होंने किसी कारोबार के चलाने के लिए बेंक से रुपया उधार नहीं लिया हुआ। इस कारण जो वे सोचते हैं, वह मैं सोच नहीं सकता।"

"यही तो मैं कह रहा हूँ कि हम पूर्ण देश की परिस्थिति का अवलोकन कर रहे थे। तुम्हारा और शिशिर का दृष्टिकोण सीमित था। जब देश में सोशियलिज्म हो जावेगा, तब न तो बेंकों से कर्ज़ा लेने की आवश्यकता रहेगी न ही हड़ताल कराने की।"

"हमारी सरकार यही तो कर रही है। इस कारण अब आपकी पार्टी की आवश्यकता नहीं रही। यदि यही बात आपकी पार्टी ने करनी है तो फिर उसको बन्द कर देना चाहिए।"

"पर जिस प्रकार काग्रेस सरकार काम कर रही है, उससे तो एक शताब्दी लग जायेगी। तब भी ये पूर्ण रूप से कर पायेंगे अथवा नहीं, कहा नहीं जा सकता।"

"तो आपका और काग्रेस सरकार में मतभेद क्रान्ति की गति में ही रह गया है न?"

"गति ही तो सब-कुछ है। हम अपने प्रयत्नों का फल अपने जीवन-काल में देखना चाहते हैं और इस प्रकार तो हमारे पौत्र-परपौत्र भी कदाचित इसको पूर्ण रूप में कार्य करता नहीं देख सकते।"

"तो आप स्टालिन-शाही यहाँ भी चलाना चाहते हैं?"

"केवल यही नहीं, प्रत्युत् उससे पहले लेनिन द्वारा लाई गई क्रान्ति भी यहाँ करना चाहते हैं।"

"पर यह आप नहीं जानते क्या कि लेनिन के कार्य को स्टालिन ने अमान्य किया और स्टालिन के कार्य की निन्दा वर्तमान रूसी राज-नीतिज्ञों ने की है। मैं तो यह समझा हूँ कि वह विधि अथवा विधियाँ सर्वथा गलत थीं। रूस ने दोनों पर परीक्षण किये और दोनों को दोष-पूर्ण पाया है। हम वैसे ही भयानक परीक्षण यहाँ दुहराना नहीं चाहते।"

"तो आप भी गये?" देवेन्द्र ने पूछा।

"मै तो उसी दिन ही आपके सिद्धान्तों को गलत समझ बैठा था, जब आप मेरे कारखाने में हड़ताल करा रहे थे। मै चाहता था कि किसी प्रकार मजदूरों को कम-से-कम हानि हो और हड़ताल बन्द हो जाये, परन्तु इसमें सहायक हुए है तो आप से कहे जाने वाले सरमायादार, मेरे पिता और नीला देवी।"

इस समय नीला देवी जो अमृत से बैठी बाते कर रही थी, वहाँ आ गई और कहने लगी, "यह विवाद अब बन्द होगा या नही? मै समझती हूँ कि अब हमको वर-वधू के लिए बधाई और शुभ कामना करनी चाहिए।"

: ७ :

प्रबोध के घर पार्टी पर बहुत देर हो गई थी। इस कारण उस दिन के जाने का प्रोग्राम रद्द करना पड़ा। इधर सरदार बढ़ियाम सिंह ने प्रबोध को वर-वधू को पार्टी देते देख, स्वयं भी विवाह के उपलक्ष्य मे एक भारी पार्टी करने का विचार बना लिया। इस कारण शिशिर को दो दिन तक और लखनऊ में ठहरना पड़ा।

पहले तो सरदार बढ़ियाम सिंह लड़की के तीन मास तक लापता रहने पर बहुत नाराज था। जब वह लौटकर आई तो वह अपने को अपमानित समझता था। पश्चात् उसने अपने को धोने के लिए अमृत के विवाह पर भारी दहेज देने की घोषणा कर दी। उसके विचारों को पहली ठेस पहुँची, जब करतार सिंह अपने लड़के की इच्छा को पूरा करने के लिए अपने सब सिद्धान्तों को भी छोड़ बैठा था और कहने लगा था कि रक्त पानी से गाढ़ा होता है। इसके उपरान्त जब प्रीतम सिंह धन के लोभ में अपने केश भी मुँडवाने के लिए तैयार मिला, तो वह सँभल गया और अपने बच्चे के हित की बात विचार करने लगा।

जब शिशिर से भेंट हुई और उसको, गँवारू भाषा मे प्रेम-सौन्दर्य इत्यादि शब्दों का प्रयोग छोड़, सीधी सरल कथा कहते सुना तो वह

सर्वथा ही बदल गया। उसको अपने अमृत के प्रति व्यवहार पर पश्चात्ताप लगने लगा। उसने मन मे विवाह के अवसर पर भारी दहेज देने का विचार कर लिया था, इस पर भी वह शिशिर के इस विषय में किसी प्रकार की बात करने की प्रतीक्षा कर रहा था। जब उसने इधर ध्यान ही नहीं दिया, तो उसने उसको पृथक् बुलाकर दहेज के विषय में उसकी राय मागी और उसको यह कहते सुना कि अमृत उसकी मौसी के घर रह आई है, उससे ही पूछ लिया जाये कि वह वहाँ जिस वस्तु की कमी देखती है, वह वस्तु उसको दे दी जावे। इस बात ने तो बढियाम सिंह को गद्गद् कर दिया। उसने समझा कि अमृत का चुनाव गलत नहीं है। इसके पश्चात् जब शिशिर और अमृत को उनके एक मित्र द्वारा चाय-पार्टी दी जाती देखी, तो वह स्वय भी एक पार्टी देने के लिए तैयार हो गया।

पार्टी का प्रबन्ध होने लगा। इसमें दो दिन और लग गये। विवाह के अगले दिन मध्याह्न के समय भोजन करने के पश्चात् शिशिर ने अमृत की बर्दवान रहने की पूर्ण कथा सुना दी। बढियाम सिंह प्रतिमा देवी की सरलता की बातें सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। उस समय उसने मन में यह निश्चय कर लिया कि वह अपनी लड़की को खाली हाथ बर्दवान नहीं भेजेगा।

तीसरे दिन सायकाल ही पार्टी का प्रबन्ध हो सका। एक सहस्र से ऊपर मेहमानों के लिये चाय-पानी का प्रबन्ध था। कोठी की लान में एक बहुत बड़े शमियाने के नीचे एक हजार लोग बैठे चाय पी रहे थे और अमृत के भाग जाने और अपने लिये पति ढूँढ लाने की चर्चा कर रहे थे।

इस पार्टी का एक और परिणाम हुआ। माधुरी हरभजन सिंह से नाराज़ थी। वह विवाह के विषय में किसी अन्तिम निर्णय पर नहीं पहुँच सका था। अन्तिम बात उसके साथ उस दिन हुई थी, जिस दिन अमृत की चिट्ठी कलकत्ता से आई थी। उसके पश्चात् हरभजन सिंह अमृत की प्रतीक्षा में भाग-दौड़ करता रहा था। पहले तो वह अपने मित्रों, सम्बन्धियों और परिचितों को यह बताता फिरता था कि अमृत अब बालिग हो गई

है, इस कारण उसका विवाह अब उसकी रुचि के विरुद्ध नहीं किया जा सकता। तदनन्तर अमृत आई तो उसके विवाह और विवाह के उपलक्ष मे इस चाय-पार्टी का प्रबन्ध करने में उसको माधुरी से मिलने का और इस विषय में बातचीत करने का अवसर नहीं मिला। आज चाय पर माधुरी, प्रबोध, नीला इत्यादि सब मित्र भी आमन्त्रित थे। अवसर देख हरभजन सिंह ने माधुरी से अपने विवाह की चर्चा चला दी। माधुरी ने माथे पर त्योरी चढाकर कहा, "आप मेरी हँसी उड़ाते हैं क्या?"

"यह बात नहीं माधुरी! अमृत के घर से चले जाने के कारण मेरा चित्त कुछ इतना खिन्न हो रहा था कि न तो ठीक ढग से मस्तिष्क ही काम करता था और न ही विचार की हुई बात पर कार्य करने को उत्साह होता था। अमृत का विवाह हो गया है और मन से एक बोझा सा उतर गया प्रतीत हो रहा है। क्या मेरा यह प्रस्ताव अब समयातीत तो नहीं हो गया?"

"समयातीत तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु जो-कुछ भी निश्चय होना हो, आज ही हो सकता है। कल कदाचित् समयातीत हो सकता है।"

हरभजन सिंह मुस्कराया और कहने लगा, "तो मैं अपने पिता जी को कहकर आपके पिता के पास प्रस्ताव करा दूँ?"

"आपकी इच्छा है। मेरी ओर से आज तो इन्कार नहीं होगा।"

प्रभुदयाल तो इस घोषणा की चिरकाल से प्रतीक्षा कर रहा था। जब वढियाम सिह ने उससे कहा, "बैरिस्टर साहब! मुझको मेरे लड़के ने कहा है कि मैं आपसे उसके लिए आपकी लड़की माधुरी को माँगूँ। मैं समझता हूँ कि यह माँग अनुचित तो किसी प्रकार भी नहीं है। हाँ, आप इसकी सराहना करते हैं अथवा नहीं, यही जानता चाहता हूँ। मुझको विश्वास दिलाया गया है कि माधुरी को यह अरुचिकर नही है।"

बैरिस्टर साहब ने माधुरी से पूछा और अपनी अनुमति दे दी। दोनों वृद्धजनों का यह विचार हुआ कि यह अमृत के वर्दवान जाने से पूर्व ही हो जावे तो ठीक है। परिणाम यह हुआ कि शिशिर और अमृत को एक

और दिन यहाँ ठहर जाना पड़ा। अगले दिन हरभजन सिंह और माधुरी का विवाह हो गया।

अमृत के विवाह तथा पार्टी के समय और हरभजन सिंह के विवाह के अवसर पर गुरुद्वारे की सिख संगत नहीं आई। वढियाम सिंह यह सब-कुछ देख रहा था। वह समझ रहा था कि उन्होंने उसका बहिष्कार किया हुआ है। इस पर भी वह जब यह देखता था कि उसके अन्य मित्रो ने उसके निमन्त्रणों को सहर्ष स्वीकार किया है, तो उसका क्रोध सिख-संगत के प्रति शान्त होता जाता था। मित्रो और सम्बन्धियों ने अमृत को बहुत-सी वस्तुएँ भेंट मे दी थीं।

८

नीला देवी से शिशिर और अमृत को दी गई पार्टी के अवसर पर हुई वार्तालाप से देवेन्द्र को भारी क्रोध चढ आया था। उसको खेद इस बात का था कि वह अपना दृष्टिकोण प्रबोध और शिशिर को समझा नहीं सका था। इस कारण उसने अगले ही दिन पार्टी की मीटिंग बुला-कर कई अत्यावश्यक निर्णय करा लिये। उनमें एक था, 'शिशिर और प्रबोध बुर्जुआ वर्ग में सम्मिलित हो गये हैं। अतएव उनको पार्टी से अलग किया जाता है।' दूसरा निर्णय यह था कि 'शिशिर के स्थान प० भृगुदत्त को ऑटोमोबाइल वर्कर्ज़ यूनियन का प्रधान नियुक्त किया जाता है।'

भृगुदत्त प्रबोध के कारखाने में हड़ताल के परिणाम को देख चुका था। अतएव जब उसको पार्टी के निर्णयों का, विशेष रूप में उसके ऑटोमोबा-इल वर्कर्ज़ यूनियन के प्रधान-पद पर नियुक्ति का, पता चला तो वह भारी असमंजस में पड़ गया। वह पार्टी की मीटिंग में किसी कारणवश उपस्थित नहीं था। उसको इन निर्णयों के विषय में सूचना देवेन्द्र के एक सहायक कार्यकर्ता ने दी थी। भृगुदत्त ने अपने से सम्बन्धित निर्णय को स्वीकार करने के स्थान कह दिया, "मैं आज सायंकाल देवेन्द्र जी से मिल लूँगा।"

देवेन्द्र इस उत्तर से क्रोधित हो गया। जब भृगुदत्त मिलने आया तो वह फूट पडा। उसने कहा, "मैं जानता हूँ कि जब किसी नगर मे प्लेग फूट पड़ती है तो वह स्वस्थ-अस्वस्थ सब को लग जाती है। तो यह प्रतीत होता है कि तुमको भी शिशिर वाली छूत लग गई है?"

भृगुदत्त ने कहा, "मै कई दिनो से लखनऊ से बाहर था और नहीं जानता कि शिशिर को क्या छूत लगी थी, जिसके लक्षण मुझमे भी आप देखने लगे हैं।"

"सरमायादारी के प्लेग के लक्षण। शिशिर का विवाह सरदार बढियाम सिह, यहाँ के एक कुख्यात ठेकेदार, की लडकी से हो गया है और एक ठेकेदार की बुर्जुआ मनोवृत्ति उसमें आ गई है। जब तुमने भी पार्टी के निर्णयों को स्वीकार करने के स्थान मेरे से मिलकर बात करनी चाही तो मुझको तुम मे भी उसी मनोवृत्ति के लक्षण दिखाई देने लगे है।"

भृगुदत्त हँस पडा। उसने कहा, "देवेन्द्र जी! मेरे मन मे एक प्रकार की क्रान्ति उत्पन्न हो गई है। यह प्लेग की बीमारी के लक्षण है अथवा किसी और के, मैं जान नहीं सका। इतना विचार रखता हूँ कि निदान के लिए आप उपयुक्त डॉक्टर नहीं है।

"मै जब कम्युनिस्ट पार्टी मे सम्मिलित हुआ था, तब यह समझता था कि पार्टी की डिक्टेटरशिप में देश का कार्य चल सकेगा। मैं अब इस धारणा के भ्रममूलक होने को समझ गया हूँ। कम्युनिस्ट पार्टी मे पार्टी की डिक्टेटरशिप नहीं प्रत्युत् एक अधिकारी की डिक्टेटरशिप है। मै देखता हूँ कि आपने पार्टी के सदस्यो को इस प्रकार सिधाया हुआ है कि कोई भी आपके निर्णयो का न तो विरोध कर सकता है और न ही विरोध करने की सूझ बूझ रखता है। कदाचित् आप भी स्वतन्त्र विचार करने की योग्यता खो चुके है। आप अपने से उच्च अधिकारी की आज्ञा-पालन करना जानते है और वे अपने से उच्च अधिकारी की। इस शृङ्खला मे सर्वश्रेष्ठ अधिकार भारत से बाहर रूस मे है। पहले स्टालिन था और अब ख्रुश्चेव हो

गया है।

"आपकी इस अधिनायक-गण की शृङ्खला मे मे मानव-हित नहीं पाता। बताईये आपने शिशिर को पार्टी में से क्यों निकाला है? क्या पार्टी में मतभेद के लिए स्थान नहीं है?"

"उसने बिना पार्टी की आज्ञा के प्रबोध के कारखाने के खरीददारों पर से मुकद्मा उठा लिया था।"

"यही तो कह रहा हूँ। आपकी पार्टी का प्रबोध के कारखाने में कार्य करने वालों से क्या सम्बन्ध था? उनमें से सब कर्मचारी तो पार्टी के सदस्य भी नहीं थे। शिशिर ने उन कर्मचारियों के हित में मुकद्मा उठाया है।"

"देखो भृगु! उसको यह विचार करने का अधिकार नहीं था कि कर्मचारियों के हित में क्या था और क्या नहीं था।"

"तो किसको था?"

"पार्टी को अर्थात् पार्टी के नेताओं को।"

"मैं इस फिलौसोफी को नहीं मानता। इस विषय में प्रथम अधिकार तो कर्मचारियों का था और मैं जानता हूँ कि वे मुकद्मा उठाने के पक्ष में थे।"

"हम यह अधिकार उन सीमित बुद्धि वाले कर्मचारियों को नहीं दे सकते। इससे सोशियलिस्टिक-स्टेट का निर्माण नहीं हो सकता। समाज-वादी देश में अधिनायक शासन ही सफल हो सकता है। ऐसी डैमो-क्रेसी, जैसी भारत, अमेरिका, इग्लैण्ड इत्यादि देशों में है, वह समाज का समाजवादी ढाँचा निर्माण नहीं कर सकती।"

"तो आपके कहने का अभिप्राय यह है कि समाजवादी ढाँचे का गौरव और लाभ इतना अधिक है कि देश के प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क को ताला लगाना भी क्षम्य है?"

"इसमें सन्देह ही क्या है? समाजवादी ढाँचे से भोजन, वस्त्र और निवास-स्थान प्रत्येक व्यक्ति को मिलेगा और इस विपुल कार्य के लिए

मूर्खों के मस्तिष्क को ताला लगाना पड़े तो कुछ हानि नहीं।"

"मस्तिष्क में ताला लगाने वाले बुद्धिमान माने जायेंगे क्या?"

"मूर्खों के मस्तिष्क में ताला तो पहले से लगा होता है। केवल उसका उपयोग समाजवादी ढाँचे के लिए करने वाले हम हैं।"

भृगुदत्त इन मनोद्‌गारों को सुन स्तब्ध रह गया। उसने कुछ देर तक अपने मन में उठ रहे भावों का विश्लेषण कर कहा, "मैं इसको केवल हिमाकत (अभिमान-युक्त भावना) ही मानता हूँ। मानव की सर्वश्रेष्ठ शक्ति, मनन-शक्ति को कुंठित करने वालों को मैं घोर पातकी मानता हूँ। मैं तो ऐसा कर नहीं सकता। इसी कारण मैं यूनियन का प्रधान बन वर्कर्ज की, अपने हित-अहित चिन्तन की योग्यता को समाप्त करना नहीं चाहता।"

"तो तुम भी पार्टी का आदेश नहीं मानते?"

"पार्टी का अथवा आपका? या यूँ कहूँ कि आपके गुरु-घटाल रूसी बोलशिविक पार्टी के महामन्त्री के आदेश को? नहीं, मैं तो हिन्दुस्तानी हूँ। भारत में प्रजातन्त्रात्मक राज्य स्थापित है। प्रजातन्त्र देश में विचार-स्वातन्त्र्य एक मूल्यवान अधिकार है। मैं इसको आपके पास बेचने के लिए तैयार नहीं।"

देवेन्द्र भृगुदत्त के इन उद्‌गारों को सुन लाल-पीला हो रहा था। उसने अपना निर्णय सुना दिया, "मैं तुमको पार्टी की सदस्यता से बहिष्कृत करता हूँ। तुम अब यहाँ से चले जाओ अन्यथा यहाँ से जीवित बच निकलना कठिन हो जावेगा। जैसे प्लेग के चूहों को मिट्टी का तेल डालकर जला देना ठीक होता है, वैसा ही मैं तुम्हारे विषय में समझने लगा हूँ।"

यद्यपि भृगुदत्त यह सम्भव नहीं समझता था, इस पर भी उसको वहाँ ठहरना उचित प्रतीत नहीं हुआ।

अगले दिन भृगुदत्त के बहिष्कार की सूचना सब सदस्यों को भेज दी गई।

९

आखिर वह दिन आया, जिस दिन अमृत और शिशिर को विदा होना था। उनको लखनऊ स्टेशन पर विदा करने के लिए बीसियों लोग एकत्रित हो गए। इस समय मित्रों और सम्बन्धियों ने वर-वधू को फूलों की मालायें पहनाईं और आशीर्वाद दिया।

गाडी छूटने के पूर्व वढियामसिंह गाड़ी में चढ आया और अमृत को एक हाथी दात की सन्दूकची दे आया। यह देते समय उसने कहा, "अमृत! मेरे सब सम्बन्धियों और मित्रों ने तुमको बहुत-कुछ दिया है। मेरी ओर से केवल यह चीज ही है। इसे रख लो और जब गाडी छूट जायेगी तो देखना।"

इस समय शिशिर अपने मित्रों से, जिसमें उसकी पार्टी के लोग नहीं थे, विदा ले रहा था। जब गाड़ी ने सीटी बजाई तो वह गाडी में चढा और अमृत के साथ खिड़की में से झाँककर, हाथ जोडकर नमस्कार करने लगा।

गाड़ी जब स्टेशन से निकल गई तो अमृत ने हाथी दात की सदूकची दिखाकर कहा, 'यह पिताजी ने अभी-अभी दी है।"

शिशिर ने देखा। बहुत सुन्दर बनी थी। उसका विचार था कि दो-तीन सौ रुपये से कम दाम की नहीं हो सकती। शिशिर ने कहा, "यह तो स्नेह का चिह्न-मात्र है। श्वेत हाथी दात की वस्तु शुभ मानी जाती है।" इतना कहते-कहते उसने सदूकची खोलकर देखनी आरम्भ कर दी। उसमें एक काग़ज़ तह किया हुआ रखा था। शिशिर ने यह समझा कि यह सदूकची की रसीद है। इस कारण दाम जानने के लिए उसने खोलकर पढा। पढते समय उसकी आखें और मुख खुला रह गया। यह इलाहाबाद बैंक की बर्दवान शाखा पर पाँच लाख रुपये का ड्राफ्ट था। उसने ड्राफ्ट अमृत को दिखाया तो अमृत की आँखों में आसू भर आये। शिशिर ने कहा, "यह बहुत अधिक है न?"

"ऐसी बात नहीं। मेरा मन तो यह जान भर आया है कि पिताजी ने

मुझको केवल क्षमा ही नहीं किया, प्रत्युत् अपनी कठोरता का, जो पहले दिखाते रहे हैं, प्रायश्चित् भी किया है। वे मान गये हैं कि मैंने घर से जाकर कुछ अनुचित बात नहीं की और मेरा चुनाव......।"

"बिलकुल ग़लत है। ठीक है न?"

इस पर दोनों हँसने लगे। अमृत की आँखों में आसू ढुलकने लगे थे और वह उनको पोंछने लगी थी।

: १० :

अमृत की अनुपस्थिति मे बर्दवान मे हवा का रुख बदला। जब शिशिर और अमृत बर्दवान स्टेशन पर लखनऊ जाने के लिए आये थे तो विमलानन्द भी उनको विदा करने आया हुआ था। वैसे तो वह अपनी शशि के लिए सन्तोष कर चुका था। इस पर भी उसके मन मे विषाद का घाव अभी विद्यमान था। जब सब लोग, जो विदा करने आये थे, गाडी छूटने की प्रतीक्षा प्लेट-फार्म पर कर रहे थे तो एक व्यक्ति, मोटर ड्राईवर की वर्दी मे, जो लखनऊ जा रहा था, इस भीड़ को देख विमलानन्द से पूछने लगा, "कौन जा रहा है?"

"यहाँ के जमींदार प्रफुल्ल बाबू का लडका और बहू है।"

"यह लडकी तो पजाबिन है। मै इसको जानता हूँ।"

"कहाँ देखा है?" विमलानन्द ने अभी भी हँसी ही समझी थी।

ड्राईवर ने कहा, "ये लखनऊ के एक बहुत बडे ठेकेदार सरदार बर्ट्रियाम सिह की लडकी प्रीतम कौर है। मैं इनके यहाँ नौकरी करता हूँ।"

विमलानन्द के कान खडे हो गये। उसने पूछा, "सत्य कहते हो?"

"हाँ जी! बहुत अच्छी तरह से पहचानता हूँ।"

"जमीन्दार का लड़का लखनऊ से विवाह लाया है। कहता था कि इसके बाप का देहान्त हो चुका है और इसका कोई सम्बन्धी जीवित नहीं।"

"विवाह कर लाया है? बाबू साहब! यह लडकी घर से भाग कर आई है।"

"चुप रहो।" विमलानन्द ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा।

गाड़ी ने सीटी बजा दी और वह ड्राईवर की पोशाक में आदमी भाग कर एक थर्ड-क्लास के डिब्बे में चढ़ गया। विमलानन्द उसके कहने का अर्थ समझता रह गया। गाड़ी छूट गई तो वह सबके साथ घर लौट आया। घर आकर उसने अपनी पत्नी से उस ड्राईवर की बात कही तो पत्नी फड़क उठी। उसने अपने पति से कहा, "लो अब हमारे पौ-बारह हैं। शिशिर ने झूठ बोलकर भगाई हुई लड़की को घर में रखा और धर्म के विरुद्ध उससे सम्बन्ध बना रखा था। चाची को इस बात का पता चला तो वह आग-बबूला हो जायेगी।"

"हाँ, और हमारा काम बन जायेगा। शशि के विवाह की आशा की जा सकती है।"

"तुम कल लखनऊ चले जाओ और वहाँ से पूर्ण समाचार ले आओ। क्या नाम लिया था उस आदमी ने इसके पिता का?"

"बढ़ियाम सिंह। लखनऊ के एक बहुत बड़े ठेकेदार हैं।"

"तो सुगमता से पता चल जायेगा। सब समाचार लेकर शिशिर के लौटने से पहले ही आ जाओ। शेष तुम मुझ पर छोड़ दो। मैं निपट लूँगी।"

विमलानन्द इस रहस्योद्घाटन के लिए लखनऊ गया और स्टेशन से उतरते ही पूछ-गीछ करने लगा। शिशिर के तीन दिन रहकर वापिस आने की बात थी। इस कारण वह उससे एक दिन पहले ही लौट आना चाहता था। बढ़ियाम सिंह की कोठी का पता पा वह वहां आस-पड़ोस के लोगों से पूर्ण समाचार, जो जाना जा सकता था, जानकर बर्दवान लौट आया।

जो-कुछ उसने सुना और जो-कुछ वह स्वयं जानता था, दोनों को मिला और शेष कल्पना से काम लेकर, उसने एक अच्छी-खासी कहानी बना ली। बर्दवान में पहुँच, अपनी पत्नी से राय कर वह प्रतिमा देवी के पास जा पहुँचा। प्रतिमा देवी ने उसको तीन दिन तक नहीं देखा था। इस कारण पूछा, "विमल! कहाँ रहते हो आजकल?"

"चाची ! लखनऊ गया था।"

"क्या काम था वहाँ ?"

"यह तुम्हारे शिशिर ने जो अपना मुख काला किया है और परिवार के मुख पर कालिख पोती है, उसका ठीक-ठीक पता करने गया था।"

प्रतिमा इस बात को सुनकर क्रोध से पागल हो उठी। उसने डाँटकर कहा, "क्या कहते हो विमल। मेरे लड़के और अमृत पर कोई झूठा लाञ्छन लगाया तो याद रखो घर से निकाल दूँगी और दाने-दाने के लिए मोहताज कर दूँगी।"

"चाची ! नहीं। तुम्हारी सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि यह लखनऊ के एक ठेकेदार की आवारा लड़की है। वह शिशिर को उल्लू बनाये हुए है। दोनों का विवाह नहीं हुआ और वह घर से भागकर आई थी।"

"मुझको विश्वास नहीं आता।"

"किस बात का विश्वास नहीं आता।"

"तुम्हारे कहने के एक भी शब्द पर।"

"तो चलो मेरे साथ लखनऊ। मैं सब बात पुछवा दूँगा।"

"चलूँगी, परन्तु पहले उनको आ जाने दो।"

"चाची। यदि मेरी बात सत्य है तो उनको आने ही मत दो। यहाँ आने के पश्चात् घर से निकालोगी तो भारी बदनामी होगी। मैं तो पहले ही कहता था कि बंगाली समुदाय से बाहर की लड़की लेनी ठीक नहीं। पर तुम उसकी मीठी आवाज और उसके नाटक पर इतनी मोहित हुई कि असल बात समझ ही नहीं सकी।"

प्रतिमा देवी को इस समाचार से बहुत दुःख हुआ। वह यह तो समझती थी कि यदि लड़की हीन-चरित्र है तो उसको घर में नहीं रखना चाहिए, परन्तु एक तो उसका भोला मुख स्मरण कर वह विमलानन्द की बात पर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं होती थी। दूसरे वह अभी यह नहीं समझ सकी थी कि शिशिर भी उन सबकी भाँति धोखे में फँस गया है अथवा वह भी इस षड्यन्त्र में सम्मिलित है और उसने एक आवारा

लड़की को घर में लाकर बैठा रखा था। वह विचार करती थी कि यदि शिशिर भी उनकी भांति ठगा गया है तब उसको घर से क्यों निकाले ? किसी दूसरे के दोष के लिए अपने बेटे को दण्ड दे, यह वह समझ नहीं सकी थी। इस पर भी उसको विमलानन्द की बात पर विश्वास नहीं आता था। अतएव उसने उनके आने की प्रतीक्षा करनी ही उचित समझी। उसने कहा, "देखो विमल ! यह बात अभी किसी से नहीं कहना। मैं आज रात-भर विचार करूँगी और यदि आवश्यकता पडी तो लखनऊ जाकर शिशिर को इस दुष्टा के पंजे से छुड़ाऊँगी। यदि तो शिशिर उसको छोड़कर यहाँ आया तो शशि से उसका विवाह कर दूँगी।"

विमलानन्द चाची की बात सुनकर अति प्रसन्नवदन, यह वचन देकर कि वह किसी से इस बात की चर्चा नहीं करेगा, उठ अपने घर चला गया। रात-भर वह और उसकी पत्नी मन के लड्डू बनाते रहे।

अगले दिन वह चाची की इच्छा जानने आया। वह पूजा गृह मे थी। वह बैठक में प्रतीक्षा करता रहा। प्रतिमा देवी पूजा कर बाहर निकलीं और वस्त्र बदलने अपने शयनागार में चली गई। वहाँ नित्य प्रति के कपडे पहन बैठक में आ गई। आते ही उसने कहा, "विमल! मैं लखनऊ नहीं जाऊँगी।"

"चाची ! क्यों ? मुझ पर विश्वास नहीं क्या ?"

"नहीं। मैं अभी ठाकुर जी से पूछ रही थी। उनकी आवाज़ आई है, 'प्रतीक्षा करो।' "

"ठाकुर जी ने कहा है क्या ?"

"हाँ।"

"वे बोलते हैं क्या ?"

"हाँ, मेरे साथ बात किया करते हैं।"

"चाची ! बोरहा गई हो क्या ?"

"नहीं विमल ! तुम इस बात को समझ नहीं सकते। तुम कभी शुद्ध निस्वार्थ भाव से ठाकुर जी के चरणों में बैठे नहीं। इस कारण तुमसे

उन्होंने कभी बात नहीं की।"

"चाची! यह न कभी हुआ है न होगा। पत्थर के ठाकुर भला कैसे बोल सकते हैं?"

"सुनो, मैं बताती हूँ कि उन्होंने क्या बताया है। रात-भर मैं राम-नाम की माला जपती रही थी। मेरी एक ही प्रार्थना थी, 'मुझको मार्ग दिखाओ।'

"आज नित्य से एक घण्टा पहले स्नानादि से निवृत्त हो मन्दिर में जा बैठी थी। अभी पन्द्रह मिनट हुए हैं कि वे साक्षात् प्रकट हुए थे। वे मुझको आशीर्वाद देकर बोले, 'विमल की जाँच अधूरी है। अमृत शुद्ध पवित्र है। शिशिर देवता है। विमल का मार्ग अन्धकारमय है।' "

"यह सब असम्भव है चाची! ये तुम्हारे मन के अपने विचार ही हो सकते हैं। ये विचार उस समय के बने हैं, जब अभी मैं सत्य-विवरण जानकर नहीं आया था। यह ठाकुर जी का कहा नहीं हो सकता। इसकी परीक्षा कर देख लो।"

"वह करूँगी। परन्तु अब लखनऊ जाने की आवश्यकता नहीं रही।"

"तो यहाँ कैसे परीक्षा होगी?"

"यह मार्ग भी ठाकुर जी बतावेंगे। मैंने तो अपने को उनके अधीन कर रखा है।"

"चाची! मैं प्रार्थना करता हूँ कि चलो लखनऊ चलकर अपनी आँखों देख आओ और अपने कानों सुन आओ।"

"नहीं, मैं अभी नहीं जाऊँगी। तुम्हारा मार्ग अन्धकारमय है। विमल! मैं प्रतीक्षा करूँगी। उनको लौटने दो।"

विवश विमल असफल लौट गया। इस पर भी उसने अपना प्रयत्न नहीं छोड़ा। उसने और उसकी पत्नी ने सम्बन्धियों और परिचितों में यह बात फैला दी कि शिशिर की बहू विवाहिता नहीं। वह शिशिर के साथ भागकर आई थी और अब अपने माता-पिता की खुशामद कर उनसे सुलह करने गई है।

इसके साथ उसने अपनी कल्पित बात जोड़ दी, "वह आवारा लड़की थी। माता-पिता उससे नाराज थे। घर से भागी हुई थी और न जाने किस-किसके पास रहने के पश्चात् शिशिर के पल्ले पड़ी है।"

सुनने वाले विमलानन्द तथा उसकी पत्नी की बात सुन अवाक् रह जाते थे। जब विमलानन्द अथवा उनकी स्त्री अपनी बात की पुष्टि के लिए लखनऊ जाना और वहाँ की जाँच-पड़ताल का उल्लेख करते तो सब सिर हिला-हिलाकर बूढ़ी विधवा की बुद्धि के ठीक होने पर सन्देह करने लगते थे।

सम्बन्धी जब प्रतिमा देवी के पास जाते तो विमलानन्द की कथा सुना, उसे तथा उसकी पत्नी को दो चार जली-कटी सुना देते।

प्रतिमा देवी को यह तो पता चल गया कि विमलानन्द ने अमृत और शिशिर की निन्दा आरम्भ कर दी है। इस पर भी वह लखनऊ जाकर वास्तविक बात जानने की इच्छा नहीं रखती थी। यह बात ठीक थी कि पूजा पर बैठे-बैठे उसके मन में यह बात स्फुरित हुई थी कि विमलानाद असत्य भाषण करता है। उसका इस निन्दा करने से स्वार्थ सिद्ध होता है।

अब उसके घूम-घूमकर निन्दा करने पर विश्वास हो गया तो वह समझ गई कि परिवार की मान-रक्षा करने के विचार से नहीं, प्रत्युत् अपने किसी कार्यसिद्धि के लिए ही यह कर रहा है। इस पर वह क्रोध से उतावली हो गई। वह समझती थी कि विमलानन्द को शिशिर के लौटने की प्रतीक्षा करनी चाहिए थी। उसकी बात भी सुन लेनी चाहिए थी। वह शिशिर के शीघ्र लौट आने की प्रतीक्षा कर रही थी। उसके आने पर ही वह विमलानन्द से बात करना चाहती थी।

विमलानन्द की बात धीरे-धीरे बल पकड़ती गई। इधर शिशिर को लौटने में देरी लग गई। इससे तो विमलानन्द को और भी अपने निन्दनीय कार्य के लिए समय मिल गया। कभी-कभी तो वह इस निन्दा की बातें सुन इतनी विक्षुब्ध हो उठती कि विमलानन्द को घर से निकाल

देने का विचार करने लगती। परन्तु ठाकुर जी की पूजा मे विस्फुरित बात का स्मरण कर वह प्रतीक्षा करने पर मन को मना लेती।

जब उसका मन अति कुपित होता तो वह पूजा-गृह मे जाकर ठाकुरजी के चरणो मे सिर रख घण्टों ही बैठी रहती। उसके मन में बार-बार यह प्रार्थना आती, "प्रभु बुद्धिहीन सेविका को मार्ग दिखाओ।"

११

शिशर ने बर्दवान पहुॅचने का समाचार नहीं भेजा था। वह कुछ अधिक हल्ला नहीं करना चाहता था। मार्ग मे वह और अमृत विचार करते रहे थे कि मौसी को कितनी और किस प्रकार सत्य-कथा बतानी चाहिए। अमृत की सम्मति थी कि पूर्ण कथा बिना किसी प्रकार के लुकाव-छिपाव के मौसी को बता देनी चाहिए। शिशिर कहता था कि इससे मौसी को बहुत भारी दुख होगा और सम्भव है कि वह उन दोनो को घर से निकाल दे। वह वैष्णव है। सदाचार और शुचिता मे बहुत विश्वास रखती है। यदि उसको उनके विवाह से पूर्व सहवास का विचार भी आ गया तो आग-बबूला हो उनको भ्रष्ट और पतित मानने लगेगी।

"परन्तु देखिये न," अमृत का कहना था, "झूठ बोलने से जीवन-भर डर लगा रहेगा कि भेद खुला तो मारे गये। यह तो बहुत बड़ी यन्त्रणा होगी। एक बार सब-कुछ खोलकर स्पष्ट रूप में बता देने मे परमात्मा हमारी सहायता करेगा। इस पर भी यदि वे रुष्ट हो गईं तो पॉच लाख रुपया हमारे पास है। कलकत्ता मे चल कोई व्यवसाय कर जीवन-नौका चलायेगे।"

"मै असत्य बोलने के लिए नहीं कहता। मैं तो कुछ छुपाने और कुछ कहने के लिए कहता हूॅ। धीरे-धीरे सब बात कह देने की बात कह रहा हूॅ। ज्यूॅ-ज्यूॅ वे हमारी कथा को सुनकर सहन करती जायें, त्यूॅ-त्यूॅ हम बताते जायें।"

परन्तु अमृत नहीं मानी। उसने कहा, "देखिए, आप ने मेरे पिता

जी से सत्य बात बताई थी तो कैसा जादू का-सा प्रभाव उनके मन पर हुआ था। आप मुझ पर छोड़िये। मैं कह दूँगी। साथ ही यदि उनको हमारे कहने का विश्वास नहीं हुआ तो लखनऊ में चलकर जाँच कर लें।"

"परन्तु वे हमको विवाह से पूर्व एक ही कमरे में सोते देखती रही हैं।"

"इससे क्या होता है? हम निर्दोष हैं। हमको भय नहीं खाना चाहिए। देखिए सत्य एक महान् शक्ति है, जो विकट-से-विकट परिस्थिति में भी सहायता करने की क्षमता रखती है।"

दिन-भर के रेलगाड़ी में वाद विवाद के पश्चात् अमृत की युक्ति ही ठीक समझ आई, परन्तु शिशिर ने कहा "तुम ही इस विषय में बात करना।"

"हाँ, आप निश्चिन्त रहें। मुझको सत्य के बल पर पूर्ण विश्वास है। उससे पापों का प्रायश्चित् होता है अर्थात् उसके परिणामों से छुटकारा मिलता है।"

साय पाँच बजे वे घर पहुँचे। सेवक लोग, जो कोठी के फाटक पर आकर एकत्रित हो गये थे, दोनों का मुख देखते रह गये। वे भारी झगड़ा होने की आशका कर रहे थे। एक बात वे देख रहे थे कि शिशिर और बहू जाते समय एक अटैची-केस और एक बिस्तर लेकर गये थे और आये थे गाड़ी-भर सामान लेकर। सब मिल-मिलाकर सोलह नग थे।"

सेवकों को बितर-बितर मुख देखते हुए खड़ा पा, शिशिर ने कहा, "सामान उतारो, क्या देख रहे हो?"

इस डाट से सतर्क हो, वे घोड़ा गाड़ी से सामान उतारने लगे। "देखो कचेरु! सोलह नग हैं। कोई गुम न होने पाये।"

इतना कह शिशिर ने गाड़ी वाले को भाड़ा देकर अमृत को साथ लिया और भीतर चला गया। सेवक सब चुप कर रहे। उनके भीतर जाते ही वे भारी हल्ला होने की आशका करने लगे थे।

एक ने कहा, "विमल बाबू को पता दे देना चाहिए।"

इस विचार के आते ही एक सेवक उस ओर भागकर गया,

जिधर विमलानन्द रहता था।

शिशिर और अमृत भीतर गये तो उनको यमुना ने बताया, "मौसी पूजा-गृह मे है।"

"इस समय ? क्या बात है ?"

"कुछ तो है बहू ! उनका मन बहुत दुःखी है।"

"क्यों, क्या बात है ? क्या हुआ है ?"

इसका उत्तर दासी ने नहीं दिया। शिशिर अपने कमरे मे कपड़े बदलने चला गया। अमृत पूजा-गृह के बाहर जा खड़ी हुई। प्रतिमा देवी ठाकुर जी के सामने आँखे मूँदे, शीश निवाये बैठी थी।

अमृत को सदेह हो गया कि कुछ हुआ है, जो वह नौकरानी उसको बताना नहीं चाहती थी। इसका अर्थ वह यह समझी कि अवश्य उनके विषय मे ही कोई बात है। अन्यथा नौकरानी को बताने मे सकोच न होता। इससे वह कुछ विचार, वहीं पूजा-गृह के बाहर भूमि पर बैठ गई।

बाहर कुछ हलचल का अनुमान कर प्रतिमा देवी ने समझा कि शिशिर और बहू आ गये हैं। इससे भगवान् से अन्तिम बार निवेदन कर, "प्रभु ! इस अन्धी को मार्ग दिखाओ।" वह सीधी खड़ी हो गई। उसकी पहली ही दृष्टि अमृत पर पड़ी, जो पूजा-गृह के बाहर भूमि पर बैठी थी। अमृत के प्रफुल्लित मुख को देख उसके सशय छिन्न-भिन्न होने लगे, परन्तु केवल मुख देख किसी परिणाम पर न पहुँचने का निश्चय कर, पूजा-गृह से बाहर चली आई।

उसके बाहर आते ही अमृत ने चरण छूए। चरण-रज सिर पर चढ़ाई और हाथ जोड़े हुए कहा, "मा जी ! यमुना ने कहा है कि आप बहुत दुखी है। क्या है ?"

प्रतिमा देवी ने अमृत की आँखो मे देखा और उसको निर्भीकता से अपनी ओर देखते हुए कहा, "बहू ! तुम्हारी बहुत निन्दा सुन रही हूँ। मुझसे यह सब-कुछ सहन नहीं हो सकता। जब मन अत्यन्त आतुर होता

है तो मनुष्य के अन्तिम आश्रय भगवान् के चरणों आ बैठती हूँ।

"यहां मुझको शान्ति मिलती है, परन्तु बाहर सम्बन्धियों, सेवकों और परिचितों की दृष्टि में आग बरसती अनुभव करती हूँ। मैं नहीं जानती कि क्या करूँ।"

"मा जी! कुत्तों के भौंकने से हाथी अपनी मस्त चाल नहीं छोड़ देते। भगवान के भक्त क्या लोक-निन्दा की परवाह करते हैं? मा! मैं सर्वथा निर्दोष हूँ।"

"भगवान् को साक्षी बनाकर कह सकोगी क्या?"

"क्यों नहीं? मैं किसी प्रकार से अपराधी नहीं हूँ।"

"तो आओ। भगवान् के चरणों में बैठ अपनी कथा बताओ कि तुम कौन हो, क्यों यहाँ आई हो और कैसी हो?"

आज पहली बार अमृत मौसी के पूजा गृह में गई। प्रतिमा भगवान् के चरणों में, मूर्ति के सम्मुख खड़ी हो गई। अमृत ने बैठकर सिर मूर्ति के चरणों में टेक दिया और वहां बैठी-बैठी ही कहने लगी।

उसने अपनी कथा उस समय से आरम्भ की, जब नीला से उसका परिचय हुआ था। फिर सुशील से उसकी जानकारी हुई। सुशील ने उससे प्रेम प्रकट किया, जिस कारण वह अपनी बिरादरी के एक युवक से विवाह करने से न कर बैठी। उसके माता पिता ने उसके विवाह में जबरदस्ती करनी चाही और वह सुशील के कहने पर शिशिर के साथ यहाँ आ गई।

अमृत ने अपने मन के भाव और शिशिर के साथ शयनागार में हुई बातें और उनका संयम से रहना इत्यादि पूर्ण कथा बता दी। तदनन्तर उसने लखनऊ में लौटकर जाने और वहाँ अपने माता-पिता से सुलह, वहाँ विवाह और पश्चात् उनका तथा उनके सम्बन्धियों और मित्रों का, भेंट में अनेकों वस्तुओं का देना और लगभग दो सौ सम्बन्धियों और मित्रों का उसको स्टेशन पर विदा करने आना, साथ ही पाँच लाख रुपये के ड्राफ्ट की बात भी बता दी।

अन्त में उसने कहा, "माँ जी ! यह सत्य है कि जब मैं पहली बार यहाँ आई थी, तो उनकी विवाहिता नहीं थी। साथ ही यह भी सत्य है कि हम पति-पत्नी के रूप में नहीं रहते थे। दस रात हम एक ही कमरे में सोये, परन्तु मैं भगवान् के सामने सौगन्धपूर्वक कहती हूँ कि वहाँ हमने एक-दूसरे को कभी छूआ तक नहीं था।

"सबसे पहले उनको वरने का विचार, जब मेरे मन में आया था तो इस विचार के उत्पन्न होने में उनकी स्नेहमयी मौसी का सुहृदयपूर्वक व्यवहार ही कारण था। मैं यह विचार करती थी कि आपकी पतोहू होने से जीवन-भर सुखी रहूँगी।

"धन का लोभ नहीं था। वह तो मेरे माता-पिता के पास बहुत है और इसका प्रमाण वह ड्राफ्ट है, जो इस समय उनके पास है। आपके स्नेहमय व्यवहार से मन पसीज उठा था।

"जब मैंने आपके सुपुत्र से अपने मन की बात बताई तो वह बोले कि बिना सुशील से स्वीकृति लिए वे इस सम्बन्ध के लिए तैयार नहीं होंगे। एक मित्र की अमानत को वे हड़प नहीं सकते। अतएव लखनऊ जाना आवश्यक हो गया। हमारे वहाँ पहुँचने के दिन ही सुशील बाबू का विवाह एक अन्य लड़की से हो रहा था। इस प्रकार मुझको छुट्टी मिल गई।

"इन्होंने मेरे माता-पिता से यही कथा बताई, तो उन्होंने मेरे उनके प्रति विद्रोह को क्षमा कर दिया। आज से पाँच दिन पूर्व हमारा विवाह हुआ है, परन्तु हमारा यह निश्चय था कि जब तक आप हमारी सेज सजाकर हमको नहीं देंगी हम ...।"

यह कहते-कहते अमृत की आँखें डबडबा आईं। उसने अपनी बात समाप्त करते हुए कहा, "मैं भगवान् से यह अनुरोध करती हूँ कि यदि इस वार्तालाप में एक अक्षर भी असत्य हो तो वे मेरे पर वज्रपात कर, मुझको यहीं भस्म कर दें।"

एक क्षण तक ही प्रतिमा देवी ने विचार किया। पश्चात् उसने

विह्वल हो रोती हुई अमृत को उठाकर गले लगा लिया। उसने कहा, "बेटी! अब यह विवाद तुम्हारे और तुम्हारे भगवान् के बीच हो गया है। मैं इससे बाहर हो गई हूँ।

"भगवान् जाने और तुम जानो। यदि तुमने असत्य-भाषण किया है तो वह सर्वान्तर्यामी असत्य भाषण करने वाले से उचित व्यवहार करना जानता है। जब यह मुआमला भगवान् के दरबार में पहुँच गया है तो मैं कौन हूँ, उसमें बात करने वाली।

"परन्तु बहू! मुझको इन इष्ट सम्बन्धियों के सामने मुख दिखाने योग्य बनना है। यह कैसे होगा? ये तो भगवान् की बात मानेंगे नहीं।"

"मैं उनसे निपट लूँगी। इन भूले-भटके स्वार्थी स्वजनों से मैं सब बात बता दूँगी और उनको चुनौती दूँगी कि वे जाकर लखनऊ में मेरे माता-पिता, मेरे परिचित मित्रों से पूछ लें। इस पर भी यदि वे नहीं मानेंगे तो मैं उनको भगवान् के हाथ छोड़, उनकी अवहेलना करूँगी।

"*भगवान् की बात वे नहीं मानते तो न मानें, परन्तु वह तो सर्वशक्ति*-मान् है और सत्य की प्रतिष्ठा के लिए वह इनको सुमति देगा।"

श्री गुरुदत्त जी के तीन ऐतिहासिक उपन्यास

वाम मार्ग; २. बहती रेता; ३. लुढ़कते पत्थर

लेखक का मत है कि उपन्यासकार को अधिकार है कि इतिहास र अपनी विवेचना दे। जहाँ इतिहासकार का अधिकार केवल घटनाओ । उल्लेख करना है, वहाँ उपन्यासकार का कार्य उन घटनाओं का अर्थ ताना भी है। अतएव उसने भारतवर्ष के पूर्व-बौद्ध-कालीन तथा बौद्ध-ालीन युग हुए में सास्कृतिक परिवर्तनो की विवेचना में तीन उपन्यास लखे है।

'वाम मार्ग' उस काल का द्योतक है, जब असुर-संस्कृति और आर्य-ास्कृति ने समझौता कर परस्पर आदान-प्रदान आरम्भ किया था। आर्य स्कृति आस्तिकवाद पर आधारित थी। इसमें मूर्तिपूजा कोई अग हीं था। प्राकृतिक सौंदर्य और प्राकृतिक चमत्कारो पर विस्मय, आश्चर्य और विचार प्रकट करने में आर्प ज्ञान-विज्ञान उच्च कोटि का था। इनके विपरीत असुर सस्कृति सासारिक उन्नति को सर्व-सर्वा मानती थी। ससार में यौन-आकर्षण एक अति प्रबल प्रेरणा है। अतएव ससार को सब-कुछ मानने वाले यौन-प्रेरणा को अपनी सस्कृति का एक आवश्यक अग बना बैठे, तो आश्चर्य करने की बात नहीं। असुरो ने कदाचित् भौतिक उन्नति आर्यों से अधिक की थी और यही कारण है कि देवासुर सग्रामो में प्राय उनकी जीत होती रही थी। परन्तु अन्तिम जीत तो सासारिक वैभव-प्राप्त नास्तिकवाद को नही मिली। यही कारण है कि वह सस्कृति आर्य सस्कृति के सम्मुख मिट गई।

इस पर भी सासारिक वैभव एक ऐसा आकर्षण है, जिसको देवता भी छोड नही सके। सासारिक सुख इतना रसमय है कि ऋषि-महर्षि भी इसके प्रलोभनो को टाल नही सके। अतएव असुर-संस्कृति के सासा-

रिक वैभव का सम्मिश्रण वैदिक सस्कृति में करने का विचार उत्
हुआ और इसके लिए यत्न किया गया ।

लिंग और भग की उपासना असुर-सस्कृति की विशेष बात थी
सासारिक सस्कृति में लिंग और भग को अर्थात् पुरुष और स्त्री
सम्बन्ध को विशेष स्थान था । अतएव जब दोनो सस्कृतियो क
समन्वय आरम्भ हुआ तो लिंग और भग की उपासना आर्य-सस्कृति
घुस गई ।

दूसरी ओर जब चार्वाकीय ब्राह्मणो ने नास्तिको को बडे-बडे
साम्राज्य स्थापित करते देखा और उन्हे पृथ्वी को पद दलित करते पाया
तो वे ईश्वर पर विश्वास खो बैठे और आर्ष ग्रन्थो से ही अनीश्वर वाद
निकाल बैठे । अनीश्वर वाद तो निकला इस कारण कि ईश्वर दिखाई
नही देता था और ससार पल-पल और क्षण-क्षण में दीखता था,
परन्तु परिणाम हुआ चार्वाकीय नाकेश जैसे विद्वानो का उत्पन्न होना
अथवा श्वेताग की-सी मनोवृत्ति का बनना ।

यह है 'वाम मार्ग' । उस समय आर्य सस्कृति दक्षिण पथ
(Rightism) था और लिंगायतवाद था (Leftism) अर्थात् वाम मार्ग ।

वाम-मार्ग वालो ने लिंग और भग की उपासना से आरम्भ होकर
मास-मदिरा इत्यादि भोग करने के लिए भैरव-काली को जन्म दिया
और फिर इसकी प्रतिक्रिया में जैन मत तथा बौद्धमत की उत्पत्ति
हुई ।

जैन और बौद्ध मत की उत्पत्ति लगभग एक ही काल में हुई । ये
दोनो मत वाममार्ग, लिंगायतवाद अर्थात् आर्य सस्कृति और असुर
सस्कृतिके अस्वाभाविक मिश्रण की प्रतिक्रिया में थे । एक अस्वाभाविक
कार्य की प्रतिक्रिया स्वाभाविक नही हुई । घडी के पेंडुलम की भाँति एक
चरम सीमा से दूसरी चरम सीमा पर जाने के तुल्य ये जैन तथा बौद्धमत
थे । जैसे वाम मार्ग मानव के लिए हितकारक नही हुआ, वैसे ही ये जैन
तथा बौद्धमत भी अहितकर ही सिद्ध हुए ।

आर्य संस्कृति ने असुर सस्कृति को पराजित तो किया परन्तु उसकी छूत से स्वय दूषित हो गई। इस दूषित सम्मिश्रण की प्रतिक्रिया बौद्ध तथा जैन सम्प्रदाय हुए और इन्होंने देश में क्या अवस्था उत्पन्न की, यह 'वहती रेता' और 'लुढकते पत्थर' नाम की पुस्तकों में भली प्रकार से वर्णित है।

'बहती रेता' उस काल की कथा है जब बौद्धमत अभी स्त्रियों, अशिक्षितो तथा भावुक व्यक्तियों का मत था। इसके जातक ग्रन्थ अभी लिखे जा रहे थे। इस पर भी यह सघ की सगठित शक्ति का मालिक होने से अपना प्रभाव देश की राजनीति पर करने लगा था।

महात्मा बुद्ध ने सघ का निर्माण तो बुद्धमत के प्रचारकों को सगठित करने के लिए किया था। एक राजपुत्र की प्रवृत्ति रखने के कारण उसने बौद्धमत की प्रचार-सस्था को एक सैनिक सगठन की भाँति सुदृढ बना दिया और बौद्धमत के उपासकों को जहाँ अपने और धर्म की शरणागत होने का आदेश किया, वहाँ सघ की शरण अर्थात् उसके नियन्त्रण में रहने का आदेश भी दिया। इस प्रकार बौद्धमत देश में एक शक्ति बनती चली गई।

शक्ति-सचय करना कोई पाप नही, परन्तु शक्ति अशिक्षितो, धर्मान्ध व्यक्तियों और पक्षपात-युक्त अधिकारियों के हाथ में विनाशकारी ही होती है। यही परिणाम बौद्धमत के सघ के शक्तिशाली होने का हुआ। बौद्धमत वाम-मार्ग की प्रतिक्रिया थी। वाम मार्ग सासारिक भोगों की चरम सीमा थी तो बौद्धमत त्याग की चरम सीमा बन गया। दोनों अशुद्ध थे।

बौद्धमत ने देश में सम्राट् अशोक की नृशसता की प्रतिक्रिया का लाभ उठाया। जब देश में बुद्धिशील लोग अशोक की दुष्टता की निन्दा करने लगे तो बौद्धमत ने उसको आश्रय दिया। अशोक सम्राट् था। उसके अत्याचारों का प्रतिकार उसको सम्राट् पद से च्युत करना था। यदि बौद्ध-सघ ने उसको धर्म का आश्रय दिया था तो उसको सम्राट्

पद से हटाकर सन्यासी बना लेना था परन्तु सघ ने उसको सम्राट् बन रहने दिया और उसको सघ का आश्रय देकर राज्य बल से बौद्ध धः के प्रचार का साधन बना लिया ।

राज्य-कोष से एक सम्प्रदाय को सहायता और दूसरे सम्प्रदायो के अवहेलना अशोक के राज्यकाल की एक विशेष बात बन गई । यह लिख मिलता है कि अशोक ने अपने जीवनकाल में चौरासी हजार बौद्ध-विहार का निर्माण किया । अर्थात् लगभग दो करोड भिक्षुक-भिक्षुणियो वे लिए राज्यकोष से सहायता मिलती थी । अशोक ने धर्म-प्रचार मन्त्री नियुक्त किए और देश के पतन में अशोक की अराजनीतिक करुणा नीति कारण बन गई । यह 'लुढकते पत्थर' पुस्तक की पृष्ठभूमि है । तीनो पुस्तकें उपन्यास हैं और अति रोचक तथा सरल भाषा में लिखी गई हैं ।

इस युग में परिवर्तित-परिस्थिति के विषय में लेखक का अपना दृष्टिकोण है । उसका आधार ऐतिहासिक तथ्य हैं । पुस्तकें पठनीय तथा सग्रहणीय हैं ।

भारती साहित्य सदन
३०/६० कनाट सरकस, नई दिल्ली—१